Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परम आदरणीय

पं० भगवती प्रसाद जी वाजपेई

के चरण कमलों में

सादर समर्पित

--विश्वनाथ मिश्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परम आदरणीय

Page 44

पं० भगवती प्रसाद जी वाजपेई

के चरण कमलों में

सादर समर्पित

--विश्वनाथ मिश्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परम आदरणीय

पं० भगवती प्रसाद जी वाजपेई

के चरण कमलों में

सादर समर्पित

--विश्वनाथ मिश्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भटके राही

Batke Rahi

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भटके राही

Batke Rahi

विश्वनाथ मिश्र

Vishwanath Mishra

SHEIKH GULAM MOHD & SONS
Book Sellers & Publishers
Maisuma, Srinagar-Kashmir.

नवयुग प्रकाशन, दिल्ली

Nawyoog Prakashan, Delhi

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Acc. No 28944
Cost Rs. 6.00
Date 15.1.68

Sri Pratap Singh Library Srinagar

266

H 83
V 84 B

प्रकाशक : नवयुग प्रकाशन,
बँग्लो रोड, दिल्ली ।

मूल्य : ६.०० रुपये ।

मुद्रक : राजकमल प्रिंटिंग प्रेस,
तुर्कमान गेट, दिल्ली ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दो शब्द

आने वाले एक जन्मद्वार से, जाने वाले दूसरे मृत्युद्वार तक की मंजिल का ही दूसरा नाम है जीवन; आने के पूर्व और जाने के पीछे अंधकार, घोर अंधकार; प्रकाश में है आकर्षण, गति, जीवन ! भौतिक आदिभौतिक का अन्तर, विश्लेषण और उसका निरूपण······

इन्हीं गतिविधियों में उलझा मनुष्य, आगे बढ़ता है, पीछे हटता है, ऊपर उठता है और नीचे गिरता है। स्वयं सीमायें बनाता है और स्वयं उन्हें लांघ जाता है। मर्यादा की परिभाषाएं करता है और फिर उन्हें भूल जाता है ! उसके रूप प्रतिपल परिवर्तित होते रहते हैं, और उन रूपों में वह अपनी ही व्याख्या नहीं कर पाता।

युगों के साथ-साथ मनुष्य भी बदलता गया और बदलता जा रहा है पर कुछ शाश्वत सत्य अब तक ज्यों के त्यों हैं। उनमें कोई परिवर्तन नहीं आया। उसके अनुभव, उसके व्यक्तीकरण, उसके निरूपण में वे सत्य आगे-पीछे, उपर-नीचे दायें-बायें छाया की भांति ही वर्तमान रहते हैं।

अपने अनुभव-व्यक्तीकरण और निरूपण से वह अपनी ही व्याख्यायें करता रहता है, अपने को ही समझने का प्रयास करता रहता है, किन्तु वह कहां तक सफल रहता है यह बात भी अंधकार में ही रहती है।

अपने-अपने को व्यक्त करने का अधिकार प्रकृति ने सब को दिया है, जो जिस प्रकार उसका प्रयोग कर पाता है, करता है। भाव मूक ही रहते हैं, भाषा बोलती है और व्यक्तीकरण का वही माध्यम है।

मैंने भी कुछ ऐसा ही प्रयास किया है, जिसकी सफलता-असफलता भी गर्भ में है। ऐसा साहस क्यों हुआ ? और इसकी प्रेरणा कहां से मिली इसका श्रेय श्रद्धेय पण्डित भगवती प्रसाद जी वाजपेई को ही है। उनके प्रोत्साहन से ही मैं अपनी क्षमतानुकूल यह उपन्यास पूरा कर आप के सामने प्रस्तुत कर सकने में सफल हो सका हूं।

अतः मैं अपना यह प्रथम पुष्प उन्हीं के चरणों में सहर्ष समर्पित करता हूं। आशा है वह इसे स्वीकार कर मुझे कृतज्ञ करने की कृपा करेंगे !

—विश्वनाथ मिश्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१

***

'मेरी एक बात मानो तो अभी शादी न करो' कुछ गम्भीर होते हुए राजेश ने कहा। मुस्कराते हुए विनय पूछ बैठा, 'क्यों ?'

'क्यों, यह भी कोई पूछने की बात है, आखिर शादी से लाभ क्या है।'

'अच्छा ! लाभ नहीं, तो हानि क्या होगी' विनय ने पुनः प्रश्न कर दिया।

'अभी बेकारी में तुम्हारा अपना भार ही क्या कम है, फिर दूसरे का भार भी अपने सर उठा लेना कहाँ की समझदारी है।'

'लेकिन मैं शादी कर कब रहा हूं जो भार की चिन्ता करूं।'

'बहुत ठीक' किंचित मुस्कराते हुए राजेश आगे बोला, 'तो फिर इस निमंत्रण-पत्र पर आपका नाम कैसे आया।'

'यह तो जैसा पिताजी ने लिख दिया, छप गया।'

'हूं, तो होना किसी और का चाहिए था, और हो गया आपका, 'यही न !'

'जी हाँ, पहले निमन्त्रण पत्र पर नाम तो आपका ही होना चाहिए था, लेकिन आपका नाम शायद मेरे पिताजी को मालूम नहीं था, इसलिए मेरा ही लिख दिया। अब ऐसा करो नाम मेरा और शादी तुम्हारी !'

राजेश हंस पड़ा, 'बहुत खूब, फिर तो नाम मेरा होता और शादी आपकी।'

'कहीं ऐसा ही न कर बैठना कभी, कि नाम आपका हो, और शादी किसी और की।'

राजेश हंस पड़ा, 'बड़ा अच्छा विचार है, यह जो अपने बनकर गला

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

काटने की यह युक्ति प्रयोग करते हैं; उन्हें काट देने की बड़ी अच्छी तरकीब है।'

बड़ी विचित्र बात है, तुम न शादी खुद करते हो न दूसरे को ही करने देते हो आखिर तुम्हें शादी से इतनी चिढ़ क्यों है ?' विनय ने तकिन गम्भीरता के साथ प्रश्न किया।

'चिढ़ तो बुद्धिहीन लोगों के पास होती है; बुद्धिमान लोग तो कोई काम करने से पहले सौ बार सोचते हैं। बिना सोचे समझे काम करना तो मैं मूर्खता ही कहूंगा, फिर शादी का उद्देश्य क्या है ?'

'अब शादी के उद्देश्य, महत्व और आवश्यकता पर तुम्हीं बोलते जाओ, मैं सुन तो रहा ही हूं' विनय ने व्यंग भरी मुस्कान के साथ कह डाला। राजेश इस व्यंग से भीतर ही भीतर तिलमिला सा उठा और गम्भीरता के साथ बोला, 'तो सुनो', शादी एक ऐसी जंजीर है जो आदमी को जीवन पर्यन्त कसती ही जाती है, उसके सारे उद्देश्य, प्रगति, और स्वच्छन्दता आखों के सामने गुजरते चले जाते हैं, और वह बेबस हो, देखता हुआ तड़प कर रह जाता है।'

मुस्कराते हुए विनय ने कहा, 'वाह! बात तुमने ऐसे कह डाली जैसे स्वयं उस जन्जीर से कसे हुए तड़प रहे हो, लेकिन यह क्यों नहीं सोचते कि आदमी की प्रगति, उद्देश्य और स्वच्छन्दता को उसकी अपनी कमजोरियां ही छीन लेती हैं, शादी नहीं, अपनी कमजोरी को दूसरे के सर पढ़ना तो···

राजेश बीच में ही टोक बैठा, 'अभी तो तुम ऐसी ही बातें कहोगे, आकर्षण में बहुधा लोग अपना सर्वस्व खोकर ही हाथ मलते रह जाते हैं, वही तुम्हारे साथ भी होगा।'

'तुम्हें क्रोध बड़ी जल्दी आता है', विनय ने टोकते हुए आगे कहा, जिसे देखा नहीं, उसके लिए आकर्षण कैसा, यह तो बड़े बुजुर्गों की आज्ञा का पालन करने जा रहा हूं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'लेकिन यह तुम्हें कितनी महंगी पड़ेगी, इसका भी कुछ अनुमान है।'

'मैं ही अकेला कोई नया काम करने जा रहा हूं। पूरे साल का हिसाब लगाकर देखो, तब शादी के सही-सही आंकड़े मिलेंगे, आखिर तुम किस-किस कोसलाह देते फिरोगे, तुम ठहरे हृष्ट-पुष्ट, सुन्दर, सुडौल आकर्षक युवक, तुम्हें किसी चीज की कमी नहीं, मुझे ढूँढ़ने से भी नहीं मिलती; और फिर बाबा की सलाह भी तो' ··

'तुम्हारे पास इस समय दो ही काम हैं, शादी की तैयारी या बाबा की उचित सलाह' टोकते हुए राजेश ने आगे कहा, 'मैं पूछता हूं जो आदमी जीवन में कभी सही नहीं रहा, वह दूसरे को सलाह देने का क्या अधिकार रखता है।' कहते हुए राजेश तनिक आवेश में आ गया।

'यह तो ठीक है लेकिन जो जीवन में कभी गलत नहीं रहा, वह सही और गलत का विश्लेषण करने का अधिकारी कैसे बन सकता है, लेकिन होता ऐसा ही है, जो हमारी दृष्टि में जैसा होता है, हम उसे वैसा कहने में संकोच नहीं करते, गलत और सही पर विचार हम दृष्टि से अधिक और बुद्धि से कम कर पाते हैं' संयमित भाषा में विनय ने कहा।

'व्यंग करने में बहुत आगे हो पर मेरी बात तुम्हारी समझ में नहीं आई, और न अब मैं समझाना ही चाहता हूं, बड़े होने के नाते जो उचित समझा कह दिया, फिर भी जो कहा, मन में आये तो एक बार विचार कर लेना।' राजेश ने कुछ नाराज होते हुए कह डाला। विनय ने मुस्कराते हुए विषय बदल कर पूछा, 'अच्छा यह बताओ शादी में आ रहे हो या नहीं।'

'नहीं।'

'कारण।'

'न मैं शादी करने के पक्ष में हूं, और न शादी में शामिल होने के।'

'मतलब आप अपनी शादी में मुझे बुलाना पसन्द नहीं करते।'

राजेश मुस्करा पड़ा, 'अजी साहब मेरी शादी हो और भला आप न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आयें और चाहे कोई हों न हो, आप तो होंगे ही ।'

'इस आदर के लिए धन्यवाद, अच्छा अब चलता हूं, कल मिलूंगा ।'

'अभी समय है, सोच लो अच्छा है ।'

'अब समय नहीं रहा, नियन्त्रण-पत्र छप जाने का मतलब है शादी हो गई ।'

'इसीलिए तो कहता हू, इस विज्ञापन के धोखे से अभी बच जाओ तो ठीक है ।

'अभी बिकना अच्छा है ।' कहते हुए विनय किंचित मुस्करा पड़ा फिर बोला, 'घाट-घाट का पानी पीने से अच्छा है, घर में भर कर रख लूं ।'

एक गहरी निःश्वास के साथ राजेश ने कहा : 'ठीक है, आदमी सदा अपने ही दृष्टिकोण से समाज और संसार को देखता है, मेरी बात का बुरा न मानना, शादी भी जीवन का एक अनिवार्य और महत्वपूर्ण कार्य है, ईश्वर तुम्हें सुखी रखे ।'

'कुछ सन्देह है क्या ?' विनय ने मुस्कराते हुए प्रश्न किया ।

जो भी है, मेरे ही पास रहने दो, शादी के बाद जब मिलोगे तब तक सब कुछ स्पष्ट हो जायेगा ।'

'कुछ अभी कह डालो, कुछ बाद में कह डालना, ताकि मैं भी अपनी स्थिति जहाँ तक हो सके सम्भाल लूं ।'

विनय के दोनों कन्धों पर हाथ टेकते हुए राजेश ने पुनः एक निःश्वास छोड़ते हुए कहा : 'अभी तुम्हारी समझ में कुछ भी न आयेगा, क्योंकि अभी तुम समझते हो कि मैं शादी का विरोधी हूं, मुझे इर्ष्या है, चिढ़ है । लेकिन जीवन में कितना उल्लास है और कितनी निर्ममता तुम कुछ भी नहीं समझोगे, और यदि कुछ समझोगे भी तो इतना अस्पष्ट और इतना धूमिल कि स्पष्टीकरण के पक्ष में एक शब्द भी कहना तुम्हारे लिए मूर्खता की अभिव्यञ्जना होगी ।'

राग विराग के पालने में है, जीवन जन्म के गर्भाधान में और मार्ग

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भविष्य के आवरण में, किन्तु अवसान जन्म के पूर्व या ...... कुछ भी तो स्पष्ट नहीं है। तुम्हें यह भी तो नहीं मालूम कि अगला कदम पीछे पड़ेगा या आगे, हम सब जीवन संग्राम में परिस्थितियों के कुटिल, कठोर निर्मम वारों के आखेट मात्र हैं, और हमारा आखेट है जीवन की सफलता। हम सब ऐसे अबोध शिकारी हैं, जो शिकार करते हैं, या खुद शिकार हो जाते हैं, जैसे लकड़हारा अपनी सबल बाहुओं पर पूर्ण निर्भर कर, आत्मविश्वास के साथ प्रतिबार प्रहार करता है, किन्तु कौनसा प्रहार उसके लिए है, कब कुल्हाड़ी अपने पैर पर मार बैठेगा वह नहीं जानता, जानते हो क्यों? आत्मविश्वास के भ्रम से, नियति के खेल से।

बहुत से ऐसे भी सत्य हैं, कि जब तक उनका अनुभव नहीं होता हम उन पर विश्वास नहीं कर पाते। यदि ईश्वर की महत्ता को उसकी शक्तियों द्वारा हमने न जाना होता, तो कभी हम ईश्वर पर विश्वास करते बोलो?'

विनय चुप था, उसकी मुखाकृति पर बढ़ती हुई उलझनों की सलवटें पड़ने लगीं। राजेश ने धीरे से विनय के कन्धों को पुनः हिलाते हुए कहा, 'मैं जानता हूं, हम स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर पाते, अपनी बुद्धि अपने कर्मों से धोखा खाते हैं, फिर अपने सम्बन्धियों के अपने खून से धोखा खाना तो एक मामूली सी बात है। यहां तो प्रत्येक व्यक्ति अपने आक्षेप को दूसरों के स्नेह सलिल से धो देना चाहता है, और हम उसे अवसर देते हैं, बोलो मैं गलत कह रहा हूं?' विनय फिर भी चुप रहा, राजेश ने कुछ आगे कहना चाहा, लेकिन विनय बीच में ही बोल पड़ा, 'अगर बुरा न मानो तो एक बात कहूं?'

'क्या।'

'अब मुझे जाने दो, काफी देर हो गई, शेष कल कह लेना।'

विनय के कन्धों से हाथ उठाते हुए, ' राजेश ने तनिक व्यंगात्मक मुस्कराहट के साथ कहा, 'जाओ मेरी बात का बुरा न मानना, तुम्हें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नसीहत नहीं दे रहा था, अपना बोझ हल्का कर रहा था।'

'अच्छा तो चलता हूं' उलझे विचारों से विनय ने इतनी बात कह डाली, और चल दिया।

घर पहुंचते-पहुंचते साढ़े ग्यारह बज गए, बाबा बाहर तख्त पर बैठे बीड़ी सुलगा रहे थे। विनय को देखते ही टोक बैठे, 'बड़ी देर कर दी।'

'हाँ, जरा राजेश के साथ देर हो गई' विनय ने नम्रता के साथ उत्तर दिया।

यह तो ठीक है, आजकल तुम ज्यादा रात तक बाहर रहते हो, कल को बहू आ जायेगी तब क्या करोगे?'

विनय बिना उत्तर दिए ऊपर चढ़ गया, लेकिन उसके मस्तिष्क में एक उत्तर आया। 'क्या करूंगा? शादी कर रहा हूं या अपने आपको बन्दी बना रहा हूं।'

तभी पास की फैक्ट्री टन··टन··टन कर आधी रात बीत जाने का संकेत देने लगी!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२
***

क्या यह सच है, विवाह एक बन्धन है, दो आत्माओं का मधुर मिलन नहीं, एक दूसरे के गले में पड़ने वाली जंज़ीर, जिसे हम तोड़ नहीं सकते; क्या इसलिए राजेश विवाह नहीं करना चाहता ? बाबा के शब्दों में भी बेड़ियों के पड़ने की झनक थी। क्या स्वच्छन्दता छिन जायेगी, मेरे जीवन का आकर्षण, माधुर्य समाप्त हो जायेगा ? नहीं, वह गलत सोचता है। उसमें परिवर्तन भी तो आया है, आज से दस वर्ष पूर्व राजेश उत्लसित रहता था और अब कितना उदासीन, अवश्य कोई न कोई भेद वह अपने अंत:करण में छिपाया है। लेकिन उसे कह देना चाहिए मैं कोई पराया हूं; वैसे तो सदा यही कहता है, कि हम दो शरीर एक आत्मा हैं किन्तु क्या यह कोरी मादकता है ? फिर क्या है ? विचार इस परिवर्तन में बांधे नहीं जा सकते किसी के हृदय की थाह नहीं पा सकते; यह तो मनुष्य है जिसमें क्षितिज का गन्तव्य, अंतरिक्ष की मंजिल है, तुम पास जाओ वह दूर रहे, तुम कल्पना करो वह बाहर है।

विनय को नींद आ रही थी, वह करवटें बदलता हुआ विचारों से उलझता ज़ा रहा था। खिड़की से झांकती हुई चांदनी उसके पंलग पर पड़ी चादर की सलवटों से लिपटी जा रही थी, मन्द-मन्द शीतल पवन के झकोरे सारे शरीर में एक सिहरन सी उत्पन्न करते जा रहे थे; गुदगुदे गद्दे पर तकिए को अपने बाहुपाशों में समेटता हुआ वह जोर से दबाने लगा। 'राजेश पागल है, इधर-उधर भटकने से अच्छा है एक लक्ष्य लेकर चलना, विवाह अनिवार्य है, आज की आवश्यकता है, कल जो होना होगा, होगा। एक ज़िन्दगी मिलेगी प्रेम में डूबी हुई,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उल्लास से छलकती हुई और क्या चाहिए ?'

कब उसकी आंख झपक गई वह जान न सका।

प्रातः जब नीचे उतरा तो बाबा जी विचारों में डूबे हुए बैठे मिले। नीचे बिखरे हुए जली बीड़ियों के टुकड़े तथा माचिस की तिलियां गवाही दे रहीं थीं कि वे सोये नहीं थे। विनय पूछ बैठा : 'आप कुछ चिन्तित हैं ?' सुनते ही वे किंचित हंस पड़े, 'हां कुछ विचार कर रहा था, वह भी अपने और तुम्हारे विषय में।'

अपना नाम सुनते ही तख्त पर बैठते हुए विनय पूछ बैठा, 'क्या विचार था ? हर्ज न हो कह डालिए।'

'इन दिनों मैंने तख्त पर पड़े-पड़े जो अनुभव किया, उसने मेरे गत जीवन को नग्न कर दिया, पहले जितने भी कष्ट थे शारीरिक थे, लेकिन ये मानसिक कष्ट असह्य होता जा रहा है' कहते-कहते बाबा की आंखें भारी हो गईं।

विनय ने संवेदना प्रगटाई, 'कैसा मानसिक कष्ट है ? मुझसे कहिए, संभव है मैं आपकी कुछ सहायता कर सकूं।'

'यही तो दुःख है, शारीरिक कष्टों में तो आदमी, आदमी का साथ दे पाता है, किन्तु मानसिक कष्टों में कोई किसी का साथ नहीं दे पाता। वह स्वतः झेलने पड़ते हैं। जीवन में मनुष्य के लिए उपेक्षित होना सब से बड़ा मानसिक कष्ट है, विशेषकर उनके लिए जो इसे महसूस करते हों।'

'लेकिन उपेक्षित होने का कारण भी तो · · · विनय रुक गया।' आदमी कितना भी बुरा क्यों न हो, वास्तव में उसकी उपेक्षा नहीं होनी चाहिए, क्योंकि वह आखिर आदमी ही तो है, एक विचार आया, किन्तु वह व्यक्त न कर सका, बाबा बीच में ही बोल पड़े। 'कारण तो हमारे अपने ही कार्य बन जाते हैं, भटके हुए राही को लोग राह अवश्य बता देते हैं, किन्तु मंजिल तक पहुंचाने कोई साथ नहीं जाता' विनय एक-टक बाबा की ओर देखता रह गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबा ने आगे कहा, 'मैं जानता हूं लकीर पीटने से कुछ लाभ नहीं, लेकिन जब भी कुछ कहना चाहता हूं चुप रह जाना पड़ता है।'

'ऐसा क्यों' ? मैं तो आपको कभी उपेक्षित दष्टि से नहीं देखता' विनय ने, विनम्रतापूर्वक सहानुभूति प्रगट की।

'तुम टाल जाते हो; मैं तुम्हें होनहार समझता हूं, मैं चाहता हूं कि तुम थोड़ा बहुत समय देकर मेरी बातें सुनो। यद्यपि मैंने जो भी आज तक कहा है, तुमने कभी उस पर ध्यान नहीं दिया, इसके दो ही कारण हो सकते हैं या तो मेरे जीवन के विषय में जो कुछ तुमने सुन रखा है इससे मेरे प्रति तिरष्कृत भावना होगी, या मैं अपने को व्यक्त करने में अयोग्य हूं।'

'ऐसी तो कोई बात नहीं है बाबा ! मैं जरा उलझा रहता हूं।'

'उलझन का कारण क्या है ?' बाबा ने प्रश्न किया।

'क्या कारण बतलाऊं क्यों न इन्हें भी उलझन में ही डाल दिया जाय ? विनय ने सोचते हुए कहा, 'मनुष्य के जीवन का उद्देश्य क्या है ?'

'संदिग्ध !' बाबा ने तुरन्त कह दिया।

'फिर उसकी सफलता क्या है ?'

'किसी उद्देश्य की पूर्ति ही सफलता है।'

'यह तो असंगत बात हो गई; मैं नहीं मानता।'

कुछ व्यंगात्मक ढंग से हंस कर बाबा ने कहा, 'मैंने तुम्हारा आशय समझ लिया है। जब जीवन का उद्देश्य ही संदिग्ध है, तो सफलता कैसी ? यही न ! लेकिन मनुष्य संसार में कोई उद्देश्य लेकर आता है, न सफल रहता है। यह हमारा भ्रम है। मनुष्य को आने पर एक लम्बा रास्ता तय कर मृत्यु के द्वार खटखटाने पड़ते हैं। और इस रास्ते को ही हम कहते हैं 'जीवन' सुव्यवस्थित रूप से जिसने यह रास्ता तय किया वह सफल रहा, जो भटक गया वह असफल। लेकिन मृत्यु के द्वार तो दोनों को ही खटखटाने पड़े।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'तो जीवन को सुव्यवस्थित रूप से मृत्यु के द्वार तक ले जाना ही जीवन का उद्देश्य हुआ, फिर मनुष्य में भांति-भांति के वर्गीकरण हैं, वह क्यों ?' विनय ने पुनः प्रश्न कर दिया।

'वर्गीकरण तो मनुष्य के मस्तिष्क की उपज है, बुद्धि की विलक्षणता है, और विषय भी गम्भीर है।' बाबा ने बीड़ी जलाने के लिए तकिये के नीचे से माचिस टटोलना आरम्भ कर दिया !

विनय ने उठते हुए कहा, 'अच्छा आप विचार कीजिए, मैं तब तक अन्य कामों से निबट लूं।'

माचिस जलाते हुए बाबा ने कहा, 'सोचूंगा।'

विनय भीतर की ओर चल दिया।

क्या वास्तव में बाबा इस पर विचार कर सकेंगे। क्या उनका जीवन ऊपर से सागर की तरह खारी और उच्छृंखल तथा भीतर से गहन और अनुभव रत्नों से भरा पड़ा है। लोग कहते हैं उनका जीवन निकृष्ट और घृणित रहा है। क्या यह सत्य है ? जीवन कैसा भी क्यों न रहा हो लेकिन है अनुभवकी खान। जो लोग अपने गत जीवन की घटनाओं पर विचार करते रहते हैं वे भविष्य की उज्ज्वलता की झलक भी देख पाते हैं, यह सत्य है कि भविष्य की उज्ज्वलता उनके लिए अब महत्व नहीं रखती, पर वह भविष्य मेरा तो हो सकता है। क्यों न इनके जीवन का पृष्ठ पलट कर देखा जाय संम्भव है, कुछ हमारे मतलब की बातें हों। यह तो सत्य है सुव्यवस्थित जीवन ही मनुष्य का प्रथम प्राथमिक सिद्धान्त है, शेष में वर्गीकरण, बल्कि वर्गीकरण मनुष्य के व्यक्तिगत प्रधानता के प्रभूत्वपूर्ण स्वार्थ पर आधारित अनुकरण करने वालों के समूह का दूसरा ही नाम होगा ! तब तक कोई बोल पड़ा, 'फिलासफर साहब आ रहे हैं' विनय मुस्करा पड़ा देखा तो भाभी थीं।

'अरे आप कब आईं भाई ?' विस्मय प्रगट करते हुए विनय ने प्रश्न किया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लो यह भी खूब रही । रात-रात भर गायब रहोगे तो ऐसे ही पूछोगे । लाला ! कुछ दिन ठहर कर पूछूँगी कि अब क्या सोचा करते हो' भाभी ने व्यंग हास्य किया ।

'मैं तो; अपने कमरे में था, विश्वास न हो तो बाबा से पूछ लो !'

'थे तो, लेकिन बारह के बाद, बिना अंकुश काम नहीं चलता ।' कहते हुए भाभी ने पुनः मुस्कराते हुए आगे, कहा ऐसा पाठ पढ़ा कर जाऊंगी कि घड़ी में आठ बजे नहीं अन्दर ही दिखाई पड़ोगे । तब पूछूँगी फिलासफी क्या सोचती है !'

'जो न करो सो थोड़ा है, आप लोगों की बात ही कुछ ऐसी है ।' विनय ने व्यंग किया ।

'अभी तो व्यंग करने मैं मज़ा आता है, फिर पांव पकड़ते फिरोगे लाला !' भाभी ने एक तीर और मारा । विनय ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, 'पांव तो पकड़ने ही पड़ते हैं भाभी ! हां तो आशीर्वाद क्या मिलता है ?'

भाभी लाज से गड़ गई, कुछ बोलते न बन पड़ा, चट से विषय बदलते हुए कहने लगी, 'जरा जल्दी करो, स्टेशन जाना है !'

मुस्कराते हुए विनय ने पूछा 'कौन आ रहा है ।'

बड़ी चाची नागपुर से आ रही हैं, अगर समय पर पहुंच कर उन्हें न उतारा तो जानते हो कितनी तेज हैं वह !

बड़ी चाची का नाम सुनते ही, विनय 'अरे बाप रे ! बड़ी चाची ?' कहता हुआ नित्य कर्म से निवृत्त होने में उलझ गया ! भाभी ने धीरे से फुसफुसाया, कहते थे विनय बड़ा भोला है, शादी की इतनी जल्दी क्या थी ?

विनय ने सुनकर उत्तर देते हुए कहा, 'कौन कहता था भाभी ?'

'तुम अपना काम करो जी ! स्टेशन नहीं जाना है' भाभी ने बात टाली, पर विनय से चुप न रहा गया, बोल ही पड़ा, 'पांव पकड़ने ही को तो कहा था, इसमें क्या हुआ ?' भाभी बोल पड़ी, 'अजी फिलासफर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

साहब जानती हूं भोले नहीं हो, आने भर की देर है, मैंने समझ लिया, पांव पकड़ना तुम सीख चुके हो।'

'अभी तो कोई गुरु नहीं मिला' स्नान के लिए लोटे में पानी भरते हुए विनय ने कहा।

'तभी तो बारह बजे तक वापस भी आते हो, जिस दिन गुरु मिल जायेगा सारी रात गायब हो जाओगे।'

मुस्कराते हुए विनय ने कहा, 'आप तो बहुत दूर चली गयीं।'

भाभी ने कहा, 'गाड़ी आने में आधा घण्टा रह गया है और अभी स्टेशन तक जाना है।

'हां, हां, याद आया' कहते हुए विनय ने लोटे का पानी सर पर उँडेलते हुए बड़बड़ाया, 'बड़ी चाची आ रही हैं, बाप रे बाप!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

३
***

'अब आप अपनी भावुकता में बह सकते हैं,' विनय ने मुस्कराते हुए कहा। राजेश ने गम्भीर होते हुए उत्तर दिया, 'हंस देना सरल हो सकता है, किन्तु हंसना नहीं; हंसते सभी हैं, किन्तु वास्तव में हंसते कितने हैं, कभी देखा है तुमने ?

'मैंने तो मजाक की थी तुम बुरा मान गए, मैं करूं भी तो क्या मेरा स्वभाव ही ऐसा है।' विनय ने राजेश को अपना आशय समझाना चाहा किन्तु वह बोला, 'समझाने की आवश्यकता नहीं है, तुम्हारे तो हंसने के दिन हैं अभी, मेरी उलझनें मेरी परेशानियां तुम्हें भावुकता का आवेश मात्र ही जान पड़ेंगी। मानता हूं मैंने गलतियां ही नहीं, पाप भी किए होंगे, परन्तु क्यों ? कोई कार्य जिसे मनुष्य करना चाहता है, उसके लिए अवसर प्रथम स्थान रखता है। चाहे परिस्थितियों द्वारा वह आये या परिस्थितियों को जन्म देकर पाया जाय, या उस अवसर को भाग्य की विलक्षणता प्रदान करे। क्योंकि अवसर व्यक्ति को कार्य कराने में महत्वपूर्ण योग देता है। अवसर से लाभ उठाना सभी नहीं जानते, और जो जानते हैं उन्हें मंजिल आसानी से मिल जाती है, जीवन की सफलता का अवसर एकमात्र अभेद्य तीर है।

तुम सोचते होगे मुझे क्या हो गया है। मैं क्या सोचता रहता हूं मेरे जीवन का वह उल्लास, वह उच्छृंखलता कहां गई। कुछ और भी मित्र हैं जो बहुधा यह प्रश्न कर देते हैं। परन्तु मेरे पास देने को कोई उत्तर नहीं। डरता हूं कहीं मेरे हृदय की धधकती आग उन पर न पड़े, वह मुझे जलाना चाहती है, जलाए, पर दूसरों पर तो आंच न आए। मुझे पूरा विश्वास है कि मेरे हृदय का एक भी शोला यदि बाहर आ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गया तो वह दूसरों को यदि जला न सका तो फफोले तो डाल ही देगा, झुलसा तो देगा ही। मैं यह भी नहीं चाहता कि मेरा बोझ कोई हलका करे, सम्भव है मेरा बोझ तो हल्का न हो और सहायक पर ही कुछ बोझ आ पड़ें और मुझे दोष मिले।'

विनय ध्यान से उसके प्रवाह को सुन रहा था, जितना ही राजेश अपने को व्यक्त करता जाता, हल्का होने के बजाय उतना ही भारी होता जाता। एक दीर्घ नि:श्वास के साथ वह फिर कहने लगा 'दोष, जिस शब्द के स्मरणमात्र से मेरा मस्तिष्क भूचाल की हलकम्पों सा ग्रस्त हो जाता है, मुझे पागल कर देता है। यह भी डरता हूं कि कहीं लोग मुझे पागल न कहें, और फिर इस पर भी विश्वास नहीं होता, आजकल तो लोग पागलों को भी देखकर ढोंगी कह दिया करते हैं; उन्हें अपनी इस क्रूरता पर खेद भी नहीं होता, लेकिन पागल सो पागल!

'अधिकतर लोग दूसरे पर आक्षेप करते समय विचार नहीं करते, वह कभी नहीं सोचते कि उस स्थिति में सम्भवतः उन परिस्थितियों में उन्हें भी करना पड़ सकता है! मुझे भली-भांति याद है कि मैं किसी सिनेचित्र को देखकर रात को साढ़े बारह के लगभग घर लौट रहा था। कार्तिक का महीना था। सर्दी कुछ अधिक पड़ने लगी थी। मेरे साथ एक मित्र भी थे। हम दोनों एकान्त सड़क से आ रहे थे। कुछ दूर चलने पर हमने सड़क पर ही एक गरीब को सर्दी से सिकुड़ा हुआ चुप पड़ा देखा; उसके शरीर पर एक लंगोटी के सिवा कुछ न था। दूर से देखने पर वह शव मालूम पड़ा, मेरे मित्र ने उसे सम्बोधित करते हुए कहा 'मालूम होता है किसी भिखारी ने दम तोड़ दी।'

'लेकिन उस असहाय प्राणी को इन शब्दों से कौनसी दारुण वेदना मिली मैं नहीं कह सकता। किन्तु उसने इन शब्दों को सुनकर धीरे से सर उठाकर 'हाय राम' कह कर अपने जीवित होने का संकेत दिया; तो मेरा हृदय किसी अज्ञात वेदना से तड़प उठा। मैं कुछ न कह सका,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रुमाल लेकर जेब में रखते हुए विनय ने कहा 'कहानी खत्म हो जाती, राजेश ने पुनः किंचित मुस्कान अपनी झेंप मिटाते हुए कहा, 'मेरी आत्मा मुझे धिक्कारने लगी, मैं आत्म ग्लानि से सर झुका चुपचाप घर वापस आ गया लेकिन अब सोचता हूं, मर ही जाता तो अच्छा रहता, आज तो मैं मरे से भी गया बीता हो गया हूं, सोचता हूं, मरना आसान है जीना कठिन, और तब सोचा था जीना आसान है मरना कठिन, तुम बोलो क्या सही है ?'

साधारणतः गम्भीर होते हुए विनय ने उत्तर दिया, दोनों ही कठिन है और आसान भी, यह हमारी क्रियाओं पर निर्भर करता है, मेरे विचार से तो न हम जीने की कला जानते हैं और न मरने का ढंग' फिर किंचित व्यंग भरी मुस्कान के साथ बोला 'लेकिन अब तो यह कहानी किसी से कहते हुए भी तुम्हें शर्म आती होगी !'

आज मेरे मस्तिष्क में कितना संताप है, हृदय में कितनी वेदना है कहां तक तुम्हें बतालऊं; । यह सब मेरे ही किए का फल है, किसी की आत्मा का अभिशाप, आज मुझे पूर्ण विश्वास है कि आत्मा में शक्ति है और तुम्हें भी मानना पड़ेगा विनय, आत्मा में शक्ति ।' राजेश कहते हुए किंचित उत्तेजित हो उठा और विनय कन्धे पर हाथ रख कर दबाया 'मैं इन्कार कब कर सकता हूं ।'

'समझा मैं खीझ उठा हूं; है न, लेकिन तुम बुरा न मानना, मेरी समझ में नहीं आता आखिर क्या करुं ?' कहते हुए राजेश उदास हो गया ।

संघर्ष इसी को कहते हैं यहां जीवन में विपरीत परिस्थितियों की प्रतिक्रियाओं से लड़कर हमें आगे बढ़ना ही पड़ता है । तुम इतना हताश क्यों होते हो ! विनय ने धीरज दिया ।

'क्या करूं मुझे तो कुछ भी नजर नहीं आता ।'

'अच्छा उठो अब घर चलें ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'जल्दी क्या है, थोड़ी सी देर और बैठो न, तुम्हें अभिशापित करने वाली घटना भी सुना दूं।'

विनय ने उठते हुए कहा, 'घर में मेहमानों का आना शुरू हो गया है, देर होना ठीक नहीं है, कल पहुंचते-पहुंचते साढ़े ग्यारह बज गए थे, अब घटना कल सुनाना, यहां बैठे तुम ऐसे ही बहकते रहोगे।'

'ऐसा तो कहोगे ही, तुम क्या सभी कहते हैं', कहते हुए राजेश उठ खड़ा हुआ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

४
***

दूसरे दिन राजेश से भेंट नहीं हो सकी' वह किसी आवश्यक कार्य से बाहर चला गया। विनय जल्दी ही घर वापस आ गया। अतिथियों से घर भर गया था। शादी के दो चार दिन ही शेष रह गए थे। आज उसे जल्दी ही घर वापस आते देख बाबा ने पूछा; मालूम होता है आज राजेश से भेंट नहीं हो सकी!

'हां, आज वह इलाहाबाद चला गया!'

'खैर तो है?'

'यह तो नहीं जान सका, दो चार दिन बाद वापस आयेगा।'

'तो क्या तुम्हारी शादी में राजेश नहीं आ रहा है' तनिक आश्चय से बाबा ने पूछा तुमने निमंत्रण तो दिया ही होगा?

'हां वह शादी में नहीं आयेगा। न वह शादी करने के पक्ष में हैं, और न शादी में शामिल होने के!'

'ऐसा क्यों?'

'उसे बन्धन नहीं स्वच्छन्दता चाहिए।'

'यह तो बहाना है, बात कुछ और हो सकती है!' बाबा ने सन्देह प्रकट किया।

'ऐसा ही क्यों सोचा आपने' किंचित आश्चर्य प्रगट करते हुए विनय ने प्रश्न किया!

'जल्दी न हो तो बैठ जाओ, मैं जरा बीड़ी जला लूं तब जवाब दूं' इतना कहते हुए उन्होंने बीड़ी का बण्डल तकिए के नीचे टटोलना शुरु कर कर दिया और विनय वहीं तख्त पर बैठ गया।

क्या वास्तव में बाबा की विचार-शक्ति इतनी प्रखर है, कि किसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

व्यक्तित्व का अनुमान इतनी शीघ्रता से लगा लें। या अटकल बाज़ी है, आज कुछ बातें हो ही जांय, स्पष्ट हो जाय आखिर यह हैं कितने गहरे में ! ' विनय ने सोचा किन्तु कुछ कहा नहीं। बाबा अब तक बीड़ी जला चुके थे, धुआं छोड़ते हुए बोले,' तुम शायद सोच रहे होगे कि मैंने किस विचार से यह अनुमान लगा लिया !'

सोचा ही नहीं, आश्चर्य भी हुआ।' विनय ने उत्तर दिया।

'तो पहले यह बताओ उसका चरित्र कैसा है।'

'यह आवश्यक तो नहीं कि स्वतंत्र रहने की भावना चरित्र पर आधारित हो।' विनय ने प्रतिवाद किया, किन्तु बाबा ने अपनी बात पर जोर देते हुए कहा, 'क्या तुम समय रोक सकते हो'

'नहीं यह तो असंम्भव है।'

'ठीक वैसे ही सुचरित्र सामाजिक व्यक्ति के लिए समय आने पर अविवाहित या स्वच्छन्द रहने के दो ही कारण हो सकते हैं या तो जीवन का कोई वहुत बड़ा उद्देश्य या कोई अनैतिक सम्बन्ध।'

'सम्भव है कोई तीसरा कारण हो ' विनय ने पुनः प्रतिवाद किया।

'वह क्या ?'

'यही व्यक्तिगत उलझनें, परेशानियां, या अन्य लोगों के वैवाहिक सम्वन्धों की कटुता। विनय ने अपना मन्तव्य प्रगट किया।

'तो अविवाहित होना, एक उलझन या परेशानी नहीं है क्या ? यदि समय में हेर फेर नहीं किया जा सकता, तो यह भी समय के लिए अनिवार्य है, रही बात अन्य लोगों के वैवाहिक सम्वन्धों की कटुता, यह वात भी महत्वहीन है, जो दिखलाई पड़ता है वह न दिखलाई पड़ने वाली बात से संगत करे, यह तो सम्भव नहीं है, हां उत्तरदायित्वहीन व्यक्ति अवश्य ऐसी बात सोच सकता है। और मेरे विचार से बन्धन का ही दूसरा रूप है उत्तरदायित्व; और स्वच्छन्दता यदि उद्देश्यहीन लक्ष्य से सम्बन्धित है, तो दुश्चरित्रता का ही दूसरा रुप होगा, रही उलझनें, वह तो होती ही हैं, क्योंकि संघर्ष ही जीवन है जिससे मनुष्य पग-पग

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर उलझता ही रहता है।'

विनय दो क्षण चुप रह कर बोला 'मानव जीवन पर आपका अध्ययन गहन है।'

बाबा तनिक हंस कर बोले, 'अध्ययन तुम लोगों के पास है, मैंने तो जो भी अनुभव किया वही कहा है, जो मेरे लिए बड़ा ही मूल्यवान निकला।

'मेरा आशय अनुभव से ही था, जिसे मैं अभ्यसिक अध्ययन ही मानता हूं विनय ने अपना विचार स्पष्ट किया।

यह तो ठीक है विनय, लेकिन दो ही प्रकार के मनुष्य जीवन में भटक जाते हैं, अध्ययनहीन और अनुभव की लालसा रखने वाले। क्योंकि अध्ययनहीन लोगों को मनुष्य के बिखरे स्वरुपों का कोई ज्ञान नहीं हो पाता, और वे माननीय क्रियाओं के उतार-चढ़ाव की भूल भुलैया में खो जाते हैं। अनुभव ज्ञान की लालसा रखने वाले लोग असन्तोषी होते हैं, वह बहुधा इतनी गहराई में उतर जाते हैं कि ऊपर आना असम्भव हो जाता है।'

'लेकिन ऐसा होता क्यों है, अध्ययनशील व्यक्ति भी तो अनुभव की ओर दौड़ते हैं।'

आकर्षण के प्रति मनुष्य का झुकाव स्वाभाविक है, मेरे विचार से जिनका अध्ययन छिछला होता है, या मस्तिष्क कमजोर होता है वे ही अनुभव की ओर दौड़ते हैं।'

'यह बात तो उलझी हुई है, क्या आप स्पष्ट कर सकते हैं।' विनय ने जिज्ञासा प्रगट करते हुए प्रश्न किया!

इसी समय छोटी बहन ने आकर भाभी का संदेश दिया कि बुला रही हैं।

बाबा ने कहा, 'जाओ भीतर से निपट लो फिर स्पष्ट कर दूंगा, इसमें तो काफी समय लग जायेगा।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय ने उठते हुए कहा, 'अच्छी बात है।' और वह भीतर की ओर चल दिया।

इसमें तो सन्देह नहीं कि अध्ययनहीन लोग दूषित वातावरण के कुचक्रों में फंसकर सही रास्तों से भटक जाते हैं, और अनुभव की लालसा भी बुरी है क्यों ? असन्तोष उन्हें ऐसे गर्त में ले जाकर छोड़ देता होगा जहां से उबरना असम्भव हो जाता होगा।

तभी भाभी ने टोकते हुए कहा, 'अजी फिलासफर साहब, जरा इधर आइए।'

विनय ने देखा भाभी कमरे के द्वार पर खड़े उसे अपनी ओर आने का संकेत दे रहीं हैं। वह उधर ही मुड़ गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

५
***

विवाह के दिन तक विनय सोत्साह सब कार्य करता रहा । ज्यों-ज्यों लग्न घड़ी पास आती जा रही थी, उसका उत्साह फीका पड़ता जा रहा था । लाख प्रयत्न करने पर भी उसकी मुखाकृति पर मुस्कान की रेखायें न उभरने पातीं । इष्ट मित्रों के छेड़ने पर भी वह चुप रह जाता । उसकी अन्तरात्मा में एक ऐसा अनुभव होता, मानों उसे कोई जकड़ कर पकड़ लेने का प्रयास कर रहा है, उसे बांधा जा रहा है किसी ऐसे बन्धन सूत्र से जो अदृश्य होते हुए भी अपनी यातना से प्रभावित करता जा रहा हो ।

क्या राजेश ठीक कहता था, बाद को पछताना पड़ेगा, नहीं ! तो बाबा का कहना ठीक होना चाहिए, नहीं ! वह तो जीवन की राह पर भटके हुए राही हैं, फिर भी उनका अनुभव गहन है, चरित्र की रक्षा के लिए, नैतिकता के विकास के लिए, विवाह पवित्र बन्धन है । लेकिन यह भी तो सत्य है, जो अपना भार वहन नहीं कर सकते उन्हें दूसरों का भार अपने ऊपर उठा लेने की धृष्ठता भी नहीं करनी चाहिए ।

ऐसे संकल्प-विकल्पों के बीच फंस कर मनुष्य कब गलती कर बैठता है, वह नहीं जान पाता ।

बारात चल दी । लोग हंसी मजाक के चुटकुलों में रस लेने लगे । विनय को ऐसा अनुभव होने लगा, मानों सब बातें उसी को लक्ष्य कर हो रही हों, उसे उदास और खिन्न देखते हुए किसी ने छींटा कसा ।

'आलमपनाह की सेहत ठीक नहीं, मालूम देती ।'

दूसरा बोल पड़ा, 'यह बात नहीं, अभी तक तारीखें गिनी जाती रही होंगी, अब घण्टों का हिसाब रखना पड़ रहा है, कहीं भूल से दो-चार घण्टे घट-बढ़ न जाय ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तीसरा बोला, 'गुस्ताखी माफ हो, आलमपनाह के हुजूर में ऐसी बातें करने की जुर्रत नहीं करनी चाहिए।'

और सब कुछ कह कहों में डूब गया। तभी किसी अधेड़ ने कहा : 'आपस में ही उलझे रहोगे, विनय को भी इस हंसी मजाक का कुछ रसास्वादन देते रहो तो ठीक है।' यह सज्जन विनय के बड़े भ्राता के साले श्री सुजान जी थे। विनय के एक मित्र ने उत्तर देते हुए कहा, 'अरे इनसे कौन बात करेगा, यह ठहरे फिलासफर साहब, अभी पूछ बैठे सिगरेट से धुंआ क्यों निकलता है? फिर ऊपर ही क्यों जाता है? फिर धीरे-धीरे गायब क्यों हो जाता है? इत्यादि इत्यादि' सब लोग ठहाका मार कर हंस पड़े, विनय ने गम्भीरता से अपनी उदासी की रेखाओं को मुस्कान की रेखाओं से खींचतान कराते हुए उत्तर दिया, 'धुंए से बात क्यों शुरू की धुंए का कारण कहां छोड़ दिया है।'

सुजान जी तपाक से बोले, 'वह तो आपके पास, हमें जो दिखलाई पड़ा वह कह डाला।'

'और आपने उसका पता भी दे दिया, इसके लिए शुक्रिया!' दूसरे मित्र ने कहा।

सब हंस पड़े, विनय की मुखाकृति पर छिटकती हुई मुस्कान की रेखायें, फैल कर सिमटने लगीं।

समय और बीत गया। विनय की उलझन बढ़ती जा रही थी। विचारों को वह जितना सुलझाने की कोशिश करता और उलझता जाता।

'क्या सच, वह पराया होने जा रहा है। पराई तो स्त्री होती है, पुरुष भी तो अपना नहीं रह जाता, किसी के भार से दब जाता है, किसी सीमा में वन्दी हो जाता है, किसी कर्तव्य, उत्तरदायित्व में बंध जाता है। लेकिन यह सब क्यों? क्या विवाह का दूसरा नाम बन्धन ही है। बन्धन नहीं तो और क्या? अभी तुम मुक्त हो प्रत्येक बन्धन से, कर्तव्य से, उत्तरदायित्व से, कर्तव्य से पुरुष कभी मुक्त नहीं हो सकता। मनुष्यता का भी कर्तव्य है, उत्तरदायित्व है, लेकिन .... उसे अनु-

Library

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भव होने लगा कि मछली को गहन असीम सागर की स्वच्छन्दता से पकड़कर शीशे के डिब्बे में बन्द कर, व्यापारी उसे बेचकर किसी के घर की शोभा का एक साधन उपकरण, खिलौना बनाए दे रहा है। उसे उस पारदर्शी डिब्बे में ऊपर से नीचे तड़पते हुए भागना पड़ेगा, तैरना पड़ेगा। उसे समय से भोजन मिलेगा, स्वच्छ जल मिलेगा, जिन्दा रखने के लिए, लोग देखकर उसकी क्रियाओं को सुन्दर कहेंगे, उसकी तड़प की ओर किसी का ध्यान नहीं जायेगा। सब अपने मनोरंजन पर खेल पर दर्शक बन आनन्द उठायेंगे। लेकिन क्यों? अशक्त को, लाचार को लोग इसी प्रकार जीवित रखना चाहते हैं। उन्हें उसकी तड़प में, वेदना में आनन्द मिलता है, मनोरंजन होता है न! लेकिन अब क्या हो सकता है।'

किसी अमूक वेदना से, उलझन से उसके नेत्र रह-रहकर आर्द्र होने लगे। इष्ट मित्रों में एक खलबली मच गई जिन्होंने अब तक इस विषय को मनोरंजक बना रखा था। कारण क्या है? रह-रहकर यह प्रश्न सब ओर से उठता, विनय का अन्तर भी इसी छानबीन में था कि इस आर्द्रता का कारण क्या है, लेकिन उत्तर एक था। 'मौनता' दूसरों को कोई उत्तर न दे सकने के कारण उसे मौन रहना पड़ता, और स्वयं कारण न समझ पाने के कारण उसे मौन ही रहना पड़ता, लेकिन यह मौनता गम्भीरता की ओर समय के साथ-साथ बढ़ती जा रही थी। अन्त में उसके पिता ने आकर प्रश्न किया, 'तुम्हारी परेशानी का कारण क्या है?'

'मैं नहीं जानता!'

'आज तो तुम्हारे लिए हंसी खुशी का दिन है, फिर उदासी क्यों? कोई सन्देह हो तो कहो!'

'ऐसे समय प्रसन्न तो सभी रहते हैं, उदास होने का कोई कारण नहीं?' इतना कहते हुए उसने मुस्कराने का प्रयास तो किया, किन्तु निष्फल रहा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पिता जी ने सन्देह की एक रेखा को मिटाने का प्रयास करते हुए कहा, 'लड़की तुम्हारे मामा की देखी हुई है, ठीक है।'

विनय चुप था। वह बोले, 'तुम्हें कुछ कहना हो, किसी बात का सन्देह हो तो कह दो।'

'मैं शादी नहीं करना चाहता?' विनय किस उलझन में कह गया वह नहीं जान सका। पिता जी एकदम गर्म लोहे से लाल हो गए, क्रोध से बोले, 'फिर क्या हम लोगों को तमाशा बनने के लिए यहां लाये हो।'

'तमाशा तो मैं बन गया हूं, देख रहा हूं एक कठपुतली की तरह सब क्रियायें हो रही हैं।' किस भावावेश में विनय के हृदय से यह शब्द क्यों और कैसे निकल गए, वह क्यों नहीं रोक पाया, जीवन में कदाचित पहली बार ही उसने पिता के सामने इतना स्पष्ट व्यक्तिकरण किया था। यह बात पिता के हृदय में कांटे-सी चुभ कर रह गई, बोले : मुझसे गलती हो गई, तुम चाहते हो तो हम सब वापस जाने के लिए तैयार हैं, और दुबारा जब कभी तुम अपनी शादी का निमन्त्रण मुझे भेज दोगे मैं चला आऊंगा ताकि सामाजिक दृष्टिकोण से तुम्हें मेरी अनुपस्थिति न खले, अभी जो भी होगा वह मेरे सर।'

विनय चुप था। उनके एक मित्र ने विवाद का निबटारा करते हुए कहा, 'तुम भी किस चक्कर में आ गए, बच्चे हैं, जरा चाईं-माईं पड़ जाने दो, सब ठीक हो जायेगा।'

वह वहां से चले गए। विनय चुप रहा, हृदय की उलझन से विवश। समय बीत गया। अग्निसाक्षी और भावरों के लिए एक कठपुतले-सा पहुंचा दिया गया। सब अपने-अपने कामों में व्यस्त थे। मंगल कार्य की शहनाइयों की सुमधुर ध्वनि वायु मंडल में लहरा रही थी, पण्डित जी वेद-मन्त्रों का अस्पष्ट उच्चारण तीव्रगति से करते जा रहे थे। कन्या को लाने का आदेश मिला। नाउन एक सजी-सजाई, कपड़ों और गहनों के भार से लदी, लाज से सिमटती हुई, जीवदार गुड़िया को लेकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भीतर से लग्न मण्डप की ओर चल दी। विनय की दृष्टि उस पर पड़ी, वह चलने में जरा बल खा गई, विनय को लगा वह लंगड़ी है। उसने दुबारा दृष्टि डाली और इस बात पर ध्यान दिया, वही बलखाना, लंगड़ाने लगी। तीसरी बार तक वह लग्न मण्डप में आ गई, बिल्कुल पटे के पास, उसे बिठाते हुए नाउन ने विनय के उत्तरीय का छोर लेकर गठबन्धन करना चाहा, किन्तु विनय ने अपना उत्तरीय खींचते हुए कहा, 'ठहरो, बाहर से जरा मामा जी को बुलाकर लाओ!' और उठकर पटे पर खड़ा हो गया।

विनय की खिन्नता और उदासीनता ने पहले से ही सारे वातावरण को प्रभावित कर रखा था, इस प्रकार अचानक बोल पड़ने से सभी लोग स्तब्ध रह गए, पण्डित जी की तीव्रगामी वाणी का मुंह खुला ही रह गया, मंगल गीत गाने वाली स्त्रियों में सन्नाटा छा गया, किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। फिर भी अपने को सम्भालते हुए पण्डित जी बोले: 'श्रीमानजी मुहूर्त का समय निकल जायेगा।'

'निकल जाने दीजिए,' आवेश को दबाते हुए विनय ने कहा।

लोगों में कानाफूसी आरम्भ हो गई। 'क्या हो गया, क्या बात है?

अचानक ऐसा क्यों? तब तक मामा जी भीतर आकर बोले क्या बात है विनय?'

'मुझे आपसे कुछ पूछना है।'

'अच्छा तो बाहर आ जाओ।'

लेकिन पण्डित जी विरोध करते हुए बोल पड़े।' इस घड़ी पटे से जाना शुभ नहीं है।'

पण्डित जी का विरोधामत्क आदेश विनय को खल गया उसने पांव से पटे को वेदी से पीछे ठेलते हुए कहा, 'आप मुहूर्त पूरा होने तक यहीं बैठे रहिए, हिसाब पूरा मिल जायेगा। मैं जाता हूं!' और वह बाहर आ गया। अब तक [विनय के पिता जी भी वहां आ गए थे,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनके साथ एक हितैषी मित्र भी आ खड़े हुए।

मामा ने पूछा, क्या हो गया ?'

'मुझे सन्देह है, लड़की आपने कब देखी थी।' विनय ने प्रश्न किया।

मामा जी विनय की भाषा और वाणी के आवेश तथा संदिग्धता से हकबकाये से बोले, 'भई, मैंने तो जब देखा था, वह आठ साल की रही होगी।'

विनय के पिता जी के मित्र बोल पड़े, 'शुक्र है खुदा का, अभी फिर याद कर लीजिए, कहीं उसके भी आठ साल पहले न देखी हो !'

मामाजी का बदन परेशानी से पसीना-पसीना हो रहा था। इस कटाक्ष पर कुछ तुनककर बोले, 'यह भी कोई मज़ाक का वक्त है, अब आप ही क्यों न देख लीजिए।'

इस पर विनय के पिता जी ने क्रोधित होत हुए कहा, 'यह बात पहले आपने क्यों नहीं स्पष्ट की थी, आप तो बड़े धूर्त हैं, विवाह को खेल समझ लिया।'

वह बोले, 'लेकिन बात क्या हो गई यह भी तो मालूम हो।'

विनय ने धीरे से कहा : 'मुझे तो लंगड़ी मालूम देती है, और भी कुछ हो तो नहीं जानता।'

यह सुनते ही मामा जी के पांव कांपने लगे, चक्कर सा आने लगा, वह बार-बार माथे का पसीना पोंछने लगे। विनय के पिता ने क्रोधावेश में कहा, 'विनय तुम बाहर चलो, जब तक उसका निर्णय नहीं हो जाता कुछ भी नहीं होगा।'

घर में खलबली मच गई। सभी लोग परेशान थे, लेकिन अभी तक किसी को कारण का ज्ञान न था, मामा जी ने लड़की के पिता को एकान्त में बुलाकर पूछा तो वह हैरान होकर बोली, 'ऐसी तो कोई बात नहीं है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'लेकिन इस समय तो बिना इसका निर्णय किए कार्यक्रम आगे नहीं बढ़ सकता।'

'आप निःसंकोच वर को भीतर बुला लीजिए, मैं सबके सामने चला कर दिखाए देता हूं बस।'

'हां यह ठीक है' कहते हुए मामाजी विनय को लेने बाहर चले गए।

लड़की चलाई गई, फिर वही बल खाना, लंगड़ाना, विनय ने देखते ही तुरन्त टोका, 'यह क्या है।'

'कुछ भी नहीं, धोती लम्बी होने के कारण पैर में उलझ जाती है' इतना कहते हुए लड़की के पिता ने नाउन को आदेश दिया, 'जरा धोती ऊपर समेट कर चलाओ।'

लड़की निर्दोष थी। सबों की समझ में कारण आ गया, हंसी की खुस-खुसी छूट पड़ी। विनय को अपनी भूल भी समझ में आ गई। लेकिन इस कृत्य के लिए वह संकोच से गड़ा जा रहा था। तब तक पण्डित जी बोल पड़े, 'आइए, आइए, अब तो आइए श्रीमान जी मुहूर्त की शुभ घड़ी बीती जा रही है।' वह चुपचाप कठपुतले की तरह पण्डित जी के आदेशों पर क्रियाएं करने लगा। और विवाह सम्पन्न हो गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

६

***

आकर्षण एक कटु सत्य है और मनुष्य का बहुत बड़ा शत्रु भी, यह न होता तो कदाचित संसार में मनुष्य के लिए कुछ भी न होता। मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन और उसकी क्रियाएं इसके आधीन हैं। जिसके प्रति हमें कोई आकर्षण नहीं होता उससे हमें कोई हानि नहीं होती। यह दो धार की छुरी है, एक ओर से मनुष्य के जीवन में आकर उसे काटती है और दूसरी ओर से जाकर। लेकिन फिर भी मनुष्य आकर्षण के बिना जीवित नहीं रह सकता।

जीवन का सबसे बड़ा आकर्षण है सुख! आदि और अनन्त से यह आकर्षण ही मानव को जीवन की प्रलोभन देता आया है। लेकिन सुख है क्या? इसका स्पष्टीकरण भी सदा से जटिल और गहन बना रहा। जहां संघर्ष होगा वहाँ सुख कैसा, जहाँ गति होगी वहां स्थिरता कैसी। इन दोनों से ही मानव जीवन सीमित है, न इन्हें छोड़ सकता है न इनसे बाहर जा सकता है। सुख और दुख तो कुछ क्षणों को एक भावात्मक अनुभूति से आते जाते रहते हैं। सुख के आकर्षण से दुख में जीवित रहना चाहता है और इच्छित सुख नें पा सकना ही दुख की अनुभूति है। सुख और दुःख हमारे जीवन के साथ सदा बने रहते हैं। जैसे दूध में पानी।

विनय के जीवन में स्त्री आ गई, एक आकर्षण था समाप्त पो गया। कई दिन हो गए थे राजेश से भेंट नहीं हुई थी। शादी के बाद वह दो चार बार मिला तो था किन्तु समयाभाव के कारण कुछ भी बातें नहीं हो सकी थीं। आज उसे पुनः राजेश की याद आ गई, और वह मिलने जा पहुंचा। देखते ही राजेश ने व्यंगात्मक मुस्कान छोड़ते हुए कहा:

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'आज बेवक्त कैसे भटक गए।'

'बेवक्त क्यों ?' समझते हुए भी विनय ने बात टाली।

'मालूम देता है श्रीमती जी घर पर नहीं है।'

'उनके रहने न रहने से मेरे शाम के घूमने में क्या फर्क पड़ता है।'

'हां यूँ ही बात टालनी पड़ती है, अभी नई-नई हैं, जरा डरी दबी सी रहती होंगी, कुछ दिन बीत जाने दो फिर पूछूंगा, क्या हाल है।'

'अच्छा तो फिर क्या हाल होंगे' विनय ने मुस्कराते हुए पूछा।

'अभी वह डरती हैं, फिर आप डरने लगेंगे।'

विनय हंस पड़ा : 'छोड़ो भी यह बातें, मैं उन आदमियों में नहीं हूं।'

'अजी आप क्या बड़े-बड़े सिकन्दर भी इस हस्ती के आगे माथा टेक चुके हैं' मुस्कराते हुए राजेश ने कहा।

'यह तो ठीक हो सकता है, लेकिन आपको इन सब बातों का अनुभव कैसे हुआ ब्रह्मचारी जी ?' विनय ने उत्तर देते हुए एक हल्की सी व्यंगात्मक मुस्कान छोड़ी।

'बहुत अच्छे, बहुत अच्छे, इस नामकरण के लिए धन्यवाद, और चलो 'फ्री इण्डिया' में अपनी दक्षिणा में चाय भी पिलाऊंगा।'

'फिर नेक काम में देर कैसी, चलो न।'

राजेश ने तुरन्तु कमीज पहनी और चल दिया।

जब तक दोनों 'फ्री इण्डिया' रेस्टोरेन्ट में पहुंचे, शाम के सात बज चुके थे। एक कोने में दोनों जाकर बैठ गए, चाय का आदेश देते हुए राजेश ने पूछा, कुछ खाओगे भी।'

'नहीं बस चाय काफी है।'

'और सुनाओ, कैसी बीती' राजेश ने मुस्कराते हुए प्रश्न किया।

'बस शादी हो गई' साधारणत: विनय ने उत्तर दिया।

'और आप देखते ही रह गए। यह तो मैं भी जानता हूं लेकिन...' रुक कर राजेश ने विषय बदलते हुए एक गहरी निश्वास छोड़ कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहा : 'छोड़ो भी इन बातों को, जो होना था हो गया।'

'बात-बात में ठण्डी आहें भरने से तो अच्छा है, तुम भी शादी कर लो।' विनय ने व्यंग किया।

कुछ मुस्कराते हुए राजेश ने कहा 'तो तुम शादी ही करके आये हो।'

'इसमें भी सन्देह है क्या ?'

'सन्देह नहीं सत्य है, स्पष्ट है।'

'क्या ?'

'तुम सौदा करके आये हो, बिककर समझे ! और मैं बिकना पसंद नहीं करता।'

विवाह की सारी घटनाएं एक धूमिल सी झलक विनय के मस्तिष्क में मार गई। सच ही तो कहा राजेश ने, तुम बिक गए हो, यदि लड़की लंगड़ी भी होती, तो भी तुम इनकार नहीं कर सकते थे। और अब...

राजेश ने अपने कथन का प्रभाव विनय की मुखाकृति पर पढ़ते हुए कहा : 'खैर भूल जाओ जो हुआ।'

'मैं समझता हूं तुम्हारे हृदय पर इस विषय का कोई गहरा आघात लगा है। एक दिन तुम अभिशापित होने की किसी घटना की चर्चा कर रहे थे आज सुना डालो' अपने अंतःकरण के झंझावात का रुख बदलने के लिए विनय ने राजेश को घटना की बात याद दिलाई थी, किन्तु अभिशाप की बात याद आते ही, वह एक दीर्घ निःश्वास के साथ बोला : 'हां कहा था और इसलिए कहा था कि शायद तुम्हें सुनाकर मैं अपने मस्तिष्क से निकालने में सफल हो जाऊं। वैसे घटनाएं तो बहु होती है, और एक के बाद दूसरी का ध्यान भी मनुष्य को कभी न रहता, लेकिन कोई घटना ऐसी भी होती है जो अपने नीचे क्रम अन्य सभी घटनाओं को दबाकर ऊपर ही उठती आती है। वैसे यह घटना मेरे मस्तिष्क में सदा चक्कर काटती रहती है। मेरे ज. का प्रत्येक पल उलझ गया है। मैं जितना ही अपने को सुलझाने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोशिश करता हूं उलझ जाता हूं।'

'फिर तो जरूर कह डालो, कह देने से मन का भार उतर जाता है, और यदि भूल हुई तो सुधर जाती है।'

'बात बन जाने से हर बात संवर जाती है।
बात बिगड़ी तो हर एक बात बिगड़ जाती है।'

'एक दीर्घ निःश्वास के साथ राजेश के मुंह से निकल गया।'

'बहुत खूब, शायरी भी करने लगे, इश्क के खरे मायूस हो।'

'देखो जी इश्क-विश्क का नाम मेरे सामने आप न लें तो अच्छा है' इतने में चाय आ गई। राजेश ने एक कप अपनी ओर खींचते हुए कहा : 'हां उस दिन मैं तुम्हें अपने जीवन की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना सुनाना चाहता था लेकिन सुनकर हंसना नहीं।'

'क्यों हंसी की बात होगी तो क्या करूंगा।' 'कहकर, मुस्कराते हुए विनय ने चाय का कप उठा लिया।

किंचित मुस्कराते हुए राजेश ने कहा : 'बात तो जरा सी है महज एक बेवकूफी जैसा कभी मैंने भी समझा था, लेकिन अब समझदार हूं वह एक कटु सत्य था, किसी की आत्मा की सच्ची तड़प थी, जिसमें श्राप की गत परम्परा को प्रमाणित कर देने की शक्ति थी। मैं उन दिनों बी० ए० के प्रथम खण्ड में पढ़ता था जब उनसे मेरी भेंट हुई। राजेश ने रुक कर चाय की एक चुस्की ली। 'घटना में आकर्षण है' कहते हुए विनय मुस्कराया और चाय की चुस्कियां लेने लगा।

'उनका नाम था कामिनी, प्रशस्त ललाट, घटाओं सी तैरती हुई काली-काली अच्छेदार अलकें, बड़ी-बड़ी, मादकता में डूबी हुई, आकर्षक आंखें, अधरों पर खेलती हुई सरस लालिमा, और कपोलों पर हल्की सी गुलाबी झलक, मानो सबको अपने में ही खींच कर डुबा देना चाहती थी। वह वास्तव में कामिनी ही थी।

वह मेरी आंखों में क्यों आई, क्या मुझे अभिशापित करने के लिए थी। एक दिन की घटना है वह मुझे शिवाले की बाजार में तीन चार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सहेलियों के साथ दिखलाई पड़ी, फिर वहां छिप गई मैं नहीं जान सका मेरे साथ मेरे मित्र अभय थे, हम दोनों चौक तक एक पुस्तक लेने जा रहे थे।

जब मैंने चौक पहुंच कर एक दूकानदार से पुस्तक मांगी, और वह पुस्तक निकालने भीतर चला गया तो मैं कुछ बात कहने के लिए अभय की ओर मुड़ा, देखा पीछे वह खड़ी थी। मैं सच कहता हूं विनय मुझे न जाने क्या हो गया, जैसे कुछ क्षणों को आंखें पथरा गई हों, ज्ञान तंतुओं को लकवा मार गया हो, लगभग बीस पच्चीस सेकण्ड हम एक दूसरे को देखते ही रह गए। उसके मुख पर लज्जा की एक अरुणिम रेखा सी दौड़ गई, जब अभय ने धीरे से चुटकी ली, 'जामे उल्फ़त पिला गया कोई, दिल की धड़कन में आ गया कोई।'

लज्जा से उनकी पलकें गिर गईं, मैं तो कुछ कह ही नहीं सकता क्या हो गया। उसी समय दुकानदार ने पुस्तक ला कर दी। कामिनी ने भी कुछ झिझकते हुए वही पुस्तक मांगी, दुकानदार बोला, 'क्षमा कीजिएगा, इस समय मेरे पास तो एक ही प्रति है, आप दोनों में जो चाहें ले लें !

कामिनी ने ढीठता के साथ पुस्तक मेरे हाथ से लेते हुए कहा 'क्षमा कीजिएगा' फिर दुकानदार को पैसे देते हुए बोली, 'यह लीजिए इनके पास अभी पैसे नहीं हैं' और मेरी ओर कटाक्ष करते हुए मुस्करा दिया।

मैंने भी चिढ़ कर एक तीर मारा, 'पैसे नहीं तो क्या, दिल तो है।'

उसने तपाक से कह डाला 'बड़ा सस्ता है, दिल और दिमाग' इतना कहते हुए वह चल दीं, मैं कुछ कहना ही चाहता था कि अभय बोल पड़े 'ले भी जाने दो, तुम मांग कर पढ़ लेना।'

मैं कोई उत्तर नहीं दे सका, उसी की ओर देखता रह गया, तब अभय ने हाथ पकड़ कर एक ओर बढ़ते हुए कहा 'मालूम देता है किताब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ही नहीं तुम्हें भी साथ ले गई।'

मैं चुप चाप उसके साथ चल दिया।

लेकिन यह क्षण पत्थर की लकीर से मेरे हृदय पर अंकित होकर रह गए। जिसे आज तक नहीं मिटा पाया हूं, रात भर मेरे मस्तिष्क पट पर उनकी वह मुस्कराहट, लज्जा की अरुणिम रेखा, वह ढीठता चक्कर काटती रही, जैसे कि वह रात मेरे जीवन की सब से लम्बी रात हो। दूसरे दिन प्रात: मैं एक घंटे पूर्व ही कालेज पहुंच गया। विनय चाय समाप्त करते हुए तनिक मुस्कराया, फिर बोला 'मैंने चाहा कि रोक लूं दिल को, दिल का पाया नहीं पता कोई' राजेश ने सुनते ही मुस्करा दिया। फिर कहने लगा, उन दिनों कालेज के फाटक पर एक खोमचे वाला बैठा करता था, मैं उसी की दुकान पर पड़ी एक बेन्च पर बैठ गया। वैसे तो मैं एक लेटलतीफ़ था। मुझे अचानक समय से पूर्व देखते ही मेरे साथी आश्चर्य में पड़ गए। धीर उन दिनों मेरा एक दूसरा सहपाठी था, नित्यप्रति समय के पूर्व ही कालेज पहुंच कर उसी फाटक पर खड़े-खड़े, आने-जाने वाले छात्र-छात्राओं पर छींटा कसी करने में उसे विशेष आनन्द आता था। हम सबने उसे गुरु उपाधि से विभूषित कर रखा था। मुझे देखते ही वह बोल पड़ा 'आज सवेरे सवेरे कैसे, किसी का शिकार हो गए क्या? मैंने तनिक मुस्कराते हुए कहा—

किसको कह दूं कसूरवार अपना,
जब कि क़ातिल नहीं मिला कोई।

प्यासी नज़रों से देख कर मुझको;
खुद को मुझसे गया छिपा कोई।

धीर उछल पड़ा, मेरी पीठ पर हाथ ठोंकते हुए कहा 'शावाश' और फिर धीरे से पूछा, 'बात क्या है, जरा मैं भी तो सुनूं'।

'सामने ही तो है।' कामिनी को सामने आते देख मेरे मुख से निकल गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गुरु उनको देखने के लिए मुड़ा, इतने में वह और पास आ गईं, वरवस मेरे मुख से निकल गया 'आज तो चाट खाने को जी कह रहा है।'

सुनते ही वह तपाक से बोल पड़ीं 'जी भर कर खाओ न, पैसे न हों तो मैं दे दूं।'

'नेकी वह भी पूछ पूछ, क्या ख्याल है गुरु' मैंने गुरु की ओर संकेत किया।

गुरु ने मेरी पीठ ठोंकते हुए कहा' चेला ठीक कहता है, तुरन्त दान-महा कल्याण।'

कामिनी कट कर रह गई, और झट से एक रुपया दुकानदार की ओर फेंकती हुई बोली 'तो खा लो जितना जी में आये।'

'सिर्फ एक रुपया, मुंह से खाऊंगा पेट की शिकायत रह जायेगी।'

'तो थोड़ा पानी और गम खाना, चाट से पेट की शिकायत नहीं जाती।'

इतना कहते हुए वह चल दी, रुकी नहीं, मैं चुप रह गया, गुरु ने पुनः पीठ ठोकते हुए कहा--'चेला नालायक निकला, मात खा गया।'

'यह तो पहली किस्त है गुरु, जरा मौका मिलने दीजिए' इतना कहते हुए मैं चाट वाले की ओर मुड़ कर बोला, पहले पेट पूजा; हां भाई जरा ताजी ताजी पकौड़ियां तो लगाओ!'

विनय ने कहा, 'चलो कहीं एकान्त में चल कर बैठें, 'घटना रोचक और लम्बी है दोनों रेस्टरां से उठ कर किसी पार्क की ओर चल दिए!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

७

***

कम्पनी गार्डेन के एक कोने पहुंचते हुए राजेश ने कहना आरम्भ किया—दूसरे दिन जब मैं पुस्तकालय की ओर जा रहा था, गैलरी के मोड़ पर फिर उनसे भेंट हो गई, हम जरा सा टकराते बच गए। एक क्षण उनकी ओर देखते हुए मेरे मुंह से निकल गया, 'आप' वह बड़ी वाचाल थीं बोली 'जी हां' फिर व्यंगात्मक ढंग से बोली, 'आपको तो ठीक से चलना भी नहीं आता।'

'टकराने से बचना तो आता ही है।'

'वह भी नहीं' कहते हुए वह किंचित मुस्करा कर पुस्तकालय की ओर चल दीं। आशाओं का दीप टिमटिमा उठा, मैंने साथ ही चलते हुए कहा--'तो फिर कुछ सीखने का अवसर दीजिए।'

तुनक कर बोली, 'आप मेरे साथ क्यों आ रहे हैं।'

'अगर मैं कहूं आप ऐसा क्यों कर रही हैं तो?'

'मैं तो अपने काम से जा रही हूं।'

'संम्भव है मैं भी उसी काम से जा रहा हूं।'

अब तक हम दोनों पुस्तकालय में प्रवेश कर चुके थे। उन्होंने एक तीखी दृष्टि मेरे ऊपर डालते हुए पुस्तकाध्यक्ष के सामने अपनी चिट पेश कर दी। मैंने भी नाम लिख कर दे दिया। संयोग बस दोनों चिटों पर एक ही पुस्तक के नाम थे पुस्तकालयाध्यक्ष ने दोनों चिटों को पढ़ने के बाद, हम पर ऐनक के भीतर से एक तिरछी दष्टि डालते हुए कहा 'एक ही प्रति है और तुम दा।'

वह चट से बोल पड़ी, 'मुझे दीजिए, इनके पास अभी पढ़ने का समय नहीं है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'आपके पास बहुत समय है क्या ?'

अब तक पुस्तकालयाध्यक्ष महोदय वहां से जा चुके थे। हम दोनों ही रह गए थे। धीरे से बोली, 'जी हां' फिर व्यंग करते हुए आगे कहने लगी, 'न तो किसी की प्रतीक्षा में मुझे घंटों पहले कालेज के फाटक पर खड़ा होना पड़ता है और न चाट खाने का ही शौक है।'

मैं मुस्करा पड़ा, 'प्रतीक्षा तक मेरी खबर पहुंच चुकी क्या ?'

'मुझे क्या मालूम'

इस बार मैंने भी व्यंग कर दिया 'हां हां आपको क्या मालूम, आप तो अपनी गुड़िया गुडे की बातों में भूली रहती होगी न !'

'ये मिस्टर मैं गुड़िया . . .' वह आगे बोल नहीं सकी।

'किसके नाम पर लिख दूं' पुस्तकालयाध्यक्ष ने अपनी सीट पर बैठते हुए पूछा।

वह तपाक से बोली 'मेरे'

मैंने भी आगे बढ़ कर कहा 'जी नहीं, मेरे'

उन्होंने ऐनक के भीतर से तिरछा झांकते हुए हम दोनों पर दृष्टि डाली, फिर वह दृष्टि सारे हाल की ओर घूम गई। हम दोनों ने भी एक बार इधर उधर देखा, हाल में बैठे सभी पढ़ने वालों का ध्यान हम लोगों के 'मेरे' उच्चारण पर खिंच चुका था ! जरा खखार कर गला साफ करते हुए पुस्तकाध्यक्ष बोले; मान लो पुस्तक एक, तुम दोनों एक, तब किसके नाम से दूं; हां जवाब जरा धीरे देना।'

कामिनी यह सब देख सिट पिटा गई, मैं बोल पड़ा, 'तो फिर आप मेरे ही नाम से दीजिए'

अब तक कामिनी ने अपनी स्थिति सम्भाल ली थी बोली, 'चिट पहले मैंने दी थी'

'तो पुस्तक भी पहले आप ही पढ़ लीजिएगा।' बस मैंने चट से उत्तर दे दिया। अब रजिस्टर में मेरा नाम लिखा जा चुका था मैं हस्ताक्षर करने लगा। उन्होंने पुस्तक उठाई और चल दीं। मैंने मुड़ कर कुछ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहना चाहा उन्होंने मुखाकृति से लाज की रेखा समेटते हुए किंचित मुस्करा दिया, वह छवि सदा के लिए मेरे मस्तिष्क पटल पर चिरस्मरणीय हो कर रह गई ।

'प्रेम कहानियां ऐसी ही आकर्षक और रोचक होती हैं ।'

'समझा, तुम भी व्यंग कर रहे हो, मज़ा आता होगा न ।'

'बात सच है, कहानी है बड़ी मजेदार, मुझे तो वास्तविक आनन्द मिल रहा है ।'

एक दीर्घ निःश्वास के साथ राजेश ने कहा—यह भी ठीक है, आनन्द उठाओ, समय काटो, और है ही क्या ?

'फिर आगे क्या हुआ' विनय ने संदर्भ देते हुए उत्सुकता प्रगटाई ।

'धीरे धीरे परिचय घनिष्टता, और प्रेम में परिणत हो गया । मैं उनके घर भी जाने लगा, क्योंकि उनके पिता एक सुलझे हुए, उदार प्रकृति के व्यक्ति थे । अतः मेरी मित्रता से किसी को आपत्ति न थी ।'

'एक बार उनके पिता जी बाहर गए और साथ में माताजी को भी लेते गए । घर में कामिनी और उसके दो छोटे भाई रह गए । उस दिन संध्या में मैं भोजन के लिए आमंत्रित था । कामिनी जानती थी कि मैं भांग का शौकीन हूं अतः खूब भंग छनी, बहुत समय बीत गया लगभग ग्यारह बज गए, भांग के नशे में छोटे छोटे बच्चे तो जल्दी ही सो गए थे बच्चों को कमरे में पलंग पर लिटा कर वह पुनः मेरे पास आई, विनय उस विद्युत प्रकाश में उसकी मदमाती आंखों को देखते ही मैं डोल गया । क्या था उन दो आंखों में, क्या होता है इन दो आंखों में जो एक पल में किसी को इतनी गहराइयों में ले डूबती हैं, जहां सागर भी उथलेपन का आभास करने लगता है । वह एक सत्य था या स्वप्न मैं आज तक किसी निष्कर्ष तक नहीं पहुंच सका, हल्की सी मुस्कान दोनों ओठों पर खेल गई 'अब यहीं रुक जाओ न; काफी देर हो गई है ।'

मैं सोया हुआ सा बैठा था बोल पड़ा 'तुम्हारा कहना कैसे टाल सकता हूं ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'तो उठो उस कमरे में बिस्तर लगा है, उन्होंने दूसरे कमरे की ओर संकेत करते हुए कहा। मैं उठकर उसके साथ हो लिया। मेरे रोम-रोम में एक सिहरन सी उठने लगी थी। दूसरे कमरे में एक पलंग बिछा हुआ था, पास पहुंच कर उन्होंने, या उन दो आंखों ने एक बार पुनः तीक्ष्ण कटाक्ष करते हुए कहा : 'ठीक रहेगा न, मैं चलती हूं।'

मेरे संयम का बांध टूट गया। मैंने उनका हाथ पकड़कर खींच लिया। 'जरा सी देर तुम भी यहां बैठो न।' हाथ पकड़ते ही मेरे रोम-रोम में एक प्रकंपन-सा छा गया। उस झिटके की जैसे वह बाट जोह रही हों मेरे ही वक्ष स्थल पर आ गिरी !

'अरे यह क्या, बड़े खराब हैं आप !' और मेरे बाहुपाशों से बाहर जाने का प्रयास करने लगीं। 'छोड़िए न कोई आ गया तो ?'

मैंने उनके मुख को ऊपर की ओर उठाते हुए कहा : 'तो क्या, डूबने वाले को सहारा मिल जायेगा।'

'अभी हम किनारे पर ही है, अच्छा हो कि मझधार की ओर न बढ़ें !'

पुनः उन्होंने छुड़ाने का प्रयास किया, किन्तु उनके अंग शिथिलता का बोझ मेरे ऊपर डाल रहे थे, मैंने अपनी बाहुपाशों को कसते हुए अनुभव किया, जैसे वह भी मेरी ही तरह अपने से बाहर हैं।

'मझधार में तो आ ही गए, इस भंवर से बचना मुश्किल है कामिनी।'

'राज !' कामिनी के दोनों नेत्र बन्द हो गए, समझो कि मैं उनमें बन्द हो गया। उनकी गहराइयों में डूब गया, यौवन के उन्माद में बह गया।'

पुनः एक दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए राजेश बोला : 'एक ही नहीं लगभग नौ रातें मैंने ऐसे ही उल्लास और वासना में डूबी हुई काट दीं, जिन्हें कभी भूल सकूंगा क्या !

कुछ दिनों हम अपनी नाव खेते रहे, लेकिन समय के थपेड़ों ने हमें

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दो धारों में विभक्त कर दिया। उनके पिता का बरेली स्थानान्तर हो गया। जब मैं अंतिम बार उनसे मिला तो उनकी आंखें छलक पड़ीं, धीरे से बोलीं : 'बरेली आ जाओ, एक ही साथ पढ़ेंगे।'

'लेकिन मैं क्यों मानता उनकी बात। अपना लक्ष्य एक नहीं अनेक जो था!'

विनय ने मुस्कराते हुए कहा : 'कहानी तो रोचक होती जा रही है।'

'नहीं खत्म होती जा रही है।'

साश्चर्य विनय ने पूछा : 'क्यों ? फिर तुमसे भेंट नहीं हुई क्या ?'

एक दीर्घ निश्वांस राजेश के अन्तस्थल से निकल पड़ी। अब जैसे वह भीतर से खाली होता जा रहा था, बोला : 'कुछ दिनों तक हम दोनों में कोई सम्बन्ध न रहा। जैसे हम कभी एक दूसरे को जानते ही न थे। मेरे मस्तिष्क से भी वह धीरे-धीरे हटने लगी थीं। लेकिन दूसरे वर्ष मुझे गर्मियों की छुट्टी में बरेली जाना पड़ा, वहां पहुंचने पर कामिनी की स्मृतियां जाग्रत हो उठीं, और मैं उससे मिलने पहुंच गया। उस रात मुझे वहीं रुकना पड़ा, लगभग प्रातः पांच बजे मुझे अपनी बाहु-पाशों में भरते हुए कामिनी ने कहा, 'एक बात कहूं मानोगे।'

मानने योग्य हुई तो अवश्य मानूंगा।' कहते हुए मैंने उसे चूम लिया।

वह बोली : 'ऐसे नहीं, बचन दो।'

मैं असमञ्जस मे पड़ गया, क्या करूं, क्या न करूं! क्योंकि मेरे हृदय में अब कामिनी वह नहीं रह गई थी जो आई थी! लेकिन उसके हृदय में वही स्थान था, उसने गुदगुदाते हुए कहा 'क्यों? आ गए न ऊंच-नीच में।' मैं झेंप मिटाने के लिए मुस्करा पड़ा। 'सब बातें वचन से ही तो नहीं होती। क्या तुम्हें मेरा विश्वास नहीं, फिर वचन ही कौन सा लोहा है, थोड़ा सा विचारों का बन्धन मात्र।'

वह उदास हो गई।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'क्यों ? कहो न क्या बात है ।' मैंने गुदगुदाते हुए पूछा ।

याद है तुम्हें, एक दिन लाइब्रेरियन ने कहा था, 'हम दोनों एक हैं ।'

उदासी को समेटते हुए, उसने मुझे पढ़ने का प्रयास करते हुए मुस्करा दिया ।

'और तभी तुमने थोड़ा सा मुस्कराकर मुझे अपना बना लिया था, हैं न !' मेरे इस उत्तर से उसे अपनी बात कहने की प्रेरणा मिल गई ।

'बस यही तो कहना चाहती हूं, हम क्यों न एक बन्धन अपना लें, अब हम दोनों में फर्क ही क्या है, फिर शादी क्यों न कर लें !' इतना कह कर वह आतुरता से मेरी ओर देखने लगी !

'शादी' जैसे किसी विषैले बिच्छू ने डंक मार दिया हो, मैं चौंक सा पड़ा, लेकिन इससे उठने वाली पीड़ा को दबाकर चुप रह जाना पड़ा ! मैंने तो जीवन पर्यन्त शादी न करने की प्रतिज्ञा की थी । यह भी मेरे जीवन की एक अविस्मरणीय घटना है ।

उन दिनों मैं इण्टर के प्रथम खण्ड में पढ़ता था, और होली के अवसर पर गांव गया । वहां मेरा भी खरीददार आया हुआ था, जानते हो, बड़े घर के लड़कों के बड़े भाव होते हैं । लेकिन मैंने अनाधिकार चेष्टा की और बिकने से इन्कार कर दिया। खरीददार लौट गए। लेकिन मैं अपने पिता, सम्बन्धियों और उन खरीदारों की दृष्टि में अशिष्ट तथा मूर्ख प्रमाणित हो गया । मेरे पिता पूरे जमीदार हैं, उन्हें मेरा यह व्यवहार पसन्द नहीं आया । और उन्होंने जो शब्द मेरी अशिष्टता के लिए कहे, वह मैं व्यक्त नहीं कर सकता, लेकिन शब्दवाण मेरे लिए सदा से ही असह्य रहे हैं ।

मैं शहर वापस आ गया, चलते समय मैंने मां के सामने प्रतिज्ञा की थी, कि मैं कभी शादी नहीं करूंगा । जैसे अज्ञात से कभी-कभी सत्य प्रस्फुटित हो जाता है वैसे ही मेरी भावना से उठकर मुंह तक यह शब्द आ गए ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस घटना के बाद से मुझे आर्थिक सहायता बिल्कुल बन्द कर दी गई। क्योंकि मुझे पढ़ाने से लाभ क्या था। मैं अपने भाइयों में सबसे बड़ा हूं, लेकिन मेरा खर्च छोटे भाइयों से मांग-मांगकर चलता रहा। छोटे भाइयों के सामने हाथ फैलाते हुए मेरे स्वाभिमान को कितना धक्का लगा; मुझे कितनी वेदना मिली, मेरी भावनाओं में कितने झंझावात उठे, लेकिन सब सहन ही करना पड़ा, केवल शादी के लिए। जब कामिनी ने शादी की बात कही तो मैं चुप रह गया, लेकिन वह चुप कैसे रहती बोली : 'चुप क्यों हो गए।'

मैंने अपने को सम्भालते हुए कहा : 'यह तो एक गहनता से विचारने योग्य प्रश्न है।'

'क्यों ? क्या हमें एक दूसरे पर भरोसा नहीं, विश्वास नहीं।'

'बात केवल हमारे और तुम्हारे तक ही नहीं है, हमारे सामने सामाजिक बन्धन भी तो हैं, सम्बन्ध भी तो हैं।'

'मनुष्य के जीवन में केवल एक ही तो सम्बन्ध है मां का, और मां तो तुम्हारे सगी है नहीं, शेष के सब सम्बन्ध झूठे हैं।'

'तुम्हीं समझ लो, फिर इस झूठे सम्बन्ध में क्या है।'

'मां के बाद यही तो एक सम्बन्ध है जो मैं चाहती हूं।'
लेकिन मैं उन्हीं विचारों से सहमत हूं, झूठे सम्बन्धों से क्या लाभ !'

'मैंने जो बात कही है उसका यह आशय नहीं है, तनिक जीवन भी तो कोई चीज़ है, क्या तुम अपने जीवन से, चरित्र से कोई ऐसा सम्बन्ध नहीं रखते हो, जिससे तुम्हें मनुष्य होने का गर्व है !'

'गर्व तो मूर्ख करते हैं,' 'मैंने किंचित मुस्कराते हुए आगे कहा : 'जीवन तो एक पानी का बुलबुला है, जितनी हवा भर गई उतना ही फूल गया, ज्यादा हो गई तो फूट गया, कम रही तो मिट गया।'

'लेकिन मनुष्यता का कोई धर्म भी तो है।'

'मेरे लिए तो वही धर्म है जो अनुकूल हो, और वही कर्म अच्छे हैं जिनसे जीवन का उल्लास सदा हरा बना रहे।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह कुछ आवेश में आते हुए बोली : 'तुम्हारे कहने का आश प्रेम कुछ भी नहीं।'

'मैंने आज तक प्रेम की परिभाषा नहीं देखी, जो भी साहित्यकार की भाषा में परिभाषाएं आईं, वे असत्य हैं, सबने अपने अनुकूल परिस्थितियों को ही व्यक्त किया है; स्वार्थ के गर्त में हैं।'

'समझी,' तुम उस स्वार्थ के परे हो मनुष्य से महान् हो, यही न ! मेरा शरीर और प्रेम सब तुम्हारी अनुकूल परिस्थितियों का खिलौना था !' वह एकाएक भरी गागर सी छलक पड़ीं।

मैंने अपनी स्थिति को छिपाने का प्रयास करते हुए कहा : 'लेकिन कामिनी मेरा ऐसा कोई आशय नहीं था !'

'आदमी सत्य को कभी नहीं छिपा पाता राजेश ! वह सदा विचारों में झांकता रहता है, कोई समझे या न समझे, कोई माने या न माने; जल्दी समझे या देर से, मैं इतनी मूर्ख नहीं हूं, लेकिन तुमने जो कहा है उस पर विचार करना, यदि मैंने जीवन में एक क्षण के लिए भी तुम्हें प्यार किया होगा, तो तुम्हारा जीवन कभी सुखी न रहेगा।' इतना कहते हुए वह फफक-फफक कर रो पड़ी, और आंचल में अपना मुंह छिपा लिया।

मैं एक टक देखता रह गया, मुझमें इतनी क्षमता न रह गई कि उसके शरीर में हाथ लगाने का भी साहस करता। क्या वास्तव में आत्मा इतनी ही शक्तिवान है, या अवेश है।

'प्रेम से अध्यात्म की ओर क्यों भागने लगे।' मुस्कराते हुए विनय ने कहा !

'मैं समझता हूं प्रेम और अध्यात्म में गहरा सम्बन्ध है।'

कुछ गम्भीर होते हुए विनय ने उत्तर दिया : 'सम्बन्ध ही क्यों, दोनों का सत्य स्वरूप तो एक ही है, लेकिन हम स्वार्थ में डूबते उतरते हुए उसे देख कहां पाते हैं।'

'फिर लोग प्रेम की परिभाषा करते समय अध्यात्म से दूर क्यों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

...ते हैं।' राजेश ने प्रश्न किया।

किंचित मुस्कराते हुए विनय ने कहा: 'वह सब प्रेम को तुम्हारे ही ...कोण से देखते होंगे।

राजेश झेंपते हुए मुस्करा पड़ा। विनय ने आगे कहा, 'लेकिन उनकी परिभाषाओं का अन्त अध्यात्म में ही, होता है। भगवान जाने तुम्हारा अन्त कहां होगा। हां फिर क्या हुआ?'

'मैं चला आया।'

'फिर भेंट नहीं हुई क्या?' उत्सुकता से विनय ने प्रश्न किया।

एक दीर्घ निश्वास के साथ राजेश ने कहना आरम्भ किया:

"सौभाग्य कहो या दुर्भाग्य, मुझे एक वर्ष बाद फिर बरेली जाने का अवसर मिला। शाम को लगभग पांच बजे होंगे, मैं उस दिन कानपुर वापस आने वाला था अतः बांस की टोकरी खरीदने घण्टाघर पर जा पहुंचा। मैं एक दूकानदार से उलझा हुआ था तभी किसी को अपनी ...ठ थपथपाते हुए कहते सुना।'

'अरे जरा इधर भी!'

'ओ हो, तुम।' देखा तो कामिनी थी!

'हां, पर तुम यहां कब आये?'

'मैं कल एक इण्टरव्यू में आया था।'

'और क्या हाल हैं? शादी तो हो गई होगी?' वह कुछ मुस्कराती हुई बोली:

मैंने उसके अभिशाप पर आक्षेप करते हुए कहा: 'अभी तक तो बिल्कुल वैसा ही हूं। आगे की राम जानें या आप।

यह सुनते ही वह उदास हो गई, जैसे किसी दारुण वेदना तथा पश्चाताप की भावनाओं में डूबने उतराने लगी हो, कुछ क्षणों चुप रहने के बाद बोली: 'तो अभी तक वह बात तुम्हारे हृदय में है! मैं कभी तुम्हारा बुरा भी चाहूंगी क्या? तुम्हें ऐसी भी आशा थी।' इतना कहते हुए उसकी आंखें डबडबा आईं। मैं चुप रहा, वह मेरे और पास आते

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुए धीरे से बोली : 'मैं पश्चाताप के लिए तैयार हूं।'

मैंने पूछा : 'कैसा पश्चाताप ?'

उसने स्पष्ट किया, 'मैं अब भी तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूं।'

मैंने व्यंग किया, 'तब तुम्हारे नैतिक जीवन का क्या होगा ?'

कामिनी ने आंसू पोछते हुए कहा 'समझी ! तुम्हारे हृदय में प्रतिशोध की ज्वाला दहक रही है, मैंने जो शब्द उस रात को कहे थे यह उसी का उत्तर है। लेकिन तुम नारी हृदय को क्या जानों, प्रेम और समर्पण जीवन में एक ही बार होता है, उसके लिए संसार में न कोई बन्धन है न धर्म।'

'वह प्रेम नहीं एक धोखा है कामिनी, स्वार्थ का एक नग्न स्वरूप' उसके हृदय का बांध टूट गया। भरी सड़क पर उसने मेरे सीने पर अपना मुंह छिपा लिया 'यह बात नहीं राजेश, यह बात नहीं; मैं तुम्हें नहीं भूल सकी, मैं तुम्हारी हूं राजेश, केवल तुम्हारी।' इतना कहते हुए इसका गला रूंध गया और वह सिसकने लगी, दो चार पथिक पूछ भी बैठे 'क्या बात है' और मुझे कहना ही पड़ा' 'कुछ नहीं, घर की बात है।'

थोड़ी देर में वह अपने को सम्भाल पाई, रूंधे कण्ठ से बोली 'कहां ठहरे हो।'

'होटल में'

'मेरे घर नहीं चलोगे।'

मैंने बहाना किया, 'इसी गाड़ी से वापस जाना जरूरी है।'

वह समझ गई, 'भूल भी जाओ इन बातों को, आज रुक जाओ न मैं भी घर पर अकेली ही हूं।' अब तक उसने अपने को सम्भाल लिया था और इतना कहते हुए अधरों पर सस्मित रेखा खेल गई, नैनों ने एक अतृप्त कटाक्ष कर दिया।

मेरा संयम डोल गया, संकल्प-विकल्प में डूबते उतराते मैंने हाथ जोड़ दिए ! 'जाना बहुत जरूरी है, अच्छा नमस्ते' मैं चल दिया। वह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अतृप्त दृष्टि से देखती रह गई।

मुस्कराते हुए विनय ने टोंका, 'बड़ी वाचाल मालूम देती है।'

'क्यों' ?

'अपनी बात कहने में जरा भी हिचक या लाज नहीं आती थी क्या ? उसमें स्त्रियोचित शालीनता नहीं थी क्या ?'

सब कुछ था उसमें विनय, और अब भी है, लेकिन वाचालता मेरे लिए ही। अभी नई नई व्याह कर लाये हो, शालीनता और मौनता की प्रधानता होगी। इसलिए तुम्हें कामिनी वाचाल लगी, जरा कुछ दिन ठहर जाओ तुम जिसे शालीन और लाजवन्ती समझते हो वह इतनी पैनी छुरी हो जायेगी, कि बगलें झांकने के सिवा बचाव का दूसरा रास्ता नहीं मिलेगा !' राजेश ने कटु व्यंग करते हुए उत्तर दिया था। लेकिन विनय ने मुस्कराते हुए कह दिया—'बड़ा कटु अनुभव है।'

'अनुभव नहीं यह सत्य है, स्त्री के गुण जिनकी व्याख्याएं होती है, मेरे विचार से भावात्मक अधिक और प्रयोगात्मक कम, नहीं से है।' राजेश ने अपनी बात को पुष्ट करते हुए कहा लेकिन विनय ने विरोध किया, 'यह कोई स्पष्ट बात नहीं है।'

'संम्भव है मैं गलत हूं, लेकिन यह सत्य है, बाह्य वातावरण में व्यावहारिक दृष्टिकोण से स्त्री के यही गुण आकर्षक केन्द्र बन जाते हैं; किन्तु जीवन के चढ़ाव उतार, परिस्थितियों के कुचक्रों में पड़कर जो कुटिलता उसमें उभर आती है, वही मनुष्य को समाज से संन्यास की प्रवृत्ति प्रदान करती है' राजेश ने अपने विचारों को स्पष्ट किया ! 'तो क्या संन्यासी होने का विचार है, ऐसे तो सब संन्यासी ही रह जाते, अब तक सामाजिक व्यक्ति तो ढूंढ़ने से भी न मिलता' विनय ने मुस्कराते हुए व्यंग कस दिया ! गम्भीरता से राजेश ने प्रश्न किया, 'अच्छा एक प्रश्न है'

'पूछो'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुम मेरा आदर करते हो, मुझसे कुछ नहीं कहते; मैंने तुम्हारे घर में आग लगा दी, तुम चुप रह गए। फिर मैं खड़ा होकर तमाशा भी देखने लगा, तब भी तुम चुप रहे, फिर बुझाने वालों से कहूं जलने दो, जरा तमाशा देखो मज़ा आ रहा है, और तुम जलते रहो, तब भी तुम चुप रहोगे, तुम्हारे हृदय में वही आदर, प्रेम, सम्मान बना रहेगा क्या ?'

'सब राख हो जायेगा' विनय ने कहते हुए एक बेचैनी सी महसूस की। 'फिर स्त्री कैसे चुप रह सकती है।'

विनय चुप था। वह सोचने लगा, राजेश भावावेश में बक रहा है अपनी बात को प्रमाणित करने की दृष्टि से, या यह सत्य है, तभी राजेश आगे बोला 'आज मैं अनुभव कर रहा हूं; मेरा आक्षेप निराधार था, उसका श्राप दिन प्रतिदिन मेरे पग पग पर कांटे बिछाता जा रहा है। मुझे आगे कुछ भी दृष्टिगत नहीं होता, चारों ओर अशान्ति और कांटे ही कांटे दीखते हैं। क्या मैं कभी सुख पा सकूंगा। मैं उन अनमोल वचनों के भरोसे बढ़ता जा रहा हू, कि जीवन संघर्षमय है, यहां एक भी पग रखने को फूल न मिलेंगे, यह रास्ता ही काटों भरा है, यहां स्वयं कांटों से फूल और फूल से कांटे मनुष्य बनाता है, कांटों से फूल बनाना ही जीवन की कसौटी पर खरा उतरना है। नीचे आते देर नहीं लगती, लेकिन ढाल का अस्तित्व तो चढ़ाई पर ही मालूम देता है। मैं चढ़ाई से न तो हताश हूं, न डरता ही हूं बल्कि मुझे पूर्ण विश्वास है, जब मैं एक एक पग परिश्रम और संघर्ष से बढ़ाता हुआ अपनी मंजिल पर पहुंचूगा, तो कोई भी शक्ति मुझे नीचे ढकेल देने का साहस न कर सकेगी।'

राजेश का मुखमण्डल आत्मविश्वास से प्रभावित हो उठा इसी समय विनय ने जम्हाई लेते हुए कहा, 'अच्छा अब चलना चाहिए' और वह उठ कर खड़ा हो गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

★★★

लगभग तीन बजे शाम को विनय तैयार हो कर नीचे उतरा और बाबा के हाल चाल पूछने लगा, तभी राजेश पहुंच गया। उसे देखते ही विनय ने कहा 'बस मैं आ ही रहा था, देखो बिल्कुल तैयार खड़ा हूं, जरा बाबा से दो बातें करने लगा!' राजेश ने मुस्कराते हुए कहा—ठीक है बड़े बुजुर्गों से तो अवश्य ही बातें करते रहना चाहिए, मंजिल तक पहुंचने का सही रास्ता इनसे अच्छा भला और कौन बता सकता है।'

बाबा इस व्यंग का आदर करते हुए तपाक से बोल पड़े, 'जिन्दगी के भटके हुए राही यदि मंजिल नहीं पा सके तो क्या! रास्ता तो जान ही गए, और साथ-साथ यह भी समझ गए कि वे भटके कहां थे।'

राजेश ने लज्जित होते हुए कहा 'बाबा मेरा यह आशय नहीं था। आशा है आप मुझे क्षमा करेंगे। हम तो आपके सामने अभी बच्चे ही हैं।'

बाबा ने हंसते हुए कहा, 'मैंने तुम्हारी बात का बुरा ही कब माना है राजेश! लेकिन मैं जहां पहुंच चुका हूं वहां से वापस जाना असम्भव है, और तुम्हें तो अब चलना है।'

राजेश ने प्रश्न किया; लेकिन चलना किधर है, इस बात से तो हम अनभिज्ञ हैं ही!'

'यह तो ठीक है, इसमें मैं तुम्हारी सहायता तो नहीं कर सकता, लेकिन मेरे भटके हुए रास्तों को यदि जान लोगे, तो भटकोगे नहीं, और जो भटकने से बच गया, उसे समझो सही रास्ता मिल गया। सही मंजिल मिल गई!' अपने बड़प्पन से प्रभावित करते हुए बाबा ने आगे कहा, 'अभी तो तुम लोग कहीं जा रहे हो, फिर सही, जब कभी समय

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होगा, मैं अपने जीवन के रास्तों से अवगत करा दूंगा' कहते हुए बाबा बीड़ी मुंह से लगा सुलगाने लगे, और विनय राजेश के साथ चल दिया।

'भगवान भास्कर दिन भर तपकर तमतमा उठे हैं, उनकी रोली गंगा की लहरों से खेलती हुई कुछ कह रही है, कभी सोचा है तुमने विनय ? पुल पर खड़े खड़े गंगा की लहर खाती हुई रेखा सुदूर से आते जाते देख रहे हो यह हम से मानो कह रही हम अतीत छोड़ कर वर्तमान से भविष्य की ओर झांक रहे हैं, एक सामयिक निशा में तिरोहित होता जा रहा है, वह निशा की काली छाया बढ़ती ही आ रहा है थोड़ी सी देर में सूर्य को भी ढंक लेगी, नहीं नहीं सूर्य स्वयं छिप जायेगा, क्या होगा इस अन्धकार में कभी सोचा है तुमने ?'

'फिर ऊषा की तरुणाई तथा प्रकाश' विनय ने सहज गम्भीरता से उत्तर दिया।

'तुमने ठीक ही सोचा, मैं भी यही सोचता हूं परिस्थितियों से हार मान लेने पर हमारे भविष्य का अन्धकार गहन होता जायेगा।'

'तुम इतना हताश क्यों होते हो राजेश ? हम जहां ठोकर खाते हैं, हमारे सम्भलने की वही सही प्रदर्शक है। गंगा की हहराती धारा सैकड़ों मील चट्टानों को तोड़कर गंगोत्री में प्रकाश पा गई, और स्वच्छन्द वातावरण में खेलती हुई सोलह सौ मील की यात्रा पूरी कर रत्नाकर की उत्तंग तरंगों में समाकर सिद्ध करती है, ठोकर खाकर ही हमने अनन्त सुख पाया है! पथिक, हारना जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है और जीतना वरदान! बढ़ो और पग-पग पर ठोकरों का सामना करो, निराशा जीवन की एक क्षणिक काली घटा है, जो पवन वेग से भागते जीवन पर कितने दिन ठहर सकेगी।' विनय ने पूर्ववत् गम्भीरता के साथ कहा! राजेश ने एक दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए कहा, 'सोचता हूं जिन्दगी आसान कम और कठिन ज्यादा है। आकर्षक अधिक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ग्रौर सत्य कम है, यही न; ग्रौर यही है जीवन को बचाये रखने का एक प्रलोभन !'

'तुम परिस्थितियों से उलझ कर धैर्य खो चुके हो, तुम पुरुष हो तुम्हें भी सागर की मर्यादा का पालन करना पड़ेगा; उसमें भी ज्वार ग्राता है लेकिन सीमित, तुम्हें भी ज्वार में धैर्य ग्रौर गम्भीरता त्यागना उचित नहीं' विनय ने सान्त्वना देते हुए कहा।

'थोड़ा सा तुम्हारी बातों का प्रभाव है विनय ! वैसे मेरा जीवन तो ग्रब बरसात की काली रात का पथिक है; कब बिजली गिरे ग्रौर ग्रन्त हो जाय।'

'सभी परिस्थितियों से उलझे हुए हैं राजेश; इनके वशीभूत भी हैं ग्रौर एक दूसरे की समस्या भी, सहारा भी सभी इस क्रम से ग्राबद्ध हैं।'

'ग्राखिर क्यों ?'

'संसार के तथा मानव जीवन के सभी क्रम इसी से उलझते-सुलझते रहते हैं। इसी से हमें संघर्ष कर जीवन में गति प्रदान करनी पड़ती है या समझो कि इसी क्रम का दूसरा नाम है जीवन।'

'ग्रौर उस जीवन का ग्रन्त क्या है, जैसे प्रकाश में ग्रन्धकार का; लेकिन अंधकार का कोई ग्रन्त नहीं।'

'क्यों नहीं, प्रकाश का महत्व तो ग्रन्धकार से ही है, जीवन का महत्व भी उन ग्रसफलताग्रों, परिस्थितियों के कुचक्रों में निहित है, जिनसे संघर्ष कर हमें ग्रभ्यस्त होना पड़ता है।' स्वर-ज्ञान से विज्ञ तथा ग्रभ्यस्त संगीतज्ञ के हाथों बजती वीणा जितना मधुर ग्राकर्षण रखती है, उतना ही बेसुरे झनझनाते तार संगीत से ग्ररुचि उत्पन्न करते हैं ,लेकिन इसके लिए साधना ग्रौर ग्रभ्यास की ग्रावश्यकता है, तभी जीवन के सुमधुर स्वरों का संचार होना सम्भव है। न विना ग्रभ्यास ग्रौर साधना के वीणा ग्राकर्षण रखती है ,ग्रौर न जीवन प्रवाह।

जीवन स्वप्न होते हुए भी इतना भावनामय नहीं है, उसमें कुछ सत्य है। क्योंकि जीवन ने ग्रपने सत्य-ग्रसत्य की मीमांसा की है, स्वप्न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ने नहीं,और वह सत्य विचारों में डूब कर नहीं, बल्कि कर्मरत रह कर ही पाया जा सकता है, हम विचारों में उलझ कर सत्य से दूर भागते जा रहे हैं, जहां सृजन नहीं विनाश है । राजेश !'

'लेकिन सत्य है क्या ? विनय, जिसका रोना है ।'

'मेरी समझ में तो जो होना चाहिए, वह न हो कर मनुष्य को व्यक्तिगत भावना और स्वार्थ जो होने और करने के लिए प्रयत्न करे अथवा बाध्य करे, वही असत्य है, शेष सब सत्य; जिसका स्वरूप मनुष्य अपनी स्वाधीनतावश देख नहीं पाता ।'

'लेकिन वह तो परिस्थितियों में इतना उलझा हुआ है कि उसे विचारों की इतनी गहराई में पहुंचने का अवकाश कहां ?'

'और मेरे विचार से तो वह परिस्थितियां उसके अपने स्वार्थ, यश अर्थ वासना की ज्वलत प्रमाण हैं; यदि हम मूल रुप से देखें, उन पर विचार करें तो वे परिस्थितियां उसकी और प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष स्वार्थी भावनाओं का ही रूप हैं। दैवी कम बल्कि नहीं सी, मानवीय अधिक; और जब वह स्वयं इस प्रपंच का दाता है, तो उनसे बचकर जा ही कहां सकता है । फिर भी वह ढूंढ़ता है इनसे बचकर सुख और शान्ति ।'

'लेकिन जीवन में गति तो तभी होगी जब संघर्ष होगा । और संघर्ष से शान्ति भंग होती है, और बिना शान्ति के सुख नहीं।'

'संघर्ष तो विनाश और सृजन का दाता है । भौतिक या आदि-भौतिक दोनों ही के लिए मानसिक सन्तुलन, चेतना और शान्ति चाहिए । इसके लिए संघर्ष का रूप ही बदलना पड़ेगा । अपने से संघर्ष करना पड़ेगा, केवल अपने से ।'

'फिर सामाजिक बन्धनों से बचने का उपाय क्या है। उनसे तो दूर नहीं जाया जा सकता है । मनुष्य जीव तो समाज का ही है ।

'बात ठीक है मेरा आशय भी दर्शन से नहीं बल्कि समाज और अपने से ही था । हम अपने स्वार्थों के वशीभूत न हो । अपनी सामाजिक आर्थिक, ऐन्द्रिक वासनाओं से सुरक्षित रहें बस ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुस्कराहट के साथ राजेश ने व्यंग किया, यह तो दो नावों पर पैर रखना हुआ, जो सदा से ही विनाशकारी रहा है।'

विनय ने इसी गम्भीरता से उत्तर दिया, 'नाव एक ही है पतवार दो। अपने स्वार्थों की मीमांसा यदि हम स्वयं निष्पक्ष, निष्कपट भाव से करने बैठ जायं तो हमारी सीमित आवश्यकताएं ही सामने रह जाती हैं। भ्रम का निराकरण होते ही आत्मबल बढ़ जाता है। अपने स्वार्थों की मीमांसा वह भी निष्पक्ष, निष्कपट भाव से करना सरल नहीं है, यहां भी संघर्ष है और संघर्ष के भी कुछ नियम हैं। जैसे आणविक अस्त्रों का सामना तुम अपनी दुनाली बन्दूक से नहीं कर सकते वैसे ही स्वार्थों में उलझकर नैतिकता से गिर कर तुम शान्ति नहीं पा सकते; अपनी स्थिति पर बिना विचार किए संघर्ष करना विनाश को घर बैठाना है, अपना घर आप ही जलाना है।'

'तुम यह आक्षेप मुझ पर कर रहे हो लेकिन आजकल संघर्ष के लिए छल, प्रपंच, असत्य और कूटनीति के सिवा और है क्या हमारे पास'

'अभी तो और भी साधन शेष हैं; लेकिन उक्त गुण तो तुम में होने ही चाहिएं, ताकि उन्हीं के अक्रमणों से तुम अपनी सुरक्षा कर सको' 'यदि दोनों ओर से उनका आक्रमण प्रत्याक्रमण बढ़ता गया तो शनैः-शनैः मनुष्य ऐसी स्थिति में पहुंच सकता है कि उसका कोई एक रूप ही न रहे, कोई मजबूती न रहे, केवल आज के आणविक अस्त्रों की लड़ाई रह जायेगी, आक्रामक तथा आक्रादित दोनों ही का एक साथ विनाश।'

'लेकिन इस पर विचार ही कौन करता है।'

'क्यों नहीं अपनी सुरक्षा ही तो संदिग्ध है, तभी तो विश्व युद्ध की घटायें गरज-गरज कर ही आगे बढ़ती जा रही हैं। यह ध्रुव सत्य है कि यह युद्ध मनुष्य से मनुष्य का नहीं, देश से देश का नहीं, बल्कि शक्ति से शक्ति का होगा। जो महा प्रलय कारी है।'

'क्या ऐसी संभावनाएं भी हैं।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'इमारतें जितनी ऊंची उठती जा रही हैं न जाने कब कैसे धसक कर बिखर जायं। प्रलय कारी भूकम्प कभी भी आ सकता है और यह तो मनुष्य के मस्तिष्क का भूकम्प होगा।'

'तुम भी वहाँ बहक गए, इन सब बातों से हमें क्या ? इन सब बातों से हमारी परेशानी तो दूर नहीं होती।'

'क्या कह रहे हो राजेश ! हम मनुष्य हैं, हमें जीवन के सुख का लोभ है। विश्व समाज की हम एक कड़ी हैं, फिर भला इससे दूर कैसे जा सकते हैं।

'सम्भव है तुम ठीक कहते हो; लेकिन मेरा मस्तिष्क काम नहीं करता, इसलिए कहता हूं कहीं पागल न हो जाऊं।' राजेश ने कुछ परेशान होते हुए कहा !

विनय मुस्करा पड़ा 'सुलगानेवाले ने तुम्हारे दिल में एक ऐसी चिनगारी सुलगा दी है, कि न उसे तुम बुझा पाते हो और न छिपा पाते हो।'

'क्या मतलब ?'

'साफ है ! प्रेम किया नहीं जाता, हो ही जाता है।'

'यह सब बकवास है, मैं प्रेम-वेम नहीं करता'

'हां यह अक्षर हृदय पर अंकित तो हो गया है, लेकिन अर्थ अभी तुम्हारी समझ में नहीं आया है, इसलिए बकवास समझते हो।' कहते हुए विनय ने व्यंग भरी मुस्कान छोड़ी !

'तो जनाब आपकी समझ में तो आ गया है न !' राजेश भी कहते हुए तनिक मुस्कराया।

'समझ में तो तुम्हारी भी आ गया है लेकिन उल्टा।

अब राजेश कुछ झुंझलाते हुए बोला, 'तुम्हें घटना क्या बताई सर दर्द मोल ले लिया।

'अजी यह घटना ही नहीं है, किसी दिन मोटा ताजा उपन्यास बन जायेगा।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'ओर उसे लिखोगे तुम, यही न'

'हां हां क्यों नहीं, इसमें सन्देह क्या ?'

राजेश ने विषय बदलते हुए कहा, 'चलो कहीं एक एक कप चाय पी जाय 'जरूर जरूर' इतनी देर से विचारा भूखा प्यासा मस्तिष्क छलागें मार रहा था, उसे कुछ ईंधन पानी तो मिलना ही चाहिए।'

ओर दोनों एक रेस्टोरेन्ट की ओर चल दिए ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

९

***

'यह ठीक है मैं कोईन सीहत नहीं दे सकता। फिर भी यह बात रह-रह कर मन में उठती रहती है, कि मैं तुम्हें अपनी कहानी सुना डालूं, ताकि मेरे भटके हुए रास्तों से यदि तुम्हें कुछ मिल जाय तो मुझे सन्तोष होगा। जीवन जो भटक गया कम-कम किसी को अपने भटकने का कारण बताकर सन्तोष की सांस तो पा सका।'

विनय ने साश्चर्य पूछा : 'कहानी या अपने जीवन का सत्य।'

मुस्कराते हुए बाबा बोले : 'मनुष्य जीवन की गत घटनाएं कहानी मात्र ही रह जाती हैं। सत्य तो उनमें लिपटा ही रहता है लेकिन रोचकता तो अभिव्यक्ति में है। इसीलिए मैंने कहानी कहा।'

विनय उत्सुकता से वहीं तख्त पर बैठते हुए बोला : 'आपने मेरे मन की भाषा पढ़ाली, बहुत दिनों से आपके गत जीवन का वृत्तान्त सुनने की अभिलाषा थी, लेकिन समय न मिल सकने के कारण तथा संकोचवश कभी कह नहीं सका।'

'संकोच कैसा' बीड़ी का कश लेते हुए बाबा ने कहा।

'संकोच यही कि आपको सुनाने में कहीं आपत्ति न हो।'

'मनुष्य जीवन का एक क्षण भी जो बीत जाता है फिर नहीं आता, उसकी स्मृति ही शेष रह जाती है। वही क्रम से कहानी है, उपन्यास है। लिखने वाले उसी का चित्रण अपनी भाषा में कर डालते हैं, वह भी सम्भवतः इसलिए कि एक के जीवन से दूसरे को कुछ लाभ हो। मनोवैज्ञानिक क्रियाओं को समझाने का, जीवन के चढ़ाव उतार समझाने का, परिस्थितियों के कुचक्रों को पढ़ने का तथा जीवन को अधिक से

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अधिक उपयोगी और उत्साहपूर्ण बना सकने का उचित मार्गदर्शन हो सके।'

इतना कहते हुए बाबा ने बीड़ी का आखिरी कश लेते हुए उसे बाहर फेंक दिया, और सम्भलकर बैठ गए ! जैसे उनके हृदय का कोई बांध फूट पड़ा हो उन्होंने अपनी कहानी आरम्भ कर दी।

'यह तो तुम जानते ही हो कि मैं बचपन से जुआरी रहा, और मुझे बुराई की ओर खींच ले जाने वाली यही एक लत थी। कदाचित एक बुरी आदत ही मनुष्य को बुराइयों का भण्डार बना देती है। या यूं समझ लो कि जब एक बुराई मनुष्य में अपना घर बना लेती है तो वह तमाम बुराइयों को आने का द्वार खोलकर रखती है ताकि वह अकेली न पड़ जाय, और मनुष्य कभी उसे अपने घर से निकाल सकने में समर्थ न हो जाय। मनुष्य एक बुराई के पीछे ज्ञान और अज्ञान में तमाम बुराइयों में फंसता जाता है।

'मैं बड़ा हूं, लेकिन कोई बड़प्पन नहीं, यहां तक कि मेरी ओर किसी का ध्यान नहीं जाता। अपना कहते हुए भी तुम्हें संकोच होता होगा। और मैं भी उसे उचित ही समझता हूं। मेरे यहां पड़े रहने के दो ही कारण हैं एक तो मेरी लाचारी कि अब कहीं जा नहीं सकता, और दूसरा मेरा हक, जिस वजह से मुझे कोई यहां से भगा नहीं सकता। जिसका कभी कोई घर न रहा हो, कोई अपना न रहा हो उसे मोह कैसा। जीवन के शेष दिन ही मनुष्य के लिए अभिशाप होते हैं। वह किसी भी दशा में इन्हें केवल काटता है, जब कि संघर्षों से पूर्ण जीवन के दो भाग स्वयं ही कट जाते हैं। मेरे विचार से जो स्वयं कटता है, वह मनुष्य को कम अखरता है यदि प्रतिकूल हुआ तो भी, क्योंकि उस समय उसके पास अपना पुरुषार्थ रहता है, किन्तु जो समय इस अवस्था में काटना पड़ता है, वह कठिन है अति कठिन, चाहे सुख के लिए हो या दुख के लिए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'मैंने सब तरफ आकर्षण ही पाया। सत्य कुछ भी नहीं, और यदि कुछ सत्य था भी तो उसे आकर्षण का दूसरा रूप ही कहूंगा। फिर सुख या दुख कैसा। अपने ही स्वार्थों की पूर्ति का ही एक नाम सुख और अपूर्ति का दूसरा नाम दुख कहा जाय, तो मेरे विचार से ठीक ही रहेगा, और यही तो संसार है।'

कहते हुए बाबा के मुखमण्डल पर आत्मविश्वास की सलवटें उभर आईं। अनुभव का विश्वास बल झलकने लगा। वह आगे बोले : 'हां तो मैं यह कहने जा रहा था कि भावज से मेरी कभी पटती नहीं थी। मेरी क्या, वह तो केवल अपनी ही छाया निहारती थीं। भाई साहब के लिए भी उनके हृदय में न कोई श्रद्धा थी, न आदर वैसे सती सावित्री या हड़तालिका व्रत वह भी औरों की तरह बड़े नियम से मानती थीं। मतलब उन्हें जो भी प्रणय के लिए करना पड़ता स्वार्थवश।'

'लेकिन स्वार्थपरायणता तो अधिकांश स्त्रियों में पाई जाती है, और स्त्री क्या पुरुषों में भी' टोंकते हुए विनय ने कहा।

बाबा ने उत्तर दिया : 'दोष एक ही संज्ञा है, पुरुष और स्त्री दो हैं, इसलिए दोष तो दोनों में ही हो सकते हैं, मेरा आशय इस समय भावज के ही विशेष व्यक्तित्व से हैं; अन्य से नहीं। वह ठीक है; बिना स्वार्थ के कुछ भी नहीं, लेकिन अन्तर यह हो जाता है कि एक ओर हम अपने स्वार्थ को सहयोग और सद्भावना से पूरा करते हैं, वहां हमें दूसरों के उपकार का भी ध्यान रखना पड़ता है। भावज में यह बात नहीं थी, उनमें स्वार्थ का बाहुल्य था। उनके जीवन में केवल दो ही प्राणी थे, भाई साहब और तुम्हारे पिता जो कई बच्चों के बाद जीवित रहे थे; फिर ममता तो थी ही।

सबसे कटु वह मेरे ही लिए थीं। मैं तो उन्हें फूटी आंखों भी नहीं सुहाता था। अतः अकारण ही वह बहुधा पैनी छुरी चलाया करतीं, जो मुझे सदा से ही असह्य रही। भाई साहब तो हीरा थे, कोई दुराभाव नहीं, और मुझे तो इतना स्नेह करते थे कि भावज के दग्ध स्वभाव पर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नमक का काम होता था। उनके त्रिया चरित्र से उन्हें भी झुकना पड़ता था। एक दिन मुझे लेकर बात बहुत बढ़ गई और भाई साहब ने घर छोड़कर संन्यास लेने की ठान ली; वह स्वभाव के बड़े हठी थे, संन्यास की बात सुनते ही भावज बरस पड़ी : 'मैं तो पहले ही जानती थी, इस कल मुंहे को हमारी दो रूखी-सूखी रोटियां भी फूटी आंखों नहीं भातीं, निकम्मा, निर्लज्ज, मुंह भी नहीं काला कर जाता जो रोज़-रोज़ का झगड़ा खत्म हो जाय।'

उस रात मुझे नींद नहीं आई, ठीक ही तो कहती हैं, न बीबी न बच्चे, क्या मैं अपना पेट भी नहीं भर सकता। जो मुझे प्राणों से ज्यादा प्यार करे, मैं ही उसके जीवन की शान्ति भंग करता रहूं सिर्फ अपने पेट के लिए, सारे परिवार को क्यों कष्ट पहुंचाउं, इससे अच्छा तो मर जाना ही है। अतः मैं उसी रात वहां से खिसक गया।

घर से बाहर आने का यह पहला ही अवसर था। जेब में पैसे भी नहीं थे। रात भर तो गाड़ी में पड़ा रहा, प्रातः आंख खुली तो लखनऊ पहुंच रहा था।

घर और भाई साहब के बिछोह की भावनाएं लखनऊ स्टेशन पर पहुंचते ही विलीन हो गई। क्या करूं क्या न करूं ? क्या घर वापस चलूं, नहीं मरना, घर जाने से ज्यादा बेहतर है। मैंने नल में मुंह हाथ धोया और एक ओर पड़ी बेन्च पर बैठकर विचारों में डूबने उतराने लगा।

'आपके पास माचिस है बाबू साहब ?' देखा एक सज्जन मेरे पास खड़े माचिस मांग रहे थे।

'जी मैं धूम्रपान नहीं करता' मैंने उत्तर दिया।

'कहीं बाहर से आ रहे हैं आप ?' उन्होंने दूसरा प्रश्न किया !

'जी हां अभी-अभी इसी गाड़ी से आकर उतरा हूं।'

'जाना कहां है ?' उन्होंने पुनः प्रश्न किया।

'अभी कुछ भी निश्चय नहीं कर सका।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'कुछ काम धन्धा करते हैं।'

'तलाश में हूं।'

'नौकरी करना पसंद करेंगे।'

जैसे मुंह की मांगी मुराद हो मेरी उत्सुकता बढ़ गई 'जी हां आप मेरी कोई सहायता कर सकते हैं क्या ?'

'लखनऊ से बाहर जाना होगा, गोरखपुर, तैयार हैं आप।'

'बिल्कुल, गोरखपुर क्या मैं तो भारत से भी बाहर जाने को तैयार हूं इसी समय' मैंने उत्सुक होते तपाक से उत्तर दिया।

'तो उठिए खा पी लिया जाय, फिर बात भी पक्की हो जायेगी' उन्होंने और उदार सहृदयता प्रगटाई।

लेकिन···मुझे कहने में संकोच हुआ, वह तुरन्त बोल पड़े। 'चिन्ता न कीजिए मेरे पास बहुत पैसे हैं। मेरा सेठ बड़ा ही मालदार आसामी है।'

मैंने उठते हुए पूछा, 'आखिर आप काम क्या करते हैं।'

'इस समय तो मैं फैक्ट्री के लिए कामगार ही ढूंढ़ने आया हूं, दो दिन में वापस चला जाऊंगा, तभी आपको भी साथ लेता चलूंगा' मैं उनके साथ चल दिया। कुछ क्षणों में ऐसा प्रतीत होने लगा, जैसे वह मेरे कोई चिरपचित हों। धूर्त और चालबाजों में यह गुण विशेषता से पाया जाता है। जब हम उलझी हुई परिस्थितियों में ग्रसित होते हैं, और कोई स्वार्थी हमारे पास सहानुभूति लेकर आ जाता है, तो उस समय हम उसकी जो भी प्रशंसा करें, थोड़ी ही है। क्योंकि हम ऐसी स्थिति में विवेक हीन हो जाते हैं। उस समय तो वह नहीं, जैसे मुझे स्वयं ईश्वर मिल गया हो, और मैंने सोचा भी यही था। वह किसी का मुंह नहीं बन्द करता, सब काम उसी के हैं, या यूं समझ लो, हम किसी अज्ञात के खिलौने हैं, वह जैसे चाहता है, खेलता है।

गोरखपुर की जगह वह मुझे बस्ती ले गया। वहां मेरा स्वास्थ्य परीक्षण हुआ, तथा मेरा नाम और पता लिखा गया। मुझे भय था

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहीं भाई साहब को सूचना न मिल जाय, इसलिए मैंने नाम और पता दोनों ही गलत बताए, कदाचित यह मेरी पहली समझदारी या चतुरता थी जो आगे चलकर काम आई।

वहां से मुझे कुछ सफर खर्च देकर कुछ अन्य मेरे ही से ग्रहहीनो और लाचारों के साथ रवाना कर दिया गया। हम लोगों के साथ उनका एक निरीक्षक भी था, वह हमें तिनसुखिया तक ले गया। वहां उसने दूसरे निरीक्षक के हाथों सौंप दिया जो आसाम के रिंगरांग प्रदेश तक ले गया। अभी तक किसी भी प्रकार का कष्ट न हुआ था इसलिए मैं इस अप्रत्याशित सुविधा को भगवान की ही देन समझकर उस धूर्त को हृदय से धन्यवाद देता रहा।

विनय ने मुस्कराते हुए प्रश्न किया, 'क्या धूर्त भी प्रशंसनीय है।'

'जब तक धूर्तता अनावरित नहीं होती तभी तक ! फिर वह तो धूर्त ही नहीं, महाअधम, नीच मनुष्य था।'

क्यों ? साश्चर्य विनय प्रश्न कर बैठा।

'इसलिए कि थोड़े से कमीशन के लोभ में उसने मनुष्यता का गला घोट दिया था। अपनी कुशाग्र बुद्धि का दुरुपयोग कर रहा था।' इतना कहते हुए बाबा के चेहरे पर कुछ बल पड़ गए, वाणी में तीक्षणता और वाक्य में रुखा पन दौड़ गया' मनुष्य होकर मनुष्य का व्यापार करता था। उन्हें गुलामी की जंजीरों में जकड़ देता था।'

'लेकिन आप भी तो लोभ बस ही गए थे न !'

'नहीं उसने हमारे भोलेपन का लाभ उठाया था।'

'आप वह लाभ न उठाने देते।'

'बेटा,' यदि इस देश के लोगों में इतनी समझ ही होती तो गोरों का झंडा इतने दिनों तक न फहराया करता। तुम अभी बच्चे हो, मैंने दुनियां देखी है। हमारे देश से अधिक-न्यायप्रियता, आत्मीयता, मनुष्यता और दयालुता से बढ़कर यह गुण किसी भी देश के आदमियों में इतना नहीं पाया जाता। इसी से समझ लो यहां जो भी लोग गुनाह करते हैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह ज्यादातर पेट के लिए, जब कि अन्य सभ्य देशों में वही गुनाह होते हैं, सुरा और सुन्दरी के लिए, निजके सुख के लिए, जुए के लिए। अगर आदमी को यहां दो रोटियां सुविधा से मिलती जायं तो बात-बात में वह धर्मनिष्ट हो जायेगा। लेकिन अब हम जो कहते हैं, असत्य है, क्योंकि हमारी आत्मा को कुचल दिया गया है, और पीढ़ियों से वह अपना अस्तित्व फूल, मुरझाए भूल सी धूल में पड़ी-पड़ी, उस डाल की ओर निहारती रह जाती है, जिस पर कभी वह थी जैसे वे डाली के फूल उस गिरे हुए फूल से कह रहे हों, 'तू कभी था भी कुछ, अगर कुछ होता तो मेरी ही तरह यहां न होता; धूल में गिरता ही क्यों।' इतने में माली ने उसे डाल से तोड़ लिया तो धूल का फूल बोला, 'अब बोल, तेरा क्या होगा।'

उसने सगर्व उत्तर दिया, 'किसी कामिनी की वेणी में महकूंगा।'

'और फिर क्या होगा ?'

'रात भर बहार के साथ किसी के आलिंगन पाश में जकड़ जाऊंगा, चांदनी मुझे देखकर ईर्षा करेगी, कुम्हलायेगी।'

'और फिर क्या होगा।'

'फिर क्या' वह झुंझला उठा, 'तेरा सा कभी न होऊंगा।'

'शाबाश ! जब मैं वहां था, तो मैंने भी यहीं तक सोचा था''...

तभी माली का पांव उस बेचारी की एक-एक पंखुड़ियों के भी चार चार टुकड़े करता हुआ चला गया।

यह सत्य है, हम दो रोटियों पर ही जीवन निर्वाह कर, असत्य, लोभ, और भौतिक सुखों की ओर दौड़ना पसन्द नहीं करते। मेरा लोभ भी किसी वैभव अथवा भौतिक सुख का नहीं था। बल्कि इस समय उदरपूर्ति का गहन प्रश्न था, जिसके लिए मैं संसार के किसी कोने में जाने के लिए तैयार था।'

'हां तो हम वहां पहुंच गए। एक निराला संसार हमारे सामने था' जो नैतिक, व्यावहारिक, धार्मिक या मानवीय किसी भी दृष्टि से इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संसार के समतुल्य नहीं था। लेकिन जब मैंने उस वातावरण में प्रकृति सौन्दर्य की ओर दृष्टि दौड़ाई तो चकित रह गया। वह पर्वतीय श्रेणियां अपनी सदावहार हरियाली के मनोरम, मनमोहक दृश्यावलियों से सदा सुहागिन नवयोवना सी प्रतीत हुई, मैं ऐसा विस्मृत हो गया, जैसे कोई नवयुवक, किसी नवयोवना को अलंकृत, तथा मुस्कराती हुई देखकर ठगा सा रह जाता है। वह सत्य से अनभिज्ञ होता है न, उसे वह आकर्षण प्रिय लगता है, लेकिन वह भी कुछ नहीं केवल एक भ्रम है, किन्तु हमारे विचारों का आवेश या निर्बलता उसे ही सब कुछ समझ बैठते हैं।

यहां मेरा आशय स्त्री से ही है, वह वहां भी थी। श्रमिकों के पास, अधिकारियों के पास और मालिकों के पास। वहां भी उसके वैसे ही बिखरे स्वरूप थे, जैसे हमारे समाज में हैं, वह भी हमारे ही समाज का एक रूप था, लेकिन यहां से बिल्कुल भिन्न, निकृष्ट।

मैं भी इस समाज का एक अंग हो गया था। उस समय मैं उसे छोड़ना भी नहीं चाहता था किन्तु आज तो उसके स्मरणमात्र से ही मेरा हृदय घृणा से भर जाता है।

जिस दिन मैं वहां पहुंचा मुझे कोई काम नहीं करना पड़ा, और मैं दिन भर उस प्रकृति नटी के करतव देखता रहा। विनय ने प्रश्न किया, 'स्त्री तो पुरुष के लिए आदि से आकर्षक ही रही है अब भी है और भविष्य में भी रहेगी, फिर आपके विचार उसके इतने प्रतिकूल क्यों हैं।'

बीड़ी का धुआं छोड़ते हुए बाबा ने उत्तर दिया, 'केवल इसलिए कि स्त्री पुरुष के लिए जो है और उसे जो रहना चाहिए, उसमें अन्तर आ गया है, उसके रूप बदल गए हैं।'

विनय ने फिर पूछा, 'तो आपके विचार से उसको पुरुष के लिए कैसा होना चाहिए।'

गम्भीरता पूर्वक बाबा बोले, 'केवल एक जननी का, वह मर्यादानुकूल और मेरे विचार से उसका सबसे सुन्दर यही उपयोग है, किन्तु

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उसका उपभोग होता है।'

विनय चुप रहा, बाबा ने आगे कहना आरम्भ कर दिया।

'हम लोगों के निवास के लिए, छोटी-छोटी बांस की कोठरियों की कतारें थीं। किसी-किसी कोठरी में चार पांच व्यक्ति रहते थे। जिस कोठरी में मेरा प्रबन्ध हुआ वह बहुत ही गन्दी थी। पानी बरस जाने पर उसमें सीलन रहती थी, टपकने के भी कई रास्ते थे, और चार अन्य व्यक्ति भी वहां रहते थे। एक ही रात में मैं ऊब गया, और दूसरी कोठरी की तलाश करने लगा।

हमारा मेट एक अधेड़ बलिया का ठाकुर था, वह भी वहीं सामने की ओर रहता था। उसके पास दो कमरों वाली कोठरी थी। सामने वाला भाग तो मार्ग पर था, किन्तु पीछे वाले भाग के बाद उस पहाड़ी का ढलान आरम्भ हो जाता था। नीचे एक नदी थी और नदी के पार कुछ खुला हुआ मैदान। मैदान के बाद जंगल आरम्भ हो जाता था।

जब प्रातः मैंने ठाकुर से अपने कष्ट के विषय में बात की तो वह अपने साथ ही रखने के लिए राजी हो गया। उसकी कोठरी में केवल दो ही प्राणी थे, एक तो वह स्वयं और दूसरी उसकी युवा पत्नी। उसकी आयु लगभग अट्ठारह वर्ष की रही होगी। छरहरा तन, कद कुछ लम्बा, रंग गेहुंआ, तथा शरीर पूर्ण सुगठित था। छवि अति सुन्दर तथा आकर्षक थी उसकी जैसी आंखें तो मुझे दोबारा देखने को मिली ही नहीं।'

'ठाकुर लभभग पैंतीस छत्तीस का गठीला नाटे कद का सांवला व्यक्ति था, और कोयले की खदान के कठिन परिश्रम ने उसकी आयु बढ़ा दी थी। रंग भी कुछ गहरा कर दिया था। ठाकुर ने मेरा प्रस्ताव इतनी जल्दी कैसे स्वीकार कर लिया। यह बात पहले मेरी समझ में न आई, लेकिन दो ही चार दिनों में मैं भली भांति समझ गया। एक दिन ठाकुर ने स्पष्ट करते हुए कहा, 'तुम मुझे किसी भले परिवार के मालूम देते हो, कदाचित समय ने ठोकर मार कर तुम्हें यहां ढकेल दिया है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैंने समर्थन करते हुए उत्तर दिया, 'हां ठकुर भाई, बात तो कुछ ऐसी ही है।'

'मैंने भी सोचा तुम मेरे साथ आ जाओगे तो तुम्हारी भाभी को आराम हो जायेगा, जब मैं काम पर चला जाता हूं यह अकेली रह जाती है।' कुछ रुक कर फिर ठाकुर ने सन्देहात्मक ढंग से आगे कहा, 'यहां औरतों का अकेले रहना भी ठीक नहीं है।'

बात तो मैं समझ गया था, फिर भी अनभिज्ञता प्रगटाते हुए मैंने कहा, 'क्यों ?'

मेरे इस प्रश्न ने ठाकुर के हृदय में घर कर लिया। उसने सोचा मैं अभी बहुत भोला हूं, और सांसारिक दुर्गुणों से निर्लेप। अतः उसने समझाते हुए कहा, 'यहां के लोग ठीक नहीं हैं। न तो उनके कोई इज्जत है और न वह दूसरों का ही ध्यान रखते हैं। छोटे से लेकर बड़े तक का घर के मामले में विश्वास करना बड़ी भूल है।'

मैंने तनिक प्रतिवाद करते हुए कहा 'लेकिन ठाकुर भाई, जब हममें कोई बुराई है ही नहीं, तो कोई उंगली उठाएगा क्यों ?'

ठाकुर ने मेरी बात का समर्थन करते हुए उत्तर दिया, 'बात तो तुम ठीक ही कहते हो, लेकिन अब समय बदल गया है, लोग केवल उंगली उठाना जानते हैं भला हो या बुरा। खैर ! धीरे-धीरे सब समझ जाओगे' इसके बाद वह बोले, 'तुम सामान लाकर रख देना, यह रोटी बना दिया करेगी।'

इतने में खदान का भोंपू रेंकने लगा, ठाकुर ने उठते हुए कहा "मैं तो काम पर जाता हूं, तुम अभी आराम कर लो, बड़े बाबू ने तुम्हें रात को काम पर जाने को कहा है' इतना कहते हुए ठाकुर चले गए ! बाबा ने पुनः अपनी अधजली बीड़ी की ओर देखा, वह भी सम्भवतः दास्तान सुनते सुनते सो गई थी अतः मुंह से लगा जगाने लगे। विनय बोला, 'आपका व्यक्तीकरण बड़ा ही सरस है, मैं समझता इतनी रोचकता है तो अब तक कभी सुन लेता।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बाबा ने आधी बीड़ी की दो तीन फूंक मार कर, बाहर फेंक दिया । फिर बोले, 'कहानी रोचक लग रही है किन्तु सत्य बड़ा ही कटु था' 'आप सुनाते जाइए मैं तो आज सुन कर ही उठूंगा' विनय ने अपनी आतुरता प्रगटाई ।'

वह आगे कहने लगे, 'हां तो ठाकुर के जाते ही ठकुराइन जो अभी तक मुंह फेरे बैठी थी, मेरी ओर मुड़ते हुए बोली, 'इन्हें किसी पर विश्वास नहीं होता; फिर भी तुम्हें घर ले आये,' इतना कहते हुए वह किंचित मुस्करा दी ।

मेरा सारा शरीर रोमांचित हो उठा, फिर भी अपने को सम्भालते हुए मैंने उत्तर दिया, 'धोखा सदा विश्वास में ही होता है ।'

उन्होंने पूछा, 'तुम्हारा व्याह हो गया क्या ?'

मैंने कहा, 'अभी नहीं, और मैं व्याह करूंगा भी नहीं।'

वह प्रसन्न होते हुए बोली, 'यह भी ठीक है, फिर तो हम तीनों खूब आराम से रहेंगे ।'

साश्चर्य, मैं पूछ बैठा, ऐसा क्यों ?'

वह निःसंकोच बोली, 'अरे, यह भी नहीं समझते, बड़े भोले हो, जब घर का मोह न होगा, तो भागोगे भी नहीं; यहां से लोग बहुधा भाग जाते हैं । अगर पकड़ गए तो बड़ी मरम्मत होती है ।'

मैंने उपेक्षित होते हुए कहा, 'होती होगी, मुझे कौन भागना है, और भागूंगा भी तो जाऊंगा कहां; मेरा है कौन ।' इतना कहते हुए मेरे मुख पर अनायास ही उदासीनता उभर आई, वह आश्चर्यचकित हो पूछ बैठी, 'क्यों ? क्या तुम्हारे कोई नहीं, मां-बाप, भाई-बहन,' इतना कहते हुए उनका स्वर संवेदना में डूब गया ।

'मरा ही समझो' मेरे मुंह से निकल गया, और मेरी आंखें भर आई । वह क्षण भर में उठ कर मेरे समीप आ गई, उनके हृदय से करुणा उमड़ पड़ी, अपने आंचल से मेरे आंसू पोंछते हुए बोली, 'बुरे दिनों में कोई साथ नहीं देता ! इतना अधीर क्यों होते हो; अब हम तो तुम्हारे ही हैं' उनकी सहृदयता से लगा, मानो मेरी चिरपरिचित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हो, अपनी हों। इतने में हवा का एक झोंका आ गया और उनका आंचल सरक गया। भरे, उभरे हुए शरीर पर मेरी दृष्टि एक पल को जा पड़ी, फिर उनके चेहरे पर, उन्होंने आंचल सम्भालते हुए मुस्करा कर कहा, 'यहां मौसम बड़ा अच्छा रहता है, घड़ी में धूप, घड़ी में पानी, तुम्हें कैसा लगता है।'

'अच्छी चीज अच्छी ही लगती है' अकारण ही मैं उत्सुकता से भर गया।

बाहर फुहार गिरने लगीं; उन्होंने बाहरी द्वार बन्द कर दिया। उस कोठरी के पीछे दो खिड़कियां थी। एक खिड़की पर वह जाकर खड़ी हो गई और बोली, 'यहां आकर देखो कितना अच्छा लगता है।'

मैं भी उठकर दूसरी खिड़की पर जा खड़ा हुआ। वहां से पहाड़ी का ढाल शुरू होता था। सुदूर तक हरियाली बिछी थी, सामने सघन वन की ओर इशारा करते हुए वह बोली, 'हम यहीं जाते हैं, लकड़ियां लेने; देखो कितना सुन्दर लगता है यह सब। पगली सी बड़बड़ाती हुई यह नदी, यह दूर तक बिछा हुआ हरा हरा घास का गलीचा, इधर भी हरा हरा, उधर भी हरा, उधर भी हरा, और बीच में यह नदी न होती तो कितना लम्बा सा हो जाता यह गलीचा।'

मैं भी उस वास्तविक प्रकृति सौन्दर्य को देख मुग्ध रह गया। मेरे मुख से भी निकल गया, 'नदी तो बड़ी ही सुन्दर है, जैसे इस प्रकृति सुन्दरी की मांग की एक चिरस्थाई रेखा, जिसने उसे सदा के लिए सुहागिन बना दिया हो।' इतना कहते हुए मैंने उनकी ओर देखा, वह मुझे अति सुन्दर तथा आकर्षक प्रतीत हुई। मुझे अपनी ओर देखते देख कुछ लजा सी गई, फिर मुस्कराते हुए मेरी बात को अनसुनी कर बोली, 'तुम्हें अच्छा नहीं लगता क्या ?' इस बार मैंने भी किंचित मुस्कराते हुए उत्तर दिया, 'मुझे तो दोनों ही अच्छे लग रहे हैं, कभी तुम और कभी यह हरा हरा गलीचा।' आश्चर्य प्रकटाते हुए, वह मेरी खिड़की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर आती हुई बोली, 'मैं भी तुम्हें अच्छी लगती हूं क्या ?'

मेरा रोम रोम जैसे अंकुरित हो उठा हो, मैंने धीरे से पूछा, 'मैं तुम्हें अच्छा नहीं लगता क्या ?'

इस पर वह तनिक लजाती हुई मुस्करा कर बोली, 'कहीं बूढ़े ने सुन लिया तो' इतने में खिड़की से हवा ने आकर उनका आंचल पुनः खींच लिया, मुस्कराते हुए वह सम्भालने लगी।

कुछ देर हम दोनों चुप रहे। फिर उन्होंने कहा, 'चलो रोटी खा लो।'

अभी तो सवेरा हुआ है। मुझे कौन काम पर जाना है। तुम्हें लगी हो तो खा लो। मैं जरा इस गलीचे की सैर कर आऊं।' इतना कहते हुए मैं बाहर की ओर चल दिया।

वह और पास आते हुए बोली, 'जब तुम खाओगे, तभी मैं भी खाऊंगी जरा जल्दी आना।'

चलती बार पुनः उन पर मेरी दृष्टि जा पड़ी, वह किंचित मुस्कराई कुछ रोमांच हुआ, कुछ आवेश आया, कुछ मैं भी आगे बढ़ा, फिर सोचा अभी तो परिचय के चार दिन भी नहीं हुए। किन्तु मेरी इस क्रिया से वह लेशमात्र भी विचलित नहीं हुई। मेरा उनकी ओर बढ़ना उन्हें अच्छा लगा, किन्तु लौट पड़ना; नहीं कह सकता, क्योंकि बाहर आते समय पलट कर देखने का मुझे साहस नहीं हुआ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

***

मैं झोपड़ी से बाहर आ गया । किन्तु मानसिक पटल पर एक एक बात अंकित होने लगी । ठाकुर को इस खदान में काम करते हुए लगभग अट्ठारह वर्ष बीत चुके थे, जिसमें सत्तरह वर्ष उसने एक कठोर तपस्वी की भांति श्रमिक जीवन व्यतीत किया था। खदान अधिकारियों के अत्याचार सहे थे, किन्तु पिछले वर्ष से वह मेट हो गया था। तभी उसे एक माह की छुट्टी मिली थी। ठाकुर जानता था कि मुसीबत के दिन बीत चुके हैं, अतः छुट्टी पर से वापस न पहुंचना मूर्खता होगी। देश से, वह विवाह भी कर लाया था। अधिक जानकारी तब तक मुझे नहीं मिल पाई थी।

वहा पहुंचने पर चौबीस घन्टे मैंने जिस कोठरी में बिताये थे वहां के सभी लोग, तब तक कुवांरे ही थे, और किसी न किसी से सम्बधित थे। मैं समझता हूं कि इसमें उनका दोष नहीं था। वहां का वातावरण ही दूषित था, घृणित था। दूषित वातावरण में पड़ कर जो मनुष्य अपने को उसके प्रभाव से बचा ले, उसे महान ही समझना चाहिए। निरन्तर पड़ने वाला वातावरण का प्रभाव मानवीय मनोविज्ञान को अवश्य प्रभावित करता है, और साधारण व्यक्ति अपनी सुरक्षा नहीं कर पाता। अतः दूषित वातावरण में पलने वाले से, हम कभी कोई ऐसी आशा कर ही नहीं सकते जो उनके चरित्र या व्यक्तित्व को सम्भाल सके या उठा सके। तुम उन बुराइयों को जितना अच्छी तरह न समझ सकते हो; न सोच सकते हो, उससे कहीं ज्यादा अच्छे ढंग से वे उनको सोच कर, समझ कर, वैसी ही क्रियाएं करते हैं। उन्हें उससे बाहर झांकने का अवसर ही नहीं मिलता, या सोचना ही नहीं चाहते। वह अपनी पाश्विक मनोवृत्तियों को तुम्हारी मानवीय मनो-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वृत्तियों से श्रेष्ठ न होते हुए भी, श्रेष्ठ समझते हैं। श्रमिक तो बेचारा साधरण पात्र था वहां का अधिकारी वर्ग भी अपनी काम पिपासा बुझाने के लिए घृणित से घृणित कर्म करने में जरा भी नहीं हिचकता था।

किसी स्त्री से सम्बन्ध न रखने वाला वहां मूर्ख था, और अधिकारियों तक किसी स्त्री को ले जाने वाला बुद्धिमान, तथा सराहनीय। इस काम के लिए लगभग प्रत्येक अधिकारी के पास दो चार श्रमिक तो सुनिश्चित थे ही; क्योंकि उन्हें विशेष सुविधाएं प्राप्त हो जाया करती थीं।

विनय ने उत्सुकता से पूछा, 'यह स्त्रियां आया कहां से करती थीं।'

'कई साधन थे, कुछ तो पास के पहाड़ी गावों के निर्धन परिवारों से, कुछ श्रमिक और लिपिक वर्ग के घरों से, और कुछ ठाकुर जैसे अधिकारियों के यहां से!'

'जब स्त्रियां अधिक थीं, तो उनके लिए अवांच्छित कर्म क्यों अपनाए जाते थे।' विनय ने पुनः प्रश्न किया।

'इसलिए कि व्यक्तिगत दृष्टिकोणों से सबकी रुचियां भिन्न थीं। और स्त्रियों में भी आकर्षण अपना ही अपना होता है न।'

विनय ने प्रतिवाद किया, 'इससे तो यह स्पष्ट हुआ कि स्त्री नहीं आकर्षण प्रिय था।'

बाबा कुछ मुस्कराकर बोले, 'बात ठीक है, स्त्री में भिन्नता नहीं होती; आकर्षण ही भिन्न होता है। यहां पर मेरी और तुम्हारी समझ में थोड़ा-सा यही अन्तर है। वास्तव में मैं इस आकर्षण को आडम्बर समझता हूं, भ्रम, मनुष्य का एक चिर रोग। अन्तर स्त्री में नहीं हमारे विचारों में, हमारी रुचियों में, प्रसाधनों में है। यह भ्रम है; विनय! यह मनुष्य के लिए इतना भयंकर तथा आपत्ति कारक है कि वह अपनी रक्षा नहीं कर पाता। अपने सर्वनाश के द्वार स्वयं खोल लेता है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वावा ने बीड़ी का एक कश लेते हुए आगे कहा, 'आकर्षण और सत्य दोनों में बड़ा फर्क है, आज का युग आकर्षण की ओर दौड़ रहा है सत्य की ओर नहीं। आकर्षण का लोभ मनुष्य से संवरण नहीं हो पा रहा है।'

'खैर इन वातों से हमें क्या प्रयोजन, और उस समय मेरा ध्यान भी इस ओर न जा सका। एक तो प्रकृति सौन्दर्य का प्रभाव और उस पर ठकुराइन के आकर्षण का अंकुरण; हां एक बात स्पष्ट हो गई थी, ठाकुर ने मुझे उनका रक्षक समझ कर ही रखा था; किन्तु मैं भी आकर्षण और वातावरण के प्रभाव में अपने पांव मजबूती से नहीं गड़ा पाया।'

मेरी अवस्था उस समय लगभग बीस की रही होगी। स्वास्थ्य भी ठीक ही था, और तब तक स्त्री के इस आकर्षण संयोग से भी बचा हुआ था। मेरा व्यसन जुवा था, और यहां भी मैं अपने साथियों को खोज निकालना चाहता था। किन्तु श्रमिकों के पास न तो इसना समय था और न पैसा। फिर मैं भी नया था, सोचा जब कुछ दिनों काम पर जाऊंगा तभी परिचय बढ़ेंगे।'

विनय ने प्रश्न किया, 'उस खदान के विषय में पहले आपने कोई जानकारी नहीं हासिल की थी।'

'नहीं! क्योंकि मेरे साथ एक मजबूरी थी विनय! मैं भूख से अंधा था, मुझे रोटी की आवश्यकता थी। भूखे के सामने केवल रोटी का ही प्रश्न रहता है, लेकिन पेट भर जाने पर उसका मस्तिष्क बिगड़ जाता है तब वह सभी ओर लपकता है। विशेषत: शारीरिक भूख की ओर और संसार की तमाम गतिविधियां उसे उलझा देती हैं। मेरे विचार से आदिकाल के मनुष्य आज से अधिक सन्तुष्ट और सुखी होंगे। तब प्रत्येक स्त्री पुरुष को स्वत: रोटी अर्जित करनी पड़ती होगी; उसके लिए उसे भटकना भी पड़ता होगा। स्त्री और पुरुष का संयोग प्रकृति का अक्षय नियम है, अत: वह जहां भी मिलते होंगे या

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अवसर पाते होंगे, अपनी कामाग्नि शान्त कर लेते होंगे। उस समय मनुष्य का यह उद्देश्य न होगा कि उसे एक स्त्री की आवश्यकता है। परन्तु कालान्तर में जब रोटी की समस्या हल हुई होगी, तब स्त्री ही सामने आई होगी। उसके साथ ही विलास के नये-नये उपक्रमों ने भी जन्म लिया होगा। आज हम जिस समाज को देखते हैं, यह उसी का परिवर्तित स्वरूप है। जब स्त्री एक समस्या के रूप में होगी तब भी उसे ऐसे ही घृणित, निन्दनीय उपक्रमों से काम लेना पड़ता होगा, वह उपक्रम अब भी उसमें पाये जाते हैं, यद्यपि उनका स्वरूप बदल चुका है। फिर भी इन वर्तमान मानवीय क्रियाओं से आदिकाल की पुष्टि तो होती है। जरा तुम विचार करो विनय, मनुष्य आज अपने को सभ्य कहता है, यह कहां तक सच है। क्या आज की सारी सभ्यता थोथे आडम्बरों तक ही सीमित है।

इसलिए मैं इस बात से सहमत नहीं हूं कि हम सभ्य हैं। हां हम में से कुछ सभ्य होंगे। जैसे कि मध्यकाल में कुछ सभ्य लोग थे। वे आज भी जीवित हैं क्योंकि उनकी सभ्यता से ही हमारा आडम्बर चलता है। या समझो हमारा जीवन है!

थोड़ी देर में इधर-उधर घाटी में घूमता रहा। रात भर काम करने के बाद किसी भी श्रमिक में इतनी शक्ति न रही होगी जो दिन का आनन्द उठा सके, लगभग सभी झोपड़ियों के द्वार उढ़के हुए थे; यदि एक-आध खुला भी था, तो लोग भोजनादि की व्यवस्था में व्यस्त थे।

अतः मैं बस्ती से बाहर, पहाड़ी के ढलान से उतरता हुआ नदी तट पर जा पहुंचा। नदी का जल स्वच्छ था, एक-एक कंकड़ पत्थर जो भी थे स्पष्ट दृष्टिगत हो रहे थे। वह गहरी नहीं थी, इसलिए उसके प्रवाह में उच्छृंखलता थी, वह तो जल था संज्ञाहीन, मैं तो आज मनुष्य को भी उतना ही छिछला गतिशील समझता हूं। जैसे उसका आकर्षण वे सदा बहार वन और घास ले हरे गलीचे थे। वैसे ही हमारे पास भी चेहरों और वस्त्रों का आकर्षण है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वातावरण बहुत ही शान्त और मनोरम था, किन्तु वहां का सौंदर्य एक रूपवती विधवा स्त्री सा ही था। मैं नदी के किनारे-किनारे ठाकुर की कोठरी की ओर बढ़ने लगा।

ऊपर की ओर दृष्टि गई तो ठकुराइन को खिड़की पर खड़े पाया। मुझे अपनी ओर देखते ही उन्होंने लौट आने का इशारा किया। मैं धीरे-धीरे वहीं से ऊपर चढ़ गया। मुझे अपने पास देख वह खिल उठीं, 'जब से तुम नदी किनारे पहुंचे हो, मैं तुम्हारी ही ओर देख रही थी, मुझे विश्वास था तुम इधर ही आओगे।'

मैंने कहा, 'ऐसा ही क्यों सोचा, 'मैं उधर भी तो जा सकता था।'

इस पर वह किंचित मुस्करा कर बोली, 'पता नहीं ऐसा ही क्यों सोचा; अच्छा अन्दर आ जाओ!

मैं वहीं से कूद कर कोठरी में पहुंच गया।'

'खाना परोस दूं अब तो भूख लगी होगी!' उन्होंने पूछा।

'भूख तो नहीं सी है, फिर भी तुम्हारा कहना कैसे टाल सकता हूं।' इतना कहते हुए मैं हाथ मुंह धोने के लिए चल दिया, और वह रसोई में चली गईं।

उन्होंने बड़े ही स्नेह से थाली लगाई, जब मैं भोजन करने बैठा, तो पंखा करने लगीं।

गर्मी तो नहीं थी, पर मक्खियां अधिक थीं, फिर भी मैंने पूछ ही तो लिया, 'क्यों कष्ट उठा रही हो, कौन सी गर्मी पड़ रही है?'

उन्होंने किंचित मुस्करा कर कहा, 'तो मैं अपना काम न करूं, मक्खियां जो हैं।'

मैं समझता था निरी मूर्ख होगीं, किन्तु अब तक के वार्तालाप से यह स्पष्ट ही हो गया; वह कुछ पढ़ी-लिखी भी हैं, मैंने पूछा भी, 'आप कुछ पढ़ी भी हैं?'

'हां! मेरे गांव में एक प्राइमरी स्कूल था, वहीं से चौथी पास किया है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उत्तर देते हुए उन्होंने एक रोटी मेरी थाली में बढ़ाई, मैंने कहा, 'बस-बस, अब नहीं लूंगा।'

'बस एक ही और ले लो!' इतना कहते हुए उन्होंने गोरी-गोरी कलाई थाली तक बढ़ा ही दीं। अब मुझसे न रहा गया, चट से कलाई पकड़ते हुए मैंने कहा, 'अब मुझसे एक कौर भी खाया न जायेगा।'

वह किंचित मुस्कराते हुए बोल पड़ीं, 'एक कौर भी न खाया जायेगा।'

मैंने कलाई छोड़ दी। सारे शरीर में एक अद्‌भुत प्रकम्पन की लहर सी दौड़ गई, मैं कुछ संकुचित सा हो गया, फिर भी अपनी बात को पुष्ट करने के लिये बोला, 'हां एक कौर भी न खाया जायेगा, मैं सच कहता हूं।'

उन्होंने चट से एक कौर तोड़ते हुए मेरी ओर बढ़ाकर कहा, 'अच्छा एक कौर मेरे कहने से मुंह में रख लो, न खाया जाय तो थूक देना।'

मेरा मुंह अनायास ही खुल गया, और मुंह में कौर लेते हुए मैं चुप रह गया। वह बोली, 'कुछ बोलो तो, चुप हो गये।'

मैंने एक बार उनकी ओर दृष्टि डाली, देखा उनके नेत्रों से यौवन की तृष्णा झांक रही थी, कदाचित निराश हृदय में आशा के अंकुर से प्रस्फुटित हो रहे हों। मेरी दृष्टि झुक गई।

मैं उठकर हाथ मुंह धोने लगा, किन्तु पीछे से वह भी आ गई, और हाथ पोंछने के लिए अपना आंचल बढ़ा दिया। भरा पूरा शरीर एक बार पुनः मेरी दृष्टि में पड़ गया, पुनः सारा शरीर प्रकम्पित हो उठा, मेरा रोम-रोम जैसे मेरे बस के बाहर हो, एक बार उनकी ओर दृष्टि गई, वह मुस्करा पड़ी। आकर्षण मुझे दबाता ही जा रहा था, फिर भी मैं अपने को सम्भालता हुआ खाट पर जा पड़ा।

बाहर पानी की फुहार फिर पड़ने लगी थीं, बीच-बीच में वायु के मन्द झकोरों के साथ, बौछार की दो चार बूंदे भी वहां तक आ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जाती थीं। बाहर का द्वार बन्द था ही, उन्होंने खिड़की बन्द करते हुए कहा, 'जरा भी पानी पड़ता है तो सारी कोठरी भीग जाती है।'

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया।

वह मेरे समीप आकर फिर बोली, 'उठो; जरा बिस्तर सम्भाल दूं।'

मैं विचारों में मानसिक सन्तुलन लाने की चेष्टा कर रहा था, किन्तु वह जितना ही पास आती जाती, मैं अपने को असमर्थ पाता जा रहा था मैंने अपने को सम्भालते हुए कहा, 'आप भोजन कर लीजिये; मुझे जरा सी देर चुप पड़ा रहने दीजिए।'

इतने ही में वह खाट पर बैठते हुए बोली, 'मेरी चिन्ता न करो, मुझे कौन काम पर जाना है, पहले तुम आराम से लेट रहो, 'इतना कहते हुए मुझे करवट बदलने का संकेत देने के लिए, उन्होंने अपने दोनों हाथ मेरे कन्धों पर रख दिये।

मैं अनियन्त्रित हो गया, करवट बदल कर मैंने उनकी दोनों बाहों को पकड़ते हुए कुछ कहना चाहा, आवेश है, उन्माद है, एक संकल्प का झटका सा लगा। फिर उनकी ओर देखा, कपोलों पर लज्जा की अरुणिमा दौड़ गई, अधरों पर मौन निमंत्रण थिरक उठा, तथा तन के शैथिल्य समर्पण से मेरे दोनों हाथ बोझिल हो गए।

मेरे हाथों से उनकी बाहें छूट गई, और लज्जा के बन्धन दो क्षण में टूट गए।

लगभग चार बजे मेरी आंख खुली, ठकुराइन गृहकार्य से निवृत बैठी कुछ सी रही थी। मेरे करवट बदलते ही लज्जा से भीगी-भीगी पलकें उठाकर उन्होंने मेरी ओर देखा। मुझे ऐसा अनुभव हुआ, मानो वह मेरे बहुत पास है, मेरी वेदना को हलका करने का मंत्र हैं, मेरे निराश जीवन की आशादीप हैं, एक मेरा ही अंग हैं। एक आशा सी मेरे हृदय में अंकुरित हो, मेरे होठों पर खेल गई उन्होंने कनखियों से देख किंचित मुस्कराते हुए समर्थन किया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पश्चाताप की एक लहर आई भूल रहा हूं। किन्तु विचारों के झंझावात में ऐसी विलीन हो गई, जैसे सागर में ज्वार के समय एक लहर आकर असंख्य लहरों में विलीन हो जाती है। अस्तित्वहीन हो जाती है। मैंने अपना सन्देह मिटाते हुए पूछा, 'कुछ भूल हो गई क्या ?'

उन्होंने अनसुनी करते हुए उत्तर दिया, 'एक नींद और सो लो, अभी देर है।'

मैंने पुनः अपनी बात दोहराते हुए कहा, 'यह आवेश था, उन्माद था ' ' 'उन्होंने बात काटते हुए कहा, 'हवा जरा तेज है, पानी भी बड़ी जोर का गिर रहा है। कुछ सुन नहीं पड़ा' और किंचित मुस्करा दीं।

मैंने करवट बदल ली।

वह तुरन्त उठकर मेरे पास आ गई और बोली, 'क्या कहते थे, सच, मैंने ठीक से सुना नहीं था।'

'कुछ नहीं, जो कहा था वह भी भूल गया, लेकिन यह अच्छा नहीं हुआ।'

मैंने उसी करवट पड़े-पड़े कह दिया।

जैसे मैंने चोरी की हो, या किसी के घर डाका डाला हो, लेकिन उस समय मैं यह अनुभव नहीं कर सका, किन्तु अब यह अवश्य कह सकता हूं, वास्तव में यह बात थी लज्जाजनक ही, चोरी ही थी, डाका ही था, किसी के विश्वास पर या अपनी आत्मा पर, क्योंकि मेरी हार थी। स्त्री सदा से ही पुरुष की इस कमजोरी का लाभ उठाती रही है, और वहां भी उसी की जीत हो गई। मेरे विचार से ऐसी भावुकता पर, ऐसे आवेशों पर विजय पाने पर ही पुरुष के लिए गौरव पूर्ण बातें कही जा सकती है। किन्तु यह सब मेरी छाया से भी दूर था। वह खाट पर बैठ गईं, मेरे कन्धों पर अपना सर टेकते हुए बोली, 'नाराज हो गए क्या ? तुम मुझे बड़े अच्छे लगते हो, जैसे तुम्ही एक मेरे अपने हो।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'लेकिन, मुझे यहां आये अभी दिन ही कितने गए हैं।'

'यह मैं कुछ नहीं जानती, मैं तो पहले ही दिन तुमको देखते ही खो सी गई थी। तुम चाहे न मानों, पर जब से तुम आये हो मुझे ऐसा लगता है, मानो इस वन में बहार आ गई हो; इस पहाड़ी पर स्वर्ग हो गया हो, जैसे यह झोपड़ी महल बन गई हो, मैं सुहागिन हो गई हूं। लेकिन डरती हूं, तुम यहां की कठिनाइयों से डर कर भाग न जाओ।'

अन्तिम शब्दों पर उनके स्वर में एक पीड़ा सी उभर आई, तथा आंखों में आँसू झलक पड़े। मैंने करवट बदलते हुए कहा, 'लेकिन मैंने तो सुना है यहां से भागना असम्भव है।'

उन्होंने आंचल से आंसू पोंछते हुए कहा, 'ठीक ही सुना है, लेकिन भागने वाले को कोई नहीं रोक पाया।'

तुम रो क्यों रही हो, मैं भागूँगा भी तो जाऊँगा कहाँ, मेरा है कौन' मैंने सान्त्वना देते हुए कह दिया।

किन्तु उनकी आंखें डब डबा आईं, 'क्या मुझे भी अपना नहीं समझते मेरे पास अब और क्या है, जो तुम्हें दे सकूं।'

'ओफ, कितनी ना समझ हो तुम' मेरे मुंह से निकल गया। मैं चुप हो गया। सभी के पास एक लज्जा का आवरण ही तो अमोल है वही उसने उतार दिया, तो वह क्या नहीं कर सकती, यह समर्पण था, वासना, तृप्ति का उपक्रम या अज्ञानता बस उसने मेरे आवेश को मेरी इच्छा समझा हो, मुझे प्रसन्न करने का यही एक उपाय सोच पाई हो; लेकिन तन देने से मन की गहराई का पता पाना तो अनिश्चित है स्त्रियां बहुधा तन के प्रलोभन से पुरुष का सर्वनाश ला खड़ा करती हैं। यह तो उनके तन और मन दोनों से अधिक सर्वनाशी है।

'क्या ? सोचने लगे बाबू' उसी स्थिति में उन्होंने कहा। मेरे करवट बदल लेने से उनका सर अब मेरे वक्षस्थल पर था।

'कुछ नहीं' मैंने अपने भाव छिपाते हुए कहा, 'अब तो समय हो गया, उठूँ।' कहते हुए मैंने उनके सर को उठाने की, चेष्टा की उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मुख उठा लिया, फिर वही मुस्कान अधरों पर थिरक उठी, 'कह दो, नाराज नहीं हो।'

जिससे मैं अभी तक अछूता रहा, दूर रहा, उसने भी मुझे अपने गले लगा लिया। आकर्षण मुझे ले डूबा! मुझे ही क्यों? मैं कोई विशेष व्यक्ति तो हूं नहीं, एक साधारण सा निम्नतम कोटि का व्यक्ति हूं अतः मेरे विचार से तो मैं समय और यौवन का आखेट था, मैं उसके लक्ष्य से अपनी रक्षा नहीं कर सका। क्या ऐसी स्थिति में कोई अपनी रक्षा कर सकने में सफल हो सकता है। यह भी हमारी कमजोरी ही है। हम अपने ही नियमों का पालन नहीं कर पाते और प्रकृति तथा परिस्थिति को दोष देते हैं। लेकिन उसके नियम कितने सत्य, कठोर और अकाट्य हैं। किसी न किसी रूप में हमें उनका आखेट होना ही पड़ता है। जिसे हम परिस्थिति के सर मढ़ कर अपना दोष अपनी कमजोरी छिपा लेते हैं। फिर भी कहना पड़ता है, जिस सभ्यता का हम ढोल पीटते हैं, उसके भी नियम हैं और उसके पालन करने में ऐसी परिस्थितियों का जाल, प्रकृति के नियम, प्रतिक्षण हमारी राह में पड़ते ही रहते हैं। यदि हम अपनी रक्षा नहीं कर सकते, अपनी कमजोरी से नहीं लड़ सकते तो प्रकृति और परिस्थिति को दोषी ठहराने का भी हमें कोई अधिकार नहीं है।'

'तो क्या आप समझते हैं, मनुष्य प्रतिकूल परिस्थितियों में भी लड़ कर अपने लक्ष्य तक जा सकता है। परिस्थित का कोई प्रभाव उस पर नहीं पड़ेगा।' विनय ने गम्भीरता से प्रश्न किया।

बाबा ने सम्भल कर बैठते हुए कहा, 'पड़ सकता है। और पड़ता भी है। किन्तु हम उन प्रतिकूल परिस्थितियों की बात नहीं करते, जहां मनुष्य की सम्पूर्णशक्ति का ह्रास हो जाता है या परिस्थितियों में वह इतना लाचार हो जाय कि वही करना पड़े जो उसे नहीं करना है। क्यों कि वह उनसे दूर नहीं जा सकता। परिस्थितियों के कुचक्र में पड़ कर जिनकी रक्षा करना चाहता है, वही उसकी भूल है। रक्षा तो विचारों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की, सिद्धान्तों की, ध्येय की तथा कर्तव्य की करनी है, जो अजेय, अमर, और अमिट हैं। हमारा अस्तित्व हैं । इसीलिए मेरे विचार से परिस्थितियों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि वास्तव में हम भय तथा अपनी कमजोरी को परिस्थिति के गले मढ़कर सत्य से दूर हट जाते हैं। जिन्हें जीवन का मोह नहीं होता, जिनके हृदयों पर आकर्षण का आवरण नहीं पड़ने पाता उनके लिए परिस्थितियाँ कुछ नहीं,' भारत के राजपूती इतिहास में यही एक गौरव की बात रही है।

खदान की सीटी बजने लगी, और मैं उठकर चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

११
***

आकर्षण में हम जिस उल्लास पूर्ण जीवन की कल्पना करते हैं, उसका सत्य स्वरूप यदि हमारी कल्पना के विपरीत होता है तो आकर्षण के साथ-साथ जीवन का उल्लास ही क्या सभी कुछ बदल जाता है। विनय ने सोचा था विवाह की आवश्यकता है, उल्लास पूर्ण जीवन होगा, लेकिन उलझनें दिन प्रति दिन बढ़ती गईं। श्रीमती जी मायके से वापस तो आ गईं, बिल्कुल बदल कर, जो शालीनता तथा मौनता पहली बार साथ लाई थीं, इस बार घर पर ही छोड़ आईं। हां, उसका प्रभाव कुछ उन पर शेष रह गया हो, नहीं कहा जा सकता।

विनय नौकरी की तलाश में दिन भर सड़कें नापता और सन्ध्या में राजेश के साथ कुछ समय मत्था पच्ची करता। बहुधा उसे आने में देर हो ही जाती, आज कुछ देर अधिक हो गई थी। ग्यारह बज चुके थे बाबा बाहर ही बरामदे में ही तख्त पर बैठे बीड़ी सुलगा रहे थे, विनय को देखते ही बोले, 'बड़ी देर कर दी।

'आज जरा देर हो गई, राजेश ने रोक लिया था' कहता हुआ वह ऊपर चढ़ गया।

पास की फैक्ट्री ने साढ़े ग्यारह का घन्टा बजा दिया। श्रीमती जी की आंख लग गई थी, उन्होंने विनय का आना नहीं जान पाया। इन दिनों वह बहुत ही परेशान रहता था। श्रीमती जी को जगाने का साहस नहीं कर सका, चुप चाप कुर्सी पर बैठ कर कलम उठा लिया, 'यही जिन्दगी होती है क्या ? राजेश रोता इसलिए है कि जिस बन्धन से वह मुक्त रह कर अपने मार्ग को स्वतन्त्र तथा एकाकी रखना चाहता है, किन्तु किसी न किसी परिस्थिति में वह उलझता ही जाता है, और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समझता है यह सब किसी का अभिशाप है। गलत है, बिल्कुल गलत ऐसे श्राप तो उसके पास बहुत होंगे। संभव है दूसरों में और कामिनी में अन्तर रहा हो वास्तव में कामिनी के हृदय पर राजेश की भावनाओं का वज्र टूट पड़ा हो, और उसके मुख से ऐसा निकल गया हो। जो बात हृदय की गहराई से उठ कर निकलती है उसमें सत्य होता है, उसके आघात से मनुष्य अपनी रक्षा नहीं कर पाता, दिन रात वह उसके विचारों में जीवन के उलझे क्षणों में व्यक्तित्व में पैठ जाती है, वह उसे निकाल फेंकने में असमर्थ हो जाता है, जैसे अंग के किसी मांसल में गहराई तक पहुंच कर शूल टूट कर अखरता रहता है, ठीक उसी प्रकार कटु आलोचित सत्य उसे संतापित करता रहता है।

लेकिन मेरे साथ क्या है। मैं क्यों उन कड़ियों से परतंत्र हो गया हूं जिनसे कभी छुटकारा नहीं। सोआ था जिन्दगी मिलेगी, लेकिन मिली मौत, वह भी ऐसी नहीं जो छुटकारा दिला दे, बल्कि तड़पा-तड़पा कर वेदना की असह्य ठोकरों में, मानसिक झंझावात के झकोरों में हिला-हिला कर धीरे-धीरे प्राणों को हरे पौदे की भांति सुखा देना चाहती है।

मैं जीवन में अपने अनकूल बहार चाहता था, लेकिन भाग्य को अक्षेपित कर, अपनों के स्वार्थ ने उसका रुख ही बदल दिया। और श्रीमती जी जो अब तक प्रगाढ़ निन्द्रा का आनन्द ले रही थी, करवट बदलते हुए उठ कर बैठ गई, 'कितनी देर हुई आये ?' उन्होंने प्रश्न किया।

'यही लगभग दो घन्टे' विनय ने कुछ समय छिपाया।

'दो घन्टे कैसे ? साढ़े दस तक तो मैं जागती रही हूं' उन्होंने प्रतिवाद किया 'बस इधर तुम्हारी आंख लगी उधर मैं आया।'

'हूं, आपको जरा भी घर का और मेरा ध्यान नहीं रहता आखिर कभी यह भी सोचा करो, मैं अकेली कैसे समय काटा करूं, जी ऊब जाता है।'

'जब फुर्सत मिले, बस सो जाया करो' विनय ने तनिक परिहास

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किया । अब उनकी त्योरियों पर कुछ बल पड़ गए, 'ताकि आप रात-रात भर निकम्में दोस्तों के साथ घूमें और मौज उड़ाएं, ऐसे काम नहीं चलेगा, अगर कल से दस के बाद घर आये तो यहीं सर पटक-पटक कर जान दे दूंगी ।' बारूद के अनार सी आग जोश में निकली और शान्त हो गई । 'बस' बड़े ही निःसंकोच भाव से विनय ने कहा, 'जान लेना और देना तो बहुत ही आसान काम है, जिन्दा रहने और रहने देने की बात सोचो' बात उनकी समझ में नहीं आई क्रोधावेश में कुछ रंग बदलते हुए वह लेट गई और करवट बदल ली ।

क्या मेरे जीवन में यहीं शेष रह गया है । भला हुआ जो चुप लेट गई वर्ना जरा सी देर में इस कड़क के साथ कितने ओले बरस जाते, राम जाने क्या यह असाध्य रोग है, जिसका न कोई निदान है न उपचार । मेरे जैसे सैकड़ों पीड़ित होंगे जो दो शब्द भी अपनी कुण्ठित क्षुधित भावनाओं से नहीं व्यक्त कर सकते, वह भी जीवित हैं, उनके लिए भी सुख है, शांति है, उनकी मृतक भावनाओं के लाचार आत्मतोष में करवटें बदलती सिसकियां भरती हुई इसी जिन्दगी में ।'

इसी समय कुछ सिसकियों की आवाज कानों में पड़ी, वह उठ कर श्रीमती जी के पास जा पहुंचा, 'अरे, अरे, तुम तो एकदम नाराज हो गईं ।' उनको अपनी ओर पलटने का प्रयास करते हुए विनय ने कहा ।

लेकिन कोई उत्तर नहीं मिला ।

उसने फिर छेड़ा, 'कुछ तो बोलो ।'

कुछ दबी जबान से उन्होंने कहा, 'बोलना क्या है, एक ही तो जिन्दगी है, हंस कर न सही, रो कर ही काट लूंगी ।'

टप से दो आंसू विनय की आंखों से टपक पड़े । वह चुपके से लेट गया । सब विपरीत परिस्थितियों के आखेट हैं । विचार बन्धन परिधि से सर्वथा मुक्त हैं, उनका व्यक्तीकरण स्वतः होता है, कहीं कम कहीं ज्यादा, कभी ज्ञान से अज्ञानता झलक मारती है, और कभी कभी अज्ञानता ज्ञान को तीक्षण किरण सा प्रकाश दे लुप्त हो जाती है । श्रीमती

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जी अभी जीवन से इतना निराश हो गई, उनके पास कहने को दूसरा बात नहीं रही, या इससे अधिक विचार करने की क्षमता नहीं। धीरे धीरे वह इन विचारों में डूबता उतरता सो गया !

प्रातः जब वह नीचे उतरा उसकी मुखाकृति पर चिन्ता की सलवटें बल खा रही थीं। बाबा बैठे बीड़ी पी रहे थे, उस पर एक दृष्टि डालते ही पूछ बैठे 'आज कुछ उदास हो, क्या बात है ?'

उसने कुछ अनमने भाव से उत्तर दिया, 'यह तो मैं भी नहीं जानता।'

बाबा ने बीड़ी का कश छोड़ते हुए कहा, 'लेकिन मैं जानता हूं।'

विनय ने किंचित विस्मय से बाबा की ओर देखा; वह आगे बोल पड़े, 'इसमें हताश होने की क्या बात है, ऊंचे नीचे दिन तो आते ही रहते हैं।' एक विश्वास के साथ विनय बोला, 'कुछ जीवन में ऐसा भी आ जाता है जो वापस नहीं जाता बाबा।'

'मैं समझता हूं। लेकिन जो होना था हो गया, अब तो जो कुछ सामने है उसे ही बनाने में तुम्हारी विशेषता है।' बाबा ने सान्त्वना दी।

'लेकिन किसी के निर्माण के लिए उत्साह और साहस आवश्यक है, इसमें से एक चीज की भी कमी दूसरे को क्रियाहीन कर देती है।'

'और चीजे भी तो हैं, उन्हें क्यों छोड़ दिया।' बाबा ने प्रश्न किया।

'मूल और पेड़ के अतिरिक्त, तने, टहनियां और पत्तों से क्या प्रयोजन, वह सब आधारित तो इसी पर हैं।'

बाबा कुछ क्षणों चुप रहने के बाद बोले, 'यदि मनुष्य के मस्तिष्क से विचार शक्ति निकाल दी जाय तो वह क्या रह जायेगा ?'

'एक पशु।'

'मनुष्य को मनन और विचार की शक्ति का भी ज्ञान है।'

'प्रत्यक्ष है, कहां से कहां तक वह पहुंच चुका है, और कहां तक पहुंचने के लिए प्रयत्नशील है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'तो क्या यहां तक पहुंचने के लिए उसे बाधाओं का सामना नहीं करना पड़ा।'

'क्यों नहीं।'

'क्या कभी उत्साह पर, साहस पर आघात नहीं हुए।'

'हुए क्यों नहीं।'

'ठीक समझते हो, जो लोग इन आघातों से सहम गए, डर गए, हतोत्साहित हो गए, उन्हें कोई नहीं जानता, कब गए, लेकिन जिन्होंने इन सब की चुनौती को स्वीकार किया, वह आज भी अमर हैं।'

'उपदेश देना आसान है बाबा, वैसा ही आचरण करना बहुत मुश्किल ! यहां सब अपने दृष्टिकोण से प्रत्येक बात सोचते हैं, प्रत्येक कर्म करते हैं, जो सही भी हो सकता है, और गलत भी।'

'लेकिन ऐसे दृष्टिकोण केवल अपने ही लिए होते हैं; क्योंकि अपने स्वार्थ के अतिरिक्त विचार करने की न तो शक्ति रह जाती है, न ज्ञान ही।'

विनय चुप हो गया। सम्भव है बाबा ठीक कहते हों, आखिर उनका अनुभव भी तो कुछ है। उन्होंने मनुष्य का ही अध्ययन किया, अभ्यासिक रूप से, मानवीय क्रियाओं के साथ थपेड़े खाये हैं। तो क्या मैं अपने स्वार्थ के विषय में सोचता हूं। यौवन के उल्लास में आघात समझकर ही मेरा उत्साह और साहस कांप रहा है क्या ?

बाबा आगे कहने लगे, 'मैं भी कभी कभी ऐसा ही सोचा करता था, सोचता था लोग मुझे रास्ता दिखाते हैं, अपने रास्तों को छिपा कर, मेरे ऊपर उंगली उठाते हैं अपनी गलतियों को छिपा कर क्यों ? मनुष्य का अपना ही अन्तर अथाह है, फिर दूसरों के अन्तर की थाह लेना कहां की बुद्धिमानी है, दूर से सोते का पानी सोना और कांच हीरा सा झलकता है, लेकिन उसमें न कोई अस्तित्व है और न उसका कोई महत्व।'

'मानता हूं, यहां सब के अपने-अपने रास्ते हैं, कोई किसी का साथ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं देता, साथ भी दे तो क्या, अपना ही भरोसा नहीं, यहां सबके सब अनाड़ी गोताखोर हैं, जिस के हाथ रत्न लग गए वह सफल, शेष के सब असफल, अनाड़ी। जो अपने स्वार्थों को छिपा कर रंग पोत कर समाज को छल और कपट से उल्लू बना सका, वह सफल है शेष के सब अनाड़ी हैं, गिरे हुए पतित, कमीने हैं। सच तो मेरे विचार से यह है कि आदमी को आदमी नहीं धन, यश, शक्ति और शासन चाहिए।'

आगे बढ़ने के लिए अपने पैरों पर ही निर्भर करना पड़ता है। अपने साहस से ही काम लेना पड़ता है, अपनी शक्ति पर ही भरोसा करना पड़ता है, दूसरे के पैरों पर न तो हम खड़े हो सकते हैं, न एक कदम आगे ही बढ़ सकते हैं, दूसरों का साहस हमें काम नहीं देता, दूसरों की शक्ति हमारा साथ नहीं दे पाती।

'प्रत्येक बड़ी बात का मूल छोटी बात में है, प्रत्येक पौधे का अस्तित्व बीज में है। लेकिन प्रत्येक जलाशय सागर नहीं होता, प्रत्येक व्यक्ति-महान नहीं होता यह भी तुम्हें नहीं भूलना चाहिए।'

विनय विस्मय से बाबा की ओर ताक रहा था, बाबा ने अधजली बीड़ी अपने मुंह में रखकर जलाते हुए कहा, 'जाओ नित्य कर्म से निवृत्त हो लो फिर तुम्हें अपनी कहानी सुनाऊंगा।'

विनय उठ कर चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१२

***

शाम पांच बजे जैसे ही विनय घर से बाहर निकला, राजेश आता हुआ मिल गया। सामने पहुंचते ही विनय ने पूछा, 'आज बड़े रंग बिरंगे देखने में आ रहे हो।'

राजेश ने हंसते हुए उत्तर दिया, 'कालेज में ओल्डबायज़ फंक्शन है न, उसी विचार से निकला हूं।'

'फिर शुभ काम में देर कैसी, चलो।'

दोनों स्टेशन की ओर चल दिए।

राजेश ने बाबा के विषय में बात छेड़ते हुए पूछा, 'यह तुम्हारे बाबा कैसे हैं अभी तक तुमने स्पष्टरूप से नहीं बताया।'

'आपको कैसे लगे।'

'मैं समझता हूं घर का दरवाजा फालतू समझ कर तुमने शरण दे दी है।'

'और मैं यदि यह कहूं कि यह उनकी अपनी जगह है, उनका अधिकार है तो!'

'तो क्या जो कुछ तुमने उनके विषय में बताया था, सच है, वह तुम्हारे' .... 'राजेश संकोचवश रुक गया।

'हां-हां, इसमें संकोच कैसा, इस धरती पर समाज में, प्रत्येक व्यक्ति का अपना अपना व्यक्तित्व होता है, चरित्र होता है, उस पर हमारा कोई वश नहीं चलता। बाप अच्छा और बेटा लफंगा हो सकता है, पत्नी भली और पति बुरा हो सकता है, हमारे सामने बहुत से ऐसे लोग भी हैं, कि पति पण्डित, धर्म कर्म निष्ठ है और पत्नियां वैश्याओं के भी कान काटती हैं।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'यह तो पति की कमजोरी का सबूत है।'

'लेकिन मैं इसे व्यक्तिगत दोष ही कहूंगा, किसी की कमजोरी या किसी के सम्बन्ध को मैं इसके साथ नहीं लपेट सकता।'

'तुम भी एक जुवारी और चोर की तारीफ करने लगे।' राजेश के कथन में उपेक्षा और घृणा भर गई।

'मैं उन्हें केवल एक भटका हुआ राही समझता हूं, जिनके पथ का अन्त समीप है, लेकिन मंजिल क्या थी नहीं मालूम!'

'बस अन्त ही तो अन्तिम मंजिल है।'

'यह तो ठीक है, लेकिन अन्त कैसा, ऐसा, जैसा कि तुम देख रहे हो, क्या मानव का यही अन्त है।' कहते हुए विनय गंभीर हो गया।

'मेरा आशय जीवन के अन्त से है, मानव से नहीं' राजेश ने अपनी बात का स्पष्टीकरण किया।

विनय ने पूर्ण गम्भीरता के साथ कहा, 'फिर तो जो जीवन का ऐसा अन्त होने से स्पष्ट है मानव का अन्त। आदि और अनन्त से मानव जो भी करता आया है उसका अन्त!'

'छोड़ो भी इन बातों को, जब देखो तब मनुष्य, मानव, मानवता ही तुम्हारे दिमाग में चक्कर काटते रहते हैं। कुछ मनोरंजक वाद-विवाद करो न।' राजेश ने विषय की गम्भीरता को झकझोरते हुए कहा। मैं क्या करूं राजेश मेरे दिमाग में तो हर समय ऐसी बातें ही चक्कर काटती रहती हैं।' विनय किंचित व्याकुल सा हो उठा।

'बेकार हो न, किसी काम धंधे या नौकरी में लगे होते, तब तुम्हारी समझ में आता मनुष्य क्या है।' राजेश ने व्यंग किया।

'ऐसा क्या?'

'तब अपनी रोटियों का प्रश्न सामने होता न, और यहां सब एक दूसरे का भाग कैसे छीन कर खाते हैं वह तुम्हारी आंखों के सामने जब होता तो तुम भी सोचने के लिए लाचार होते, या तो छीन कर खाने का कमाल हासिल करो या भूखों मरो।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय ने उत्तर दिया, 'है तो सब आंखों के सामने ही दो चार आदमी या वर्ग ही नहीं सम्पूर्ण देश आंखों के सामने है, जहां कुछ लोग तो निर्माण कार्य के लिए अपना सर्वस्व होम कर सम्पूर्ण मानव जाति की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक समृद्धि की सेवा में रत हैं और कुछ अपने परिवार के स्वार्थ में अन्धे हैं और कुछ के सामने तो केवल वैयक्तिक स्वार्थ ही धन का, यश का, शासन का, और कुछ तो यहां तक पहुंच गए हैं जिनकी स्वार्थपूर्ण क्रियाओं के विषय में सोचना भी एक अपराध लगता है, मैं ही बेकार हूं, यदि तुम्हारे कहने का मतलब इतना ही है तो ······'

'मैं भी तुम्हारा ही जैसा तो हूं, दूसरों की कमाई पर चलना क्या हमें शोभा देता है !'

'फिर कोई उपाय, उद्यम तो होना ही चाहिए, मेरी समझ में तो जीवन का संघर्ष है रोटी कमाना।'

'पेट पालना, बस इतना ही।' उपेक्षित सा विनय बोल पड़ा, 'तुम्हारा आशय है खाने के लिए जीना।'

उपहासित भाव से राजेश ने कहा, 'तुम तो समझते हो आधी बुद्धि तुम्हारे पास है और आधी में सारा संसार, लेकिन जनाब यहां प्रत्येक व्यक्ति यही सोचता है,खाने के लिए जीना, जीने के लिए खाने के सिद्धान्त को जंग लग गई है, नहीं तो सब के सब सुकरात हो जाते।'

सब ऐसा ही सोचते हैं, खाने के ही लिये क्यों ? पहिनने के लिये, घूमने के लिये, प्रणय के लिये ही तो जीते हैं, अपने और अपनी वासनाओं के लिये ही तो सब क्रियायें करते हैं ; फिर मैं क्यों नहीं ऐसा सोच पाता, इसके माने मेरे दिमाग का अवश्य ही कोई पेच ढीला है या······विनय सोच रहा था लेकिन उसने कहा कुछ भी नहीं, तभी सुन पड़ा, 'हलो राजेश !'

राजेश ने बढ़कर हाथ मिलाया, 'हलो स्वरूप, 'फिर विनय का परिचय देते हुए कहा, 'आपसे मिलिये मेरे पुराने मित्र मिस्टर विनय।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय ने भी बढ़कर हाथ मिलाया, मिस्टर स्वरूप बोले, 'इस शुभ अवसर पर हम आपका स्वागत करते हैं।'

'धन्यवाद, ऐसे शुभ अवसर कम ही आते हैं, जब हम पुनः अपने अतीत को कुछ क्षणों के लिये हरा-भरा बना लेते हैं।' विनय ने उत्तर दिया।

स्वरूप ने राजेश की ओर कटाक्ष करते हुये कहा, 'अजी साहब अतीत तो आपका हरा-भरा होगा, हमने तो कोई झाड़ ही नहीं लगा पाया था।' इतना कहते हुए स्वरूप ने एक तीखी मुस्कान छोड़ी।

विनय ठहाके के साथ हंस पड़ा, झेंप मिटाने के लिये राजेश ने भी हल्की मुस्कराहट के साथ, साथ निभाया।

अब मिस्टर स्वरूप ने विनय की ओर व्यंग तीर छोड़ते हुए कहा, 'बड़े भावुक हैं आप, मासूम देता है कवि हैं।'

इस बार राजेश हंस पड़ा, 'जैसे के तैसे हो जरा भी फर्क नहीं आया।'

'मैं आदमी हूं जनाब गिरगिट नहीं, जो रंग बदल जाता है।' उत्तर देते हुए स्वरूप ने आगे कहा, 'और वह भी तो आये हैं।'

'छोड़ भी, उनसे क्या ?' उपेक्षित होते हुए राजेश ने उत्तर दिया।

'समझा, तो अंगूर खट्टे हो गये, और होने भी चाहिये, तू नहीं और सही, घर तो बस ही गया होगा कहो जनसंख्या के क्या हाल हैं।' स्वरूप ने बातों की झड़ी बांध दी।

'अभी तो अकेला ही हूं, और आगे भी कुछ ऐसा ही विचार है।'

'अरे ऐसा क्यों ?' साश्चर्य स्वरूप ने पूछा।

भई अपना जोड़ा तो भगवान बना नहीं पाये, और सम्भव है बना भी हो, तो अनजान में टूट गया होगा; या फिर कहीं रख कर भूल गये होंगे।' राजेश ने परिहासिक रूप से कह दिया, इस पर तीनों ही हंस पड़े।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

धीरे-धीरे बातें करते हुए तीनों भवन में प्रवेश कर गये। एक-एक कर सभी पुराने मित्रों से भेंट हुई और अन्त में एक ओर बैठी हुई कामिनी की ओर संकेत करते हुये स्वरूप ने कहा, 'लो आप हैं कामिनी देवी, आपसे मिलिये।'

विनय ने नमस्ते किया। कामिनी ने प्रति उत्तर देते हुए स्वरूप से कहा, 'आपका परिचय नहीं दिया स्वरूप जी।'

'आप हैं राजेश जी के बचपन के साथी, विनय।' फिर उसने कामिनी के अकेले होने पर आपत्ति प्रगटाई, 'अरे हां आप भी अभी तक अकेली ही हैं क्या ?'

'जी, आपको कोई आपत्ति है क्या ?' कामिनी ने कहते हुए व्यंग भरी मुस्कान छोड़ी।

स्वरूप स्वभाव से ही विनोदी तथा हाजिर जवाब था, तपाक से बोला, 'अपत्ति तो नहीं, वर्षा अवश्य हो गई, आखिर मैंने ही क्या अपराध किया था, जो फिजूल में मेरे पीछे चार डिब्बों की एक छोटी सी रेलगाड़ी विधाता ने खड़ी कर दी।'

राजेश जिसकी मुखाकृति पर कामिनी को देखकर उलझन की सलवटें पड़ रही थीं, और अब वह अनायास ही विलीन भी हो गईं, और वह मुस्करा पड़ा। कामिनी और विनय भी अपनी हंसी नहीं रोक सके, कामिनी ने हंसते हुए परिहास किया, 'स्वरूप जी, यदि विधाता ने मेरे लिये कोई जोड़ा ही न बनाया हो तो !'

स्वरूप जी ने मूर्ख की भांति समर्थन सूचक अपनी गर्दन को हिलाते हुए कहा, 'ठीक है, ठीक है, यदि भूल से कोई जोड़ा बनाया भी होगा तो अनजान में टूट गया होगा।' इतना कहते हुये उसने राजेश की ओर उन्मुख हो कहा, 'आपका क्या विचार है श्रीमान जी।'

झेंपते हुये राजेष ने कहा, 'हर समय मजाक अच्छी नहीं होती स्वरूप।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कामिनी का मुखमण्डल लज्जा से अरुणिम हो गया, उसके नैन झुक गये लेकिन स्वरूप जी आगे बोल पड़े, 'भाई जान जैसे चाय की दूकानों पर लिखा रहता है 'हर वक्त चाय का वक्त' ठीक वैसे ही मेरे दिमाग की स्लेट पर यह टंका हुआ है। अच्छा आप लोग विराजिये।' कहते हुये स्वरूप वहीं एक ओर बैठ गया।

विनय भी वहीं स्वरूप के बगल में बैठ गया। संकोच में भारी, लाचार हो राजेश को भी बैठना ही पड़ा वह भी कामिनी और विनय के बीच में रिक्तस्थान पर। सामने रंगमंच था। जिसके ऊपर स्वर्णाक्षरों में लिखा हुआ एक पट झूल रहा था, 'धर्मशास्त्रों में पढ़ा है।'

'बड़ा छोटा सा शीर्षक है।' विनय ने कहा।

राजेश अतीत और वर्तमान की उधेड़बुन में सना बैठा था, अनायास बोल पड़ा, 'क्या कहा ?'

विनय ने उसकी ओर देखते हुये मुस्करा दिया। और फिर उसकी स्थिति को सम्भालते हुये कहा, 'अभी आरम्भ होने वाला है। सामने देखिये।'

राजेश झेंपते हुये किंचित मुस्करा पड़ा, और फिर कामिनी की ओर यह जानने के लिये दृष्टि फेरी, कहीं उसने समझ तो नहीं लिया। कामिनी को राजेश की स्थिति पढ़ने में देर न लगी; उसने अपने मुंह पर रुमाल रख लिया, कुछ क्षणों के लिये राजेश को वहां बैठना दूभर हो गया। इतने में घण्टी बजी और रंगमंच पर एक सज्जन ने आकर परिचय दिया, 'उपस्थित महानुभाव यह एकांकी हमारे पुराने छात्रों द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है। इसमें एक गुरु का अपने शिष्यों के लिये दीक्षान्त भाषण है। प्रस्तुत करता को हमारे पुराने साथी भलीभांति जानते हैं। क्योंकि उस समय यह महोदय कालेज में गुरु उपनाम से ही विख्यात थे।'

अब राजेश ने मुस्कराते हुये कहा, 'स्वरूप ! धीर होगा।'

स्वरूप ने समर्थन करते हुये कहा, 'अपने गुरु को यदि चेला नहीं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पहचानेगा तो कौन पहचानेगा।

राजेश कट कर रह गया। कामिनी राजेश को देखकर मुस्करा पड़ी।

धीरे-धीरे पट सरक गया। एक ओर ऊंची आसन्दी पर एक नवयुवक विराजित था। दूसरी ओर एक चौकी पर एक वृद्ध महानुभाव आसीन थे। उनके पीछे एक सेवक खड़ा पंखा झल रहा था। वृद्ध महोदय ने उठकर कहना आरम्भ किया। 'दर्शक गणों, मैं आपकी सेवा में अपने शिष्य महापण्डित अघानन्द को उपस्थित कर रहा हूं, आशा ही नहीं वरन विश्वास है, आप उनके पांडित्य की बिना सराहना किये नहीं जायेंगे, बुद्धि का बड़ा ही कुशाग्र है, किन्तु है अभी बच्चा ही.....

बच्चा शब्द उच्च आसन्दी पर विराजित अघानन्द जी को अखर गया, तत्काल 'हुं....हुं' की दो बार घुड़की दी। गुरुजी ने संकेत समझते हुये अपने शब्दों को बदला, 'मेरा आशय है शिष्य महोदय, ज्ञान गरिमा के भण्डार हैं, और वह थोड़ा सा ज्ञान पियूष प्लावित करने का कष्ट उठायेंगे।' इतता कहते हुए गुरुजी अपनी चौकी पर पुनः विराजित हो गए।

शिष्य महोदय महापण्डित अघानन्द जी अपना आसन छोड़कर मंच पर आगे आते हुए अपने गुरू को सम्बोधित करते हुए बोले।

'ये जराधम, एक विद्वान महापण्डित के सन्मुख तेरा बैठना शोभा नहीं देता। इसका आशय है तेरे युग में व्यावहारिक शिक्षा का अभाव था। सभ्यता अपने उच्चस्तर तक नहीं पहुंची थी। अर्वाचीन युग के अनुसार तुझे अपने विद्वान शिष्य का सम्मान करना चाहिये।'

गुरुजी खड़े होकर कांपते हुये बोले, 'भूल के लिये क्षमा वत्स।'

'क्षमा प्रदान की गई।' सगर्व शिष्य अघानन्द ने उत्तर दिया। फिर खांस खखार कर गला साफ करते हुये बोलना आरम्भ किया, 'वृद्धजनो, माताओ, बहनो, भाइयो तथा देवियो।'

कहकहों से सारा भवन गूंज उठा, 'सेवक ने कहा, 'खूब रही गुरुजी!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गुरुजी ने उसे डपटा, तू चुप रह।'

पुनः अघानन्द ने बोलना आरम्भ किया, 'धर्म-शास्त्रों में पढ़ा है। मनुष्य मात्र के पास केवल तीन तरह की बुद्धि होती है, प्रत्यक्षात्मक, भावात्मक तथा आशयात्मक, मेरे कहने का तात्पर्य है जो कहा जाय उसके शाब्दिक अर्थ को जो आप स्पष्ट तथा प्रत्यक्ष रूप से समझ लें, वह है प्रत्यक्षात्मक, लेकिन—परन्तु कहने से जिस भाव का व्यक्तीकरण हो उसे समझने की शक्ति को कहते हैं भावात्मक। किन्तु-परन्तु-यानी कि वक्ता के कहने का आशय क्या है, यह समझना अति गूढ़ तथा कठिन है और उस प्रज्ञा को कहते हैं आशयात्मक।'

'जैसा कि धर्मशास्त्रों में पढ़ा है परोपकार करने से मनुष्य मात्र का कल्याण होता है। अब शब्द है परोपकार, प्रत्यक्ष रूप से शाब्दिक अर्थ है दूसरे की भलाई करना, भावात्मक हुआ किसी को अपनी सेवाओं से आभारी करना, और कहना, मैंने वही किया है जो मुझे करना चाहिये (मूर्ख उस आभार को न भूल जाना) संकोच करने की बात नहीं।

'और गुरुजी आशयात्मक क्या हुआ, 'ओहो ... भूल हो गई, हुआ नहीं हुई।' सेवक ने प्रश्न किया।

'हां आशयात्मक में अवश्य भेद है, धर्म-शास्त्रों में पढ़ा है पर सन्धि, धन उपकार, अर्थात् यानी कि पराये व्यक्तियों द्वारा अपना उपकार करना ही परोपकार आशयात्मक है। और आज मनुष्य मात्र का कल्याण इसी में है।'

सेवक ने आगे बढ़कर कहा, 'फिर तो गुरुजी सेवक भी अब से ऐसा ही परोपकार करना चाहेगा, क्योंकि जिसमें अपना कल्याण हो, वही तो अपना धर्म है, उत्तम है।'

अघानन्दजी आगे बोले, 'धर्मशास्त्रों में पढ़ा है परयार्थ में मनुष्य मात्र की मुक्ति का गहन रहस्य है, अतः प्रत्यक्ष दूसरों की भलाई में काम आना ही परमार्थ है। भावात्मक रूप में युक्ति मार्ग को प्रशस्त करने के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लिए, प्रत्येक व्यक्ति को सदा मनुष्य मात्र के हित में सेवायें अर्पित करने से कल्याण होता है एवं पर-पुरुषों द्वारा अर्थ लाभ करने से ही पर सन्धि धन अर्थ अर्थात् पराये अर्थ की उपलब्धि संभव है, यानी कि परमार्थ आशयात्मक है।' अतः वर्तमान युग के आप भी सच्चे परमार्थी बनने का अभ्यास करें।

सेवक ने करतल ध्वनि की, और प्रश्न किया, 'तो सत्य क्या है गुरुजी ?'

गर्वान्वित हो आनन्द जी बोले, 'अरे मूर्ख कोरी कल्पना के आडम्बर में प्रत्येक बात को सिद्ध कर देना ही तो आज का सत्य है। तुझे यह भी नहीं मालूम।'

'धन्य है गुरुजी धन्य है; तब तो मैं सच्चा परमार्थ प्राप्त करने के लिए, परोपकार तथा सत्य जैसे सहयोगियों का सहयोग प्राप्त करने में सदा सचेष्ट रहूंगा, तथा अपने गुरु-भाइयों और अन्य सभासदों से भी यही प्रार्थना करूँगा।' कहते हुए सेवक ने शाष्टांग दण्डवत की।

अघानन्द जी फिर बोले, 'धर्म-शास्त्रों के अन्तिम चरण में पढ़ा है। वक्ता तथा उपदेशकों में आस्था रखो, क्यों कि उनके शब्दों का कोई अर्थ नहीं, मेरा आशय प्रत्यक्षात्मक से है, उनके भावों का कोई अर्थ नहीं, मेरा आशय भावात्मक से है उनका आशय गूढ़ होता है, मेरा आशय आशयात्मक से है।'

सेवक ने विनय की, 'गुरुजी अब तो सिधारने का समय हो गया।'

'हां अपना ही नहीं सब का समय हो गया, सबको जाना होगा, अतः मैं चलते-चलते पुनः स्मरण कराता हूं, मेरे प्रवचन पर आप लोग हृदय से विचार करें, सत्य आपको चारों ओर दृष्टिगोचर होगा, और सत्य ही भगवान हैं, बोलो ?'

'अस्तु।'

भवन कहकहों से गूंज उठा, पर्दा गिर गया!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राजेश ने उठने का प्रयास करते हुए कहा, 'चलो विनय बाहर चलें।'

इस पर कामिनी ने मीठी चुटकी लेते हुए कहा, 'आप तो ऐसा लगता है अभी से अभ्यास करना चाहते हैं।'

सुनते ही स्वरूप उछल पड़ा, 'बहुत ठीक, वेरी नाइस, गुड़ आइ-डिया, सच्चे गुरु के सच्चे चेले को भक्तजनों ने खूब पहचाना।

इस पर राजेश भी अपनी हंसी नहीं रोक सका, हंस कर बोला, 'सलाह तो बुरी नहीं है।'

'जी हां, फिर आप तो पुराने चेले ठहरे' कामिनी ने तपाक से कह डाला, राजेश अवाक रह गया। एक बार उसने कामिनी की ओर देखा, वह मुस्करा रही थी कुछ क्षणों के लिये अतीत के सूखे पौधे जैसे एकदम लहलहा उठें हों, वही छवि, वही आंखें उनमें वही मादकता, दो क्षणों को उसकी आंखें अटक गईं। इस बीच विनय को लेकर स्वरूप गैलरी पार कर द्वार तक पहुंच चुका था। कामिनी ने लजाते हुए कहा, 'इस तरह क्या देख रहे हैं, कोई क्या कहेगा।'

राजेश कट कर रह गया। एक मीठी सी टीस उसके हृदय पर खरोंचती निकल गई। उसका ध्यान विनय और स्वरूप की ओर गया, देखा दोनों जा चुके थे तब उसने उठते हुए धीरे से कहा, 'क्षमा करना भूल हो गई' और जैसे ही उसने चलने के लिए कदम बढ़ाया कामिनी बोल पड़ी, 'क्या मैं चाय पीने नहीं जा सकती।'

'अवश्य, आइए चलें' किस उत्सुकता में राजेश तपाक से कह गया वह महसूस नहीं कर सका, फिर अचानक उसे अपनी स्थिति का भान हो आया, लेकिन तब तक कामिनी उठ कर खड़ी हो गई थी।

दोनों धीरे-धीरे बाहर आ गए। विनय और स्वरूप दिखलाई नहीं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पड़े, तो राजेश सामने के जलपान में कामिनी के साथ जा बैठा। वेटर से उसने कहा, 'दो कप चाय।'

वेटर चला गया। राजेश की भाव भंगिमा को छेड़ते हुए कामिनी ने पूछा, 'क्या सोच रहे हो।'

'क्या कहा आपने' जैसे वह अचानक सोते से जाग पड़ा हो।

कामिनी ने उसके मन का भाव परखते हुए कहा, 'कामिनी बदली नहीं है राजेश! जो थी, वही है, वही रहेगी, वैसी ही रहेगी! उसने भी अपने सब सम्बन्ध तोड़ दिए हैं और बनारस महिला कालेज में नौकर हो गई है, जानते हो क्यों? किसी की प्रतीक्षा में, उसने भी संकल्प किया है, शादी न करने का और आज वह यही कहने आई है।'

'कामिनी' राजेश के हृदय से एक दबी हुई टीस उभर आई। उसकी आंखें झुक गईं, इसी समय वेटर ने ट्रे लाकर रख दी।

कामिनी ने चाय बनाते हुए आगे कहा, 'चिन्ता न करो कामिनी ने हृदय पर पत्थर रख लिया है, उसने अपनी जबान सीली है, वह तो तुम्हें केवल अपना पता देने आई थी, शायद कभी बनारस आना हो तो फिर कभी एक साथ चाय पीने का सौभाग्य प्राप्त हो सकेगा।'

अपराधी के समान झुके हुए सरस राजेश ने धीरे से कहा, 'मुझे लज्जित न करो कामिनी।'

'क्या बात है, बहुत परेशान नजर आ रहे हो, तुम्हारे लिए तो यह मामूली सी बात है, खिलौने टूटते हैं खेलने वाला नहीं। लो चाय' कहते हुए कामिनी ने चाय का कप उसकी ओर बढ़ा दिया।

राजेश ने अपने को सम्भालने का भरसक प्रयास किया, किन्तु उसकी आंखें डबडबा आईं, रूमाल आंखों से लगा उसने कप पकड़ लिया। कामिनी का वाक्य उसके अन्तर में ऐसा चुभ गया जैसे किसी बिच्छू ने डंक मार दिया हो, और उसके जहर का झन्नाटा बढ़ता जा रहा हो,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

एक परेशानी बढ़ती जा रही हो, उसे रोक सकने का कोई उपाय उसके पास नहीं था।

'एक बार मेरी ओर नहीं देखोगे, क्या ?'

राजेश ने साहस बटोरते हुए उसके ऊपर एक दृष्टि डाली तो सन्न रह गया, जैसे कई जहरीले बिच्छुओं ने एक साथ डंक मार दिए हों। कामिनी की आंखों से झर-झर आंसू झर रहे थे किन्तु स्वर और भाषा बिल्कुल संयत थी। राजेश को अपनी ओर देखते ही उसका गला कुछ भर आया, 'बुरा न मानना, वैसे तो यह सूख चुके हैं, पता नहीं आज कहां से आ गए, सम्भव है दो वर्ष बाद तुम्हें देखकर अपनी खुशी न दबा सके हों' इतना कहते हुए उसने आंचल से आंसू पोछ डाले, और चाय की एक चुस्की लेते हुए बोली, 'यह तो जीवन है, उतार चढ़ाव तो आते ही रहते हैं हार जीत होती ही रहती है, कुछ आकर्षण में भटक जाते हैं, कुछ आकर्षण को महत्वहीन समझ कर सन्तोष कर लेते हैं।'

इतने में कानों तक विनय और स्वरूप के शब्द पहुंच गए, वह कुछ बातें करते हुए उसी ओर आ रहे थे। फैमिली रूम के सामने आकर स्वरूप बोला, 'अन्दर आने की आज्ञा है।'

'भला आपको कौन रोक सकेगा' कामिनी ने तपाक से उत्तर दिया।

'धन्यवाद, थैंक यू' कहते हुए उसने प्रवेश किया।

कामिनी की आंखों से आंसू ऐसे सूख गए, जैसे मरुभूमि पर हल्की फुहार महत्वहीन रह जाती है। वर्षा हुई ही न हो! आंसू आए ही न हों। उसका मुख मण्डल दमक उठा, जैसे किसी बड़े युद्ध में अपनी विजय घोषणा सुनकर बैठी हो। राजेश चुप था, आंसू उसने अवश्य पोछ डाले थे किन्तु चेहरे की रौनक गायब थी।

स्वरूप ने पूछा, 'अजी महाशय, अन्दर चलने का विचार नहीं है क्या ?' राजेश चुप था। स्वरूप ने उसकी स्थिति को समझते हुए कुछ न बोलना ही ठीक समझा, अतः उसने कामिनी से राजेश की स्थिति की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ओर व्यंग करते हुए कहा, 'आप तो चलिए, आपका तो आज गीत होन ही चाहिए, बहुत दिनों बाद अवसर आया है।'

'मेरा !' साश्चर्य कामिनी बोली।

'हां हां आपका; अगला कार्यक्रम आपका ही है, मैं गुरू से मिल कर ही आ रहा हूं, जल्दी कीजिए समय बहुत कम है।'

कामिनी उठ खड़ी हुई। राजेश सर झुकाये बैठा था, स्वरूप ने उसकी पीठ ठोंकते हुए कहा, 'उठिए महाशय जी, उठिए। बिना चेले का गुरू इज्जत क्या पायेगा।' वह उठकर चल दिया। लेकिन उसे ऐसा अनुभव हो रहा था मानो उसके पांव जमीन से चिपक रहे हों।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

***

सारे भवन में सन्नाटा छा गया। लोगों ने बड़ी उत्सुकता से कामिनी का गीत सुना, "दिए री मैंने पग-पग नैन बिछाय।

सूनी तुम बिन मेरी गलियाँ।
सूख रही आशा की कलियाँ।
मन में व्यथा छिपाय।
कैसे कहूं मैं मन की पीड़ा।
कहे बिना मेरी मन वीणा।
झंकृत हो रह जाय।
सूख गईं अँसुओं की लड़ियाँ।
रह गई उर की खुली किवड़ियाँ।
प्रियतम कब आ जाय।
जब तक सांस आस की मारी।
मैं जीती हूं, आस तुम्हारी।
नैन रहे पथराय।"

गीत का प्रभाव उपस्थित जनसमुदाय पर छा कर रहा गया। किन्तु उसके हृदय की पीड़ा के भाव ने, उसकी अमूक वेदना ने राजेश के लिए वहाँ एक क्षण के लिए भी ठहरना असह्य कर दिया। गीत समाप्त होने तक उसने अपने को किसी प्रकार बांध रखा था। गीत समाप्त होते ही वह खड़ा हुआ, विनय ने उसके मनोभावों को समझते हुए, कुछ नहीं कहा और चुपचाप वह भी उठकर साथ हो लिया।

बाहर आते ही विनय ने पूछा, 'चलते समय नहीं मिलोगे क्या ?'

'नहीं, जिससे कोई सम्बन्ध नहीं, मिलना क्या ?' राजेश ने रूखे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

स्वर में कह डाला ।

विनय ने व्यंग भरी मुस्कान छोड़ते हुए कहा, 'लेकिन जनाब का चेहरा तो कुछ और ही गवाही दे रहा है ।'

इस पर राजेश ने कुछ झुंझलाते हुए कहा, 'मुखाकृति विज्ञान के महापण्डित लुईकोने तुम्हीं हो न ।

दोनों धीरे-धीरे कालेज की सीमा के बाहर पहुंच रहे थे । विनय चुप था, राजेश ने पूछा, 'कहो क्या देखा ।'

'अपनी वर्तमान स्थिति का एक स्पष्ट स्वरूप, अपनी सभ्यता का मूलमंत्र' गम्भीरता के साथ विनय ने उत्तर दिया ।

'तभी तो हम आज इतना उलझ गए हैं' राजेश ने अपने व्यक्तीकरण में गत घटना के प्रभाव को छिपाने का प्रयास किया ।

'आखिर क्यों ?' विनय ने उसी गम्भीरता से प्रश्न किया ।' दूषित मनोवृतियों तथा विनाशकारी विचारों में हम क्यों उलझ गए हैं, यह तो हमारी बुद्धि, ज्ञान और विचार शक्ती का उपहास है, समझते हुए भीं हम मूर्ख हैं, देखते हुए भी अन्धे, कान होते हुए भी बहरे, चेतन होकर भी जड़ रहे, बिल्कुल जड़ इससे अधिक हमारे लिए और क्या हास्यास्पद होगा ।'

राजेश को मन में सन्तोष हुआ कि इस विषय के उठने से विनय कामिनी को बिल्कुल भूल गया है अतः उसने उसका समर्थन करते हुए एक वाक्य आगे बढ़ाकर कहा, 'है विनय, इससे आगे भी है, और वह है हमारे मनुष्य होने का दम्भ, वह भी इतना बढ़ता जा रहा है कि विनाश अथवा प्रलय ही उसे नष्ट कर सकेगी, तभी तो हम इस विनाशकारी वातावरण में चारों ओर से घिरते जा रहे हैं ।'

विनय ने प्रश्न किया, 'तुम अपने साथ दूसरे को नष्ट कर डालना चाहते हो क्यों ?'

'जो स्वयं नष्ट हो रहा हो वह किसी को नष्ट नहीं कर सकता ।' राजेश ने उत्तर देते हुए आगे कहा, दीपक स्वयं जलता है, लोग शलभ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के जल जाने की बात कहते हैं ।'

'फिर मैं तुम दोनों में किसे शलभ और किसे दीपक समझूं ।' विनय ने व्यंग किया। राजेश ने सोचा था विनय के मस्तिष्क से कामिनी हट चुकी है, यह बात सुनते ही वह झल्ला उठा फिर भी उसने अपने को सम्भालते हुए बात टालते हुए कहा, 'मैं तो इस समय दूसरी ही उलझन में था, मेरे साथ एक अपघात हो गया है।'

'वह क्या ?'

कल मैं बहुत ही चिन्तित था, तुमसे भी भेंट नहीं हो सकी, गांव से आया था, थक भी बहुत गया था, और रुपए भी लगभग मेरे पास पांच सौ थे क्योंकि मुकदमें के सिलसिले में नैनीताल जाना आवश्यक है। लेकिन दुर्भाग्य से बड़ी भूल हो गई। या मूर्खता समझो जो मैं कल शाम रमेश के यहां चला गया।'

क्या हुआ; सब के सब पी गए क्या ?'

कुछ चिढ़ता हुआ राजेश बोला, 'तुम इतनी कड़वी बात कह देते हो कि....'

'बर्दाश्त के बाहर हो जाती है यही न ! अच्छा, अब चुप रहूंगा।' विनय ने बात काटते हुए कहा।

एक निःश्वास छोड़ते हुए राजेश ने कहा, 'वहां से लौटते समय मैं मदिरा में डूबा हुआ था, रास्ते में पान की दूकान पर कुछ पुराने मित्रों से भेंट हो गई। वह मेरे ऐसे मित्र थे, जिनके यहां जाना कभी बहुत अच्छा लगता था क्यों कि सुरा के सभी साधन वहां होते थे, उसमें से एक ने मेरी ओर ध्यान से देखते हुए कहा, 'बहुत दिन हो गए चलो आज प्रोग्राम हो जाय' मैं उस समय अपने से बहुत दूर था । बीच-बीच में विचारों की एक आध लहर मुझें सचेत करती जाती थी। जाना नहीं चाहता था, फिर भी चला गया। उसके यहां पहुंचते ही एक प्रतिमा सामने आई उसे देखते ही वह बोला, 'रोमी, राजेश आज बहुत दिनों बाद मिला है, इसे हमारा आग्रह तो मानना ही पड़ेगा, रोमी मेरे पास आ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गई । मेरी आंखों में आंखें डालते हुए वह बोली, 'क्यों नहीं ज्यादा नहीं तो थोड़ी ही सही।'

'मैंने कहा न मैं अपने से दूर था।'

विनय से चुप नहीं रहा गया बोल ही पड़ा, 'क्या ही सुन्दर अवसर होगा छलकती आंखों के पैमानों ने जब प्यासी आंखों को पीने का प्रलोभन दिया होगा।'

राजेश ने मुस्कराते हुए कहा, 'फिर भला मैं कैसे बच पाता ! यहां तक कि विचारों में रह रह कर उठने वाली चेतना की लहर भी धीरे धीरे विलीन होती गई। फिर भी चेतना की कुछ विछिन्न लहरें मुझे कैसे घर तक घसीट लाई, यह भी ठीक-ठीक नहीं याद रहा, और मैं घर पहुंचते ही खुली छत पर वैसा ही लेट गया। प्रातः उठा तो बहन को कमरे में बड़बड़ाते सुना, 'न जाने इतनी रात तक कहां रहता है, जो संकोच में बिना बिस्तर मांगे ही सो रहा, जहां संकोच होगा, वहां भेद भी होगा।' मैं अनसुनी करता हुआ नित्य कर्म से उलझ गया।

जब कचहरी के लिए तैयार हुआ तो देखा जेब खाली है। रात मेरे मस्तिष्क में ही नहीं जैसे आंखों में भी नाचने लगी हो। धीरे धीरे एक एक घटना चित्रित होती जा रही हो और मैं विमूढ़ सा ताकता रह गया। मैं चुप चाप घर से बाहर चला आया।

विनय कहना तो बड़ी ही कटु बात चाहता था, फिर उसने टालते हुए पूछा, 'रोमी उसकी कौन थी।'

'बहन !'

'तुम पहले भी उधर जाते रहे होगे।'

'हां, कभी-कभी चला जाया करता था, लेकिन छः सात महीनों से तो बिल्कुल नहीं गया था।'

'तो ये कहो पुराने शिकार हो।' कहते हुए उसने आगे पूछा, 'फिर क्या हुआ।'

'एक मित्र से रुपए माँग कर किसी प्रकार आज का काम चलाया,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कल नैनीताल जाना अति आवश्यक है, वापस आते ही लौटा दूंगा, क्या तुम एक सप्ताह के लिए प्रबन्ध कर दोगे।' राजेश ने अब अपना आशय स्पष्ट रूप से कह दिया और विनय का उत्तर पाने के लिए व्यग्र हो उठा।

विनय ने स्थिति को समझते हुए मुस्करा कर कहा, 'लेकिन मैं कल दोपहर से पहले नहीं दे सकूंगा।'

'तुम्हारा यह भी एक बहुत बड़ा अहसान होगा! मैं कभी नहीं भूल सकूंगा।' राजेश ने आभार प्रगटाया।

'मित्रता अहसानों से नहीं चलती राजेश, यह तो समय की परख है, समय पर आदमी ही आदमी के काम आता है।'

अब तक दोनों स्टेशन तक पहुंच चुके थे। राजेश ने पूछा, 'तो कल दोपहर के बाद, मैं तुम्हारे यहां आऊंगा।'

'आ जाना! लेकिन एक बात तो बताओ, कामिनी को देख कर तुम्हारा चौखटा क्यों लटक गया था।'

'मैं अपने को व्यक्त करने में विवश हूं विनय! फिर एक दीर्घ निःश्वास के साथ उसने आगे कहा, 'आज मेरे जीवन का प्रत्येक पल जैसे उसके श्राप से, परिस्थितियों के कुचक्र में पड़ता जा रहा है। आज मैं उस पर बरेली के भरे बाजार में किए गए व्यंग पर लज्जित हूं। दिन प्रति दिन मेरी समझ में आता जा रहा है कि मनुष्य की आत्मा में मनुष्य को दण्ड देने की असीम शक्ति है।'

'यह तो निर्मल पवित्र आत्मा की बात हुई, ऐसी दूषित और चरित्र-हीन आत्मा में वह शक्ति कहां है' विनय ने तीखी बात कह डाली।

'आत्मा सदा निर्मल और पवित्र हैं, प्रेम में समर्पण होना चरित्र-हीनता नहीं सत्यता है' राजेश ने प्रतिवाद किया।

'यह तो ठीक है, किन्तु नियम विरुद्ध होना, विवाह के पूर्व ही प्रणय करना, पतित होना नहीं तो और क्या है।' विनय ने पुनः लांछित किया। विवाह तो एक सामाजिक बन्धन मात्र है, प्रणय का आधार तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रेम है, समर्पण है। वैवाहिक सम्बन्धों के बाद तो स्त्री का सामाजिक समर्पण होता है, क्योंकि उसके लिए वह लाचार है, आश्रित है। दोषी तो मैं हुआ। पाप तो मेरे भीतर था। वासना थी, जिसको मैंने एक प्रेम का नाटक रचकर पूरा किया।'

'आदमी कभी न कभी अपनी गलती अवश्य महसूस करता है, 'विनय के मन में आया वह कह दे, लेकिन उत्तर में वह बोला, 'यह ठीक है लेकिन पुरुष तो एक लोलुप भंवरा है, वह किसी भी पुष्प पर जा सकता है।'

'यह तो अनधिकृत है।'

'यह हृदय की कोमलता, प्रेम, त्याग और समर्पण का यही परिणाम होता रहा तो, अपने विचार से तो अपना नैतिक जीवन दिन प्रतिदिन गिरता ही जायेगा। हममें और पशुओं में फिर अन्तर ही क्या रह जायेगा।' विनय ने अपने विचार स्पष्ट किए।

'तुम प्रत्येक बात की गहराई तक पहुंचने लगते हो, फिर भी मेरे विचार से यदि प्रेम और समर्पण दोनों ही कर्तव्यच्युत न हों, तो हमारे नैतिक जीवन पर आंच नहीं आयेगी।' राजेश ने समर्थन करते हुए स्पष्ट किया विनय ने टोका, 'यह तभी संभव है, जब हम अपने असंतुलित मनोवेगों पर नियंत्रण कर सके, और यदि हम मनोवेगों को सन्तुलित कर सके तो फिर क्या बात है। नैतिक, धार्मिक, सामाजिक सभी क्षेत्रों में हम सफल हो सकते हैं, जीवन में सफल हो सकते हैं, लेकिन आज हमारी सब से बड़ी कमजोरी तो यही है, और हम इस पर दो क्षण भी विचार नहीं करना चाहते।'

विनय का घर समीप आ चुका था; कुछ क्षण दोनों चुप रहे, फिर विनय ने व्यंग किया, 'मदिरा भी एक धोखा है, आदमी इसमें डूब कर गम गलत नही करता बल्कि गम आदमी को ही गलत कर देता है।'

'कभी पी कर देखो' मुस्कराते हुए राजेश ने कहा।

विनय तुरन्त बोल पड़ा, 'पी नहीं तो क्या ? पीने वालों को तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देखा ही है' राजेश कट कर रह गया।

विनय फिर बोला, 'वैसे दूसरों को भटकाने का ढंग तो अच्छा है। लेकिन मेरी बात तो तुम्हें इस समय ऐसी अखर गई, जैसे कामिनी का आत्मदण्ड।'

राजेश ने तनिक आवेश में आते हुए कहा, 'मैं भी देखूंगा कब तक अखरेगा, अब मैं उस ओर सोचूंगा भी नहीं।'

'हां ! उसके लिए दो पैग मार लोगे' विनय ने पुनः व्यंग किया।

यह बात एक पैनी छुरी सी उसके हृदय को चीर गई, 'मुझे अब तुम्हारे ऊपर गुस्सा आ रहा है।'

सिर्फ इसलिए कि मैंने सच कह दिया, और सच कहने से तुम मुझे रोक भी तो नहीं सकते, फिर यहां कोई दूसरा सुनने वाला भी तो नहीं है।'

'यही तो बात है, मैं तुम्हें अपना समझता हूं; इसलिए बेबस हो जाता हूं।'

'फिर यह बात कामिनी मिले तो अवश्य कहनी पड़ेगी, कि तुम बेबस भी हो जाते हो सम्भव है किसी के प्यार की बेबसी में ही कुँवारे रह गए हो।' विनय ने एक तीर और मार दिया।

'राजेश तमतमा उठा, 'और कोई बात नहीं है तुम्हारे पास।'

'है क्यों नहीं, गुस्से को पीना भी एक फायदेमन्द नुक्सा है' कहते हुए विनय मुस्करा पड़ा।

वह आवेश में उबल पड़ा, 'भाड़ में जाय तुम्हारा नुक्सा, कल दोपहर को ही आऊंगा, जी में आये प्रबन्ध कर देना, अच्छा नमस्ते !' कहता हुआ वह तेजी से मुड़ गया।

'अरे सुनो तो' विनय ने रोकना चाहा किन्तु राजेश ने मुड़ कर भी नहीं देखा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१४

***

दस वजकर बीस मिनट हो चुके थे जव विनय अपने कमरे में पहुंचा। श्रीमती जी प्रतीक्षा में ही बैठी थीं, विनय ने मुस्कराते हुए कहा, 'हुक्म की पूरी-पूरी पावन्दी है न ?' इतना कहते हुए उसने घड़ी की ओर संकेत किया।

कुछ संकुचित होते हुए वह बोली, 'जैसे मेरे हुक्म पर ही तो चलते हो।

'लो अभी कल ही तो दस वजे तक घर पहुंचने का आदेश मिला था।'

उन्होंने तुरन्त बीस मिनट की ओर संकेत करते हुए हाजिर जवाबी की, 'इसी लिए तो सिर्फ बीस मिनट देर हुई है, आज पहला दिन था, कल पच्चीस, फिर तीस····

विनय ने बीच में ही टोकते हुए कहा, 'फिर एक घण्टा और रात भर, वस यहीं तक कल्पना कर सकोगी।' इतना कहते हुए वह कुर्सी पर बैठ गया और कुछ लिखने के लिए कापी सम्भालने लगा। श्रीमती जी पास आ गईं कापी हाथ से लेकर एक ओर रखते हुए, अलमारी से भोजन का थाल ला कर सामने रख कर बोलीं, दिन तो दोस्तों के साथ जाता है, रात कोरे कागज़ों को रंगने में, अजीव आदमी हो, सब को तो घर आने पर भूख लगती है और तुम्हें लिखास।'

विनय बड़ी जोर से हंस पड़ा, 'अब तो तुमसे हिन्दी पढ़नी पड़ेगी।'

'अगर मैं पढ़ी-लिखी होती तो ऐसा न कहती।'

विनय ने कौर तोड़ते हुए कहा, 'जब पढ़ी नहीं तब तो यह हाल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं और अगर पढ़ जातीं तो राम जाने क्या हाल होता।'

इस पर वह तुनककर बोली, 'क्या हाल है, कौन-सी मुसीबत हूं तुम्हारे लिए!'

ग्रास निगलते हुए उसने कहा, 'कुछ नहीं, अभी तो बिना पढ़ा गुस्सा है फिर वह भी ग्रेजुएट होता।'

बात उनकी समझ में नहीं आई कुछ उत्तेजित होते हुए बोली, 'जब देखो पढ़े-लिखे होने का ताना मारते रहते हो, अब तो तुम्हारे यहां हूं पढ़ा लो!'

'यह जिम्मेदारी मेरी नहीं है।'

'क्यों नहीं? जब मेरी जिम्मेदारी है, तो मेरी पढ़ाई की भी होनी चाहिए।'

वह कुछ हंसा फिर बोला, बीस वर्ष मेरी पढ़ाई में चले गए, और दस वर्ष कम-से-कम तुम्हें पढ़ाने में दूं, बस एक जिन्दगी तो यूं ही निकल गई, शादी का मतलब तो कुछ और ही लगे।

उन्होंने प्रश्न किया, 'आखिर शादी का मतलब और क्या होता है?'

यही कि अब तक तो आपके पिताजी ने पाल-पोसकर बड़ा कर दिया, जब पढ़ने का समय आया तो ढेर सी फीस अग्रिम चुकता कर मेरा-सा एक मास्टर खरीद दिया।'

'देखो मेरी बात का सही-सही जवाब दो, यूं बातें बनाने से काम नहीं चलेगा।' वह कुछ नाराज होती हुई-सी बोलीं।

'मैं जितना ही सही जवाब देता हूं तुम उतना ही उल्टा समझ बैठती हो।'

'हूं' वह गुस्से से लाल-पीली पड़ती बोली, 'मैं तो मूर्ख हूं तुम तो समझदार थे तब क्यों नहीं अपने पिता जी से कहा था मुझे पढ़ाने का शौक नहीं, इसलिए बिना फीस की पढ़ी-कढ़ी लड़की ढूंढ़ते; क्यों गिर पड़े रुपये देख कर।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय चुप रह गया। भोजन समाप्त हो चुका था श्रीमती जी ने थाली उठा ली और बिना कुछ और बोले वहां से हट गई विनय ने कापी पुनः उठा ली।

विवाह, प्रकृति के नियमों को पालन कराने की एक उत्कृष्ट पद्धति है, नियम है। दो जीवन एक मर्यादा में बांध दिये जाते हैं, उनसे आशा की जाती है, वे एक दूसरे की भावनाओं में डूबकर लौकिक आनन्द उठाते हुए, प्रकृति की सृजन-नीति को सहयोग देते रहें, जितनी उनमें एकता होगी, सामीप्य होगा, उतना ही मर्यादा का पालन भी होगा। सामाजिक तथा नैतिक उत्कृष्टता का सत्यं, शिवं, सुन्दरम् प्रतिपालन होता रहेगा।

इसके विपरीत होने पर सभी मर्यादाएँ, धीरे-धीरे नष्ट हो जाती हैं, युगल समाज का परिहास बन जाता है क्यों? हमारी स्वार्थान्धता के वश ही तो। लेकिन यह छोटी-सी बात समझ कर टाल दी जाती है। कुछ ऐसा विश्वास चला आ रहा है, कि शारीरिक तुष्टि के बाद, जोड़ी कैसी भी हो ठीक हो जाती है, इससे तो स्पष्ट है वर नहीं मनुष्यता बिकती है। जीवन काटना और कटने में अन्तर है। हम जिस जीवन को एक बोझ समझ कर ढो रहे हैं, वह हमारी मनुष्यता ही तो है; यदि हम उस बोझ को उतार फेंके तो समाज की दृष्टि में आलोचना और आक्षेपों का एक पात्र बन जाये हैं। लेकिन····मेरे जैसे सैकड़ों होंगे इस संसार में, समाज में, सैकड़ों ने अपनी मंजिल पूरी कर ली होगी और सैकड़ों अभी बीच में होंगे, सैकड़ों की गरदनें अभी इस धार के नीचे आई होंगी, और सैकड़ों की आने वाली होंगी। वह भी हमारी तरह ही तड़प रहे होंगे, तड़पेंगे! कुछ तड़प-तड़पकर जीवन की आहुति समाज और मनुष्यता की वेदी पर चढ़ा देंगे, और कुछ आवारा और तिरष्कृत हो इस मर्यादा के क्षेत्र से बाहर होंगे!'

एक दीर्घ निःश्वास के साथ उसने कापी बन्द कर दी। घड़ी ने टन से साढ़े ग्यारह बजा दिए। विनय ने श्रीमती जी की ओर ध्यान

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दिया तो उन्होंने करवट बदल ली।

'नींद नहीं आ रही है क्या ?' उसने कुछ परिहास किया।

'तुमसे क्या मतलब !' उन्होंने बेरुखाई से उत्तर दिया।

भूख लग रही होगी, गुस्से में बुद्धि भटक जाती है, इसीलिए तो कहता हूं गुस्सा कम किया करो।'

कोई उत्तर नहीं मिला।

विनय भीतर से किंचित तिलमिला उठा, 'अजीब मुसीबत है, इसे इतना भी ज्ञान नहीं परिहास होता क्या है। हर समय गम्भीर गुस्से में भरी रहती है। कितनी मूर्ख, अज्ञानी हैं। वास्तविकता का तनिक भी ज्ञान नहीं।' विनय का आवेश शान्त हो गया, वह धीरे से उठकर पास पहुंचा और तनिक गुदगुदाते हुए पूछा, 'खाना क्यों नहीं खाया ?'

'मुझसे मतलब !'

'मतलब न होता तो पूछता ही क्यों।' उसने पुनः गुदगुदाया।

श्रीमती जी ने चट से करवट बदलते हुए विषय बदल कर पूछा, 'आखिर ऐसे कब तक चलता रहेगा।'

'कैसे ?'

'यही कि सुबह से शाम तक आप यूं ही घूमा करते हैं, न कोई काम, न धन्धा, न नौकरी।'

'इन सब बातों की फिक्र तुम्हें क्यों है ? करने वाला तो मैं हूं।'

'लेकिन इसका असर तो हम सब पर पड़ता है, नाते-रिश्तेदार भी जो जी में आता है कह डालते हैं।'

'मैं किसी की फिक्र नहीं करता।'

'तुमने तो कान में तेल डाल रखा है, लेकिन मुझे तो दिन भर उन्हीं लोगों के साथ रहना पड़ता है।'

तेल नहीं डाल रखा बल्कि मैं लोगों की आदत को समझता हूं, तुम फिलहाल गांव चली जाओ न, मेरे कहने से तो तुम्हें विश्वास न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होगा, लेकिन मैं स्वयं कुछ न कुछ करने की ही फिक्र में हूं।'

'फिक्र होती तो दिन भर दोस्तों के साथ बेकार में समय नष्ट करते न फिरते।'

विनय ने गम्भीर होते हुए कहा, 'रहती तो तुम घर में ही हो, बाहर क्या हो रहा है तुम्हें क्या मालूम, जिन्हें समय का फेर न पड़ा हो, नौकरी और धंधे की फिराक में सड़कों की धूल न फांकनी पड़ी हो, वह क्या समझेंगे, और समझाया भी नहीं जा सकता। फिर मैं तो इस बात पर विश्वास करता हूं कि सब काम अपने आप होते रहते हैं, आदमी तो केवल एक माध्यम है, जब नौकरी लगनी होगी लग जायेगी।'

'और अगर न लगी तो इसी तरह दूसरों के टुकड़ों पर पड़े-पड़े जिन्दगी कट जायेगी।'

विनय ने उत्तेजित होते हुए कहा, 'मैं देखता हूं तुम्हारी जबान जरूरत से ज्यादा चलने लगी है, तुम क्या कहती हो और तुम्हें क्या कहना चाहिए यह कभी नहीं सोचती, अच्छा है कि अब हम बात करना बन्द कर दें, दो घड़ी रात का साथ रहता है, तुम यहां तक पहुंच जाती हो, अगर कहीं दिन भर घर में बैठा रहूं तो या तो किसी दिन आत्म-हत्या ही करनी पड़े या फिर घर ही छोड़ना पड़े!'

कहते हुए वह चुप हो गया, तभी उसके मस्तिष्क में राजेश की बात बिजली-सी कौंध गई, 'जरा कुछ दिन ठहर जाओ, कितनी पैनी छुरी बन जायेगी।'

श्रीमती जी कुछ नरम पड़ते हुए बोली, 'जब जरा-सी बात कह दो तो बुरा मान जाते हो, और उल्टी सीधी बातें करने लगते हो, अगर यही बात है, तो मैं अब न बोलूंगी।' इतना कहते हुए उन्होंने करवट बदल ली।

विनय भी बात करना ठीक न समझ कर चुपचाप लेट गया।

इससे अधिक हम अशिक्षित वर्ग से और क्या आशा कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सकते हैं। इनके सिद्धान्तों में प्रोत्साहित करने का यही एक ढंग है, इसमें बुरा मानने की बात ही क्या हैं। जो अपने आपको जिस ढंग से व्यक्त करने में समर्थ पाता है, वह उसी ढंग से व्यक्त करता है। संसार में जो भी व्यक्ति या वस्तु जन्म लेती है उसका विकास तो होता ही है, भले ही उसमें विकास के समय सही अनुसरण न मिल सके। अशिक्षित वर्ग और जंगली झाड़ियों में अन्तर ही क्या है, उपवन में महकता हुआ गुलाब या पुष्प-पंखुड़ियाँ व्यक्ति को अपने आकर्षण में खींचती हैं, किन्तु जंगल में बढ़ी घनी हो जाने पर व्यक्ति को अपने में उलझाकर रोक लेना जानती हैं।

समाज से हमें लाभ क्या ? माता-पिता से लाभ क्या, यदि वह अपने उत्तरदायित्व को न निभा सकें, यह सब हमारी सभ्यता और संस्कृति पर कंलक ही तो है। हम पैदा कर सकते हैं पाल नहीं सकते, यदि पाल भी सकते हैं तो सही ढंग से नहीं।

फिर इसका दोष ही क्या ! हां, यदि मैं इसकी संगति से अपनी रक्षा कर लूं, कहीं चला जाऊँ; लेकिन नहीं, फिर मेरी विशेषता ही क्या है। विशेषता तो तब है जब इसे ही अपने अनुकूल बनाया जाय, इसे भी यह समझने और सोचने के लिए लाचार होना पड़े, कि हम मनुष्य हैं, हमारा कर्तव्य क्या है, हमारा जीवन क्या है और हमें करना क्या है ?

विनय ने धीरे से करवट बदली, श्रीमती जी को थप-थपाते हुए पूछा, 'सो गईं क्या ?'

कोई उत्तर नहीं मिला।

'अच्छा तो मैं ही बुरा सही, बुरे आदमी को जिन्दा रहने का अधिकार ही कहां है जाता हूं कहीं।' इतना कहते हुए विनय उठने लगा। श्रीमती जी ने तुरन्त करवट बदलकर उसे पकड़ते हुए कहा, बस-बस तुम्हारी इन्हीं बातों से तो मेरा दिमाग खराब रहता है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'फिर और बात भी क्या करूं, रात की चांदनी छिटकी है, ठण्डी-ठण्डी हवा झंकोरे ले रही है, जैसे कोई रैन-सुहागिन सोलहो शृंगार कर अपने प्रियतम से विलास कर रही हो, और एक तुम हो जो रूठी पड़ी हो।' विनय कहता गया श्रीमती जी मुस्करा पड़ीं, फिर बोली, 'मैं क्या जानू कविता क्या है।'

'यही तो एक तुम्हारी सबसे बड़ी सौत है।'

'तो उसका तो नाम भी न लो।'

'अच्छा तो तुम्हीं हो हमारी कविता।'

'बस बस कहीं तुम्हारी कविता न रूठ जाय।' इतना कहते हुए श्रीमती जी जरा पास आ गईं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१५
***

विनय जब प्रातः नीचे उतरा, बाबा बैठे बीड़ी सुलगा रहे थे। देखते ही पूछा, 'उदास से हो क्या बात है ?'

अनमना-सा वह बोला, 'यह तो मैं भी नहीं जानता।'

बीड़ी का कश लेकर छोड़ते हुए बाबा ने कहा, 'लेकिन मैं जानता हूं।'

विस्मय से विनय ने बाबा की ओर देखा फिर बोला, 'आप···

'हां हां ठीक ही तो कहा, तुमने अभी देखा ही क्या है' बाबा बीच ही में बोल पड़े।

'देखूं भी तो क्या, कुछ दिखलाई ही नहीं पड़ता बाबा ! मुझे तो ऐसा लगता है, मानो मैं एकान्त सागर तट पर खड़ा हूं, जहां लहरें होड़ लेती हुई आती हैं, और तट पर दूर तक फैल जाती हैं लेकिन उन्हें फिर सिमट जाना पड़ता है, कदाचित वह भी लाचार हैं, मेरी ही तरह लाचार हैं, उन्हें भी आगे कुछ दिखाई नहीं पड़ता' वह कुछ रुका, फिर एक निःश्वास छोड़ते हुए बोल, 'सागर की विह्वलता तो तट पर बिखर भी जाती है किन्तु मेरी मानसिक विह्वलता को कोई कूल दृष्टिगत नहीं होता।'

बाबा ने अधजली बीड़ी फेंकते हुए कहा, 'बात तो ठीक है, लेकिन मेरे और तुम्हारे समझने में कुछ अन्तर अवश्य है, लहरों को आगे दिखाई तो बहुत कुछ पड़ता है, लेकिन वह लाचार हैं, उन्हें सागर की महानता से प्यार है, उसके प्रति श्रद्धा है, भक्ति है, वह उनसे दूर होकर जीवित नहीं रह सकतीं, इसलिए उन्हें वापस होना ही पड़ता है। ठीक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वैसी ही दशा मनुष्य की है उसे भी अपनी मर्यादा की रक्षा के लिए सभी झंझावातों में सीमित ही रहना पड़ता है, और जो इसमें सफल होते हैं वे ही मनुष्य कहलाने के सच्चे अधिकारी हैं।

'कल्पना और सत्य में बड़ा अन्तर है, बाबा!' विनय ने प्रतिवाद किया।

'मैं मानता हूं विनय और तुम्हारी परेशानी भी समझता हूं, यद्यपि मैं विषय की गंम्भीरता को ठीक से समझ नहीं पाता, और न उस ओर ध्यान देने का मेरा अधिकार ही है, फिर भी तुम्हारी नित्य की दाम्पत्य-कलह की बड़बड़ाहट तो मेरे कानों तक पहुंच ही जाती है, लेकिन यह एक बहुत जटिल तथा गम्भीर प्रश्न है। इसके दोषी तुम दोनों नहीं; बल्कि तुम दोनों को इस सूत्र में बाँधने वाले हैं; फिर भी मनुष्यता के नाते अब तुम्हारा कर्तव्य क्या?'

'वह मैं भली भांति समझता हूं, और इतना मुझे आत्मविश्वास है कि मैं उससे कभी गिरूंगा नहीं।' कहते हुए विनय का मुखमण्डल आत्म विश्वास की भावना से दमक-सा उठा। बाबा ने हर्षित होते हुए कहा, 'तुमसे मुझे ऐसी ही आशा है।'

विनय ने प्रश्न किया, 'आपने अपनी कहानी आगे नहीं सुनाई।'

'हां तुम्हें समय ही कहां मिल पाता है, फिर भी कुछ हाल सुनाये देता हूं।'

और बाबा ने कहना आरम्भ किया, 'मनुष्य कभी अपनी बुराई नहीं ढूँढ़ता और न महसूस ही करता है। ग्लानि के भार से मैं दबा जा रहा था मानो मेरा एक-एक पग जमीन में गड़ता जा रहा हो, चिपकता जा रहा हो। मेरी ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण मनुष्यमात्र में यह स्थिति उस समय आती होगी जब कभी जीवन में पहली बार वह गलती करता होगा। भले ही धीरे-धीरे गलतियों के प्रभाव से कमजोरियां या शक्ति उभरती जाती होगी और वह हलकापन महसूस करता जाता होगा। मैंने तो गुण तथा अवगुणों को बराबर ही पाया, दोष तो हमारे संस्कारों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

का है जिधर झुक गए उधर ही के हो गए।

अचानक मेरे कानों में आवाज पड़ी, 'उधर नहीं इधर' बहती हुई नाली की ओर इशारा करते हुए एक खदान अधिकारी ने आगे कहा, 'इसमें जो गन्दगी हो उसे यहीं बैठे-बैठे साफ करते रहो।'

इतना आदेश देकर वह दूसरी ओर चला गया, मैं कुछ क्षणों तक हतबुद्ध-सा खड़ा रहा; हां भीतर जाने से पूर्व मेरे हाथों में दो वस्तुएँ थमा दी गई थीं एक थी छोटी-सी कुदाली और दूसरी थी लालटेन।

नाली साफ करने बढ़ा ही था कि नारकीय दुर्गन्ध से मुझे चक्कर आने लगा देखा तो जल के साथ विष्ठा, निरा विष्टा, हृदय में एक ठेस लगी 'क्या यही करने आया हूं, पेट पालने के लिए क्या यही शेष रह गया है', सोचता हुआ मैं एक ओर बैठ गया।

एक सहकारी ने मुझे चुप बैठा देखकर अन्य सहकारियों से अलंकृत भाषा में कहा, 'यही शुभारम्भ है, इसी में कोयला है।'

मेरे मुख से निकला, 'यह तो सफाई है, कोयला तो गहराई में होगा।'

'लेकिन यहां से हाथ मुंह धोकर पवित्र हो तो' कहता हुआ वह मेरे निकट आ गया।

मैंने कहा, 'ठीक ही तो है, कोयले जैसी पवित्र, शक्तिवान वस्तु में हाथ लगाने से पूर्व, इनका पवित्र होना तो आवश्यक है।' इतने में मेट आ गया, मुझे चुप बैठा देखकर बोला, 'यूँ बैठने से काम नहीं चलेगा' मैंने सादर कहा, 'हम तो कोयला खोदने आये हैं मल-मूत्र साफ करने नहीं।'

'चुप रहो' उसने डांटते हुए कहा, 'तुम कोयले की खदान में काम करने आये हो, यहां ना, नहीं चलेगी।'

मैंने नर्म पड़ते हुए मक्खन लगाया, 'लो सिगरेट पियो, फिर दूसरी बातें।'

वह नैपाली था, सिगरेट देखते ही उसके मुंह में पानी आ गया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मेरे हाथ से छीनते हुए बोला, 'अरे इसे अन्दर कैसे ले आये तुम।'

'यह भी कोई गुनाह है क्या ?'

'हां बहुत बड़ा' फिर मुझसे पूरी डिब्बी और माचिस लेता हुआ बोला, 'अगर तुम्हें नाली नहीं साफ करना है, तो अभी काली बाबू आता होगा, उससे बोलना, वह सीधा है तब तक चुप न बैंठ, कुछ न कुछ करता रह' इतना कहता हुआ वह चला गया। उसके जाते ही मेरे सहकारी साथी ने प्रश्न किया, 'तुम कैसे फँसे ?'

मैंने उसे सारी राम कहानी कह सुनाई। वह भी नया था, मुझसे दो चार दिन पहले ही काम पर आया होगा, थोड़ी देर हम दोनों एक दूसरे के प्रति सहानुभूति प्रकट करते रहे।

लगभग दो बजे काली बाबू अपने निरीक्षण पर आये, मैंने उनसे विनय की यदि इस नरकीय काम से मुक्ति दिला दें तो बड़ी कृपा होगी। लेकिन उनकी बात से मैं आश्चर्य में पड़ गया।

'तुम ठाकुर की कोठरी में रहते हो।' उन्होंने प्रश्न किया !

'जी क्यों ?' मैंने पूछा।

उनकी भावमुद्रा में कोई दूरदर्शित युक्ति झांक रही थी मेरे प्रश्नसूचक वाक्य का उन्होंने सहज ही में उत्तर दिया, 'यूँ ही पूछा' और फिर मेरे मेट से मुझे उस काम-से निवृत कर देने का आदेश देकर चले गए।

कभी-कभी हम जिस बात पर ध्यान नहीं देते, वही बात भविष्य में एक जटिल समस्या बनकर सामने आ खड़ी होती है। काली बाबू ने ऐसा प्रश्न क्यों किया, इसे तो तुमने समझ ही लिया होगा। ठकुराइन का रूप और यौवन ही उस कोठरी का एकमात्र आकर्षण था। उसी पर मैं विचार करने लगा, इसी समय एक सहकारी ने आकर काली बाबू के आशय को स्पष्ट करते हुए कहा, 'जानते हो कुछ दिनों से ठाकुर सबकी जबान पर हैं क्यों ?'

मैंने उसके आशय से अपनी अनभिज्ञता प्रदर्शित की, 'अभी मुझे यहाँ आये दिन ही कितने गए हैं। मैं क्या जानूं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनने व्यंग किया, 'बड़े ही भोले हो न ! अरे ठकुराइन का जोड़ इस पहाड़ी पर नहीं है।' फिर उसने अपना मन्तव्य प्रगट करते हुए कहा, 'सुनो, किसी से कहना नहीं मैं जिस कोठरी में रहता हूं, वहां मेरे साथ यहां का एक पुराना आदमी रहता है। एक दिन कह रहा था, अब जल्दी ही कुछ कमाने वाला हूं।'

'मैंने पूछा कैसे ?' तो वह बोला, 'बस एक छोकरी साहब तक पहुंचानी है, साठ-गांठ मैंने करली है, अगर तुम मेरी सहायता करोगे तो तुम्हें भी हिस्सा दूंगा' 'मेरे विचारों में एक तीव्र प्रत्यावर्तित भावचक्र घूमने लगा। ठाकुर की बातें ठकुराइन का रूप, काली बाबू की सहानुभूति, हृदय में एक चिनगारी भड़कने लगी, फिर भी मैं उसकी बातें बड़े ध्यान से सुनता जा रहा था।' उसने आगे कहा, 'सौदा बुरा नहीं है, मेरी मानो तो कहूं।'

मैंने कहा, 'मानूंगा क्यों नहीं ?'

उसके पास आते हुए धीमे स्वर में कहा, 'अगर यह सौदा हम और तुम आधे साझे में करलें तो कैसा रहेगा। किसी को कानों-कान खबर भी न होगी, और काम भी आसानी से हो जायेगा।'

मैं क्रोध में तमतमा उठा, जी में आया वही कुदाली उसके सर पर दे मारूं जो उस खदान से कोयला खोदने के लिए दी गई थी, और इस प्रकार उसके भेजे का सारा का सारा कोयला एक साथ बाहर आ पड़ेगा, किन्तु आगे का हाल जानने के लिए नियंत्रित होते हुए मैंने पूछा, 'सो कैसे' उसका मुखमण्डल किसी सफलता की आशा से खिल उठा, तुम तो निरे बुद्धू हो, मेरे साथ वाले ने ठकुराइन से सब बात पक्की कर रक्खी थी, और अबकी ठाकुर की रात की ड्यूटी आते ही काम भी हो जाता। लेकिन तुम वहां पहुंच गए न, बना बनाया खेल बिगड़ गया। अब तुम उसे फांस कर वहां तक एक रात को पहुंचा दो, फिर चांदी ही चांदी है। नहीं तो इस मैले में ही हाथ धोते रह जाओगे।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'किसके पास तक' मैं क्रोध में पागल हो गया था, फिर भी पूछ बैठा।

'अरे यही अपने काली बाबू जो हैं। तुम तो कुछ पढ़े लिखे भी हो तुरन्त मेट हो जाओगे।' उसने आशान्वित होते हुए कह दिया।

मेरे नियंत्रण की सीमा का बांध टूट गया और मैंने भरपूर शक्ति का एक तमांचा उसके गाल पर जड़ दिया, उसकी आंखें टग-सी गईं और वह चक्कर खाकर मुंह के बल उसी नाली में गिर पड़ा। गिरते समय मैंने उसकी पीठ पर एक जोर का मुक्का दे मारा।

तमाचे का शब्द सुनते ही नैपाली दौड़कर आ गया। 'क्या हुआ' और उसे उठाने लगा।

मैंने उसे सारी बात सुनादी। मेरी बातें ध्यान से सुनने के बाद, वह मुस्करा दिया। फिर बोला, 'तुम अभी बच्चा हो, इधर नहीं लड़ा जाता!'

बाहर आते ही वह चीखने लगा, हाय मार डाला-मार डाला!

शोर सुनते ही और लोग जमा हो गये, मुझे बड़ी जोर का आवेश आया और कुदाली उठाते हुए मैं झपटा, 'अभी खत्म किए देता हूं बदमाश, नीच' लेकिन लोगों ने मुझे पकड़ कर अलग कर दिया।

चक-चक बढ़ गई किसी प्रकार रात बिता कर मैं वापस आ गया। ठकुराइन ने बिस्तर झाड़ कर ठीक कर दिया था, और स्वागत के लिए द्वार पर ही मुस्कराती हुई मिली किन्तु उन्हें देखते ही रात की घटना मेरे मानसिक पटल पर उभर आई, जो दो क्षणों में उनकी मुस्कराहट के साथ-साथ विलीन हो गई। मुझे अनमना देख कर वह बोली, 'क्या बात है कुछ रूठ गए हो क्या? मैंने उनकी सस्मित छवि को देखते हुए अपनी मनःस्थिति को छिपाया। 'नहीं तो काम से थक गया हूं।' इतना कहते हुए मैं चुप चाप खाट पर जाकर लेट गया। द्वार बन्द करते हुए वह भी आ गई और खाट पर बैठती हुई बोली, 'लाओ बदन दाब दूं, पहले दिन काम किया है ज्यादा थक गए होंगे।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैंने टालते हुए कहा, 'नहीं, काम ही क्या था, सिर्फ जागना ही पड़ा।'

'काम कैसे नहीं होगा, बूढ़ा तो जब से आता है बस खाना खा कर चुप चाप सो जाता है। एक भी बात नहीं करता, अगर कुछ पूछती हूं तो कहता है, गुरिया गुरिया दर्द करती है, चुप चाप सोने दो।'

मैंने मुस्कराते हुए कहा, 'यह बूढ़ा है न मैं तो नहीं।'

इस बात से पहले तो वह लजाई, फिर मेरे वक्षस्थल में अपना मुँह छिपाते हुए बोली :

'कैसी बात करते हो।'

'गलत कहता हूं क्या ?'

उन्होंने विषय बदला, 'चलो रोटी खा लो तब सोना।'

मैं उठना नहीं चाहता था अतः टालते हुए बोला, 'अभी तो सबेरा हुआ है। थोड़ा-सा, उठो न' उन्होंने गुद-गुदाते हुए कहा।

मन का भेद छिपाते हुए मैं मुस्करा दिया। कितना बड़ा धोखा था, स्वयं मेरे लिए, लेकिन एक बहाना था कि मैं धोखा दे रहा हूं। धोखा खा नहीं रहा कदाचित हम अपने अस्तित्व को इन्हीं बहानों से गर्त में ले जाकर डाल देते हैं, जहाँ हम अपनी मुक्ति का कोई मार्ग नहीं पाते।

वह बोल उठी, 'उठो न मैंने चूनी की लप्सी बनाई है, जरा सी खा कर तो देखो, कितनी अच्छी है।'

मैं उठ कर हाथ मुँह धोने लगा, और उन्होंने एक बड़े कटोरे में लप्सी भर कर तैयार कर दी। यद्यपि मैंने तब तक चूनी की लप्सी नहीं खाई थी, पर थी वास्तव में बड़ी ही मधुर तथा स्वादिष्ट। मेरी रुचि को परखने के लिए उन्होंने पूछा, 'कहो कैसी है, अच्छी नहीं है क्या ?'

'बड़ी अच्छी है।' समर्थन करते हुए मैंने थोड़ी-सी उसकी ओर बढ़ाई।

'ऊ-हूं तुम खाओ।'

'तुम भी लो न जरा-सी।' कुछ लजाते हुए उन्होंने मुँह खोल दिया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और मैंने लप्सी का निवाला डाल दिया।

मैंने ठकुराइन को इतना निकट नहीं समझा था जितना कि वह आ गई। रात की घटना मेरे मस्तिष्क से विलीन सी हो गई और इस बात पर विश्वास नहीं ठहर सका कि ठकुराइन जाने के लिए तैयार हो गई होगी। मैंने इतनी गहराई तक बात भी नहीं सोची। सम्भव है ठकुराइन को कोई अच्छा प्रलोभत दिया गया हो। या उनकी अतृप्त वासनाओं ने उन्हें आर्कषित कर दिया हो। फिर भी जब नारी हृदय से समर्पण कर देती है तो वास्तव मैं पुरुष को शांति मिलती है, साहस मिलता है और वह तमाम कठिनाइयों से लड़ कर भी जीवन में सफल होने का दावा कर सकता है। कितनी मधुर थी वह चूनी की लप्सी जिसमें उसने अपना हृदय घोल कर रख दिया हो। पुरुष को साहस शक्ति और शान्ति दे कर उसे जीवन की प्रत्येक कठिनाइयों से टक्कर लेने के योग्य बना सकती है। किन्तु अधिकांश अपने गुण का सदुपयोग नहीं कर पाती। वह साहस, शक्ति और शान्ति न देकर कभी अशक्त तथा अशान्त कर देती है। क्यों कि पुरुष को अपने में उलझा कर उसका सर्वनाश कर देने में भी पीछे नहीं रहती और यही है हमारी पराजय, स्त्री से ही नहीं प्रकृति से भी अगर यह एक गुत्थी न होती, तो पुरुष ईश्वर होने का दम्भ ही न करता सम्भव हो जाता। क्या तुम कल्पना कर सकते हो कि यदि पुरुष ईश्वर होता तो क्या रुप होता उसका। लेकिन वह ईश्वर होने के लिए सदा प्रयत्नशील है क्या यह धोखा नहीं है।

लेकिन उस समय मैंने कुछ ऐसा अनुभव किया, जैसे मेरे जीवन की सभी कमियां पूरी हो गई हों, संसार के सभी सुख सुलभ हो गए हों। मेरी आंखें नीद से भारी हो चली थीं, उन्होंने पानी का गिलास उठा कर मेरे मुँह से लगा दिया।

मैं उठ कर बिस्तर पर आ गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१६
***

सन्ध्या समय वहां के लोग लकड़ियां लेने नदी पार के जंगल में जाया करते थे मैंने सोचा यहां रहना है तो यह रस्म भी अदा करनी होगी अतः लगभग चार बजे शाम को मैं भी जंगल की ओर चल दिया। ठकुराइन को अकेला छोड़ते समय खदान की घटना मेरे मस्तिष्क में रेखांकित हो गई।

मैं घर छोड़ कर भागा, घर वालों से अपने से परेशान होकर उन्हें पराया समझ कर लेकिन घर के बाहर भी वही सब था। घर का सत्य अनावरित है, किन्तु बाहर आडम्बरों के आकर्षण में हम धोखा खाते हैं। सांसारिक गतिविधियां ही ऐसी हैं। जहां भी मनुष्य होगा, स्वार्थ भी होगा, उसको पूरा करने के लिए सभी उपक्रम भी होंगे। हमें पग-पग पर उनसे संघर्ष करना ही होगा। हम उनसे बच कर नहीं जा सकते और न यहाँ रह ही सकते हैं। हमारा कोई अस्तित्व ही न होगा। अतः हम लाचार हैं कि अपने स्वार्थों के लिए संघर्ष में रत रहें। चाहे वह सही हो या गलत। नीति के लिए हो या अनीति के लिए, क्यों कि सही या गलत, नीति या अनीति का न्याय हम बहुधा अपनी स्वार्थान्धता-वश नहीं कर पाते।

एक ओर से भाग कर हम दूसरे जाल में फंस गए। यह तो हमारे वश की बात नहीं, करते भी तो क्या ? वहां का वातावरण ही ऐसा था। वहां तो लोग आदमी होने का ध्यान भी नहीं रखते थे, किन्तु मैं अभी तक ऐसा अनुभव नहीं कर सका था, कि मैं आदमी नहीं हूं। फिर सहन भी कैसे कर पाता। ऐसे कम समुदाय तथा लोग होंगे जो यह न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

महसूस कर पाते हों कि वह आदमी नहीं कुछ और ही हैं, लेकिन हैं तो क्या ? इसका भी उन्हें कोई ज्ञान न हो।

धीरे-धीरे मैं जंगल में पहुंच गया। ठकुराइन की सस्मित छवि मेरे मानसिक पटल पर प्रतिबिम्बित हो रही थी, मैं उन्हीं के विषय में कुछ सोचने लगा। उन्हें अकेला छोड़ना भूल है, सहसा कानों में एक कर्कश शब्द सुन पड़ा; 'आखिर आ ही गए तुम' और चार-पांच हट्टे-कट्टे व्यक्तियों ने मुझे घेर लिया। मैंने देखा सामने वही व्यक्ति था और उसके साथी। देखते ही मेरी आंखों में भी खून उतर आया क्रोध से मेरा सारा शरीर झनझना उठा और मैंने तन कर खड़े होते हुए कहा, 'हां आ गया हूं तुमसे जो बन पड़े बिगाड़ लो।' वह व्यक्ति आगे बढ़ आया दांत पीसता हुआ बोला, 'धोखे से मारा था न, मैं बदला लूंगा।'

क्रोध होते हुए भी मुझे हंसी आ गई, 'अभी तक याद है।'

'हां याद है, और बहुत अच्छी तरह याद है' कहते हुए उसने भरपूर झापड़ मेरे मुंह पर जड़ दिया। मैंने भी प्रत्युत्तर में एक जोर का मुक्का उसके सीने पर जमा दिया। मुक्का खाते ही वह धराशायी हो गया, लेकिन उसके साथी मेरे ऊपर टूट पड़े और मैं भी भिड़ गया।

एक और चार में जो फर्क होता है वही हुआ, यहां तक कि मुझे मरा समझ कर ही वे लोग छोड़ गए।

मैं किस प्रकार वहां से चिकित्सालय तक लाया गया कह नहीं सकता। जब चेतना आई तो ठकुराइन सामने थीं, पीछे ठाकुर भी खड़े थे। ठकुराइन की आँखों से ऐसे आंसू चल रहे थे जैसे सावन भादों में कभी-कभी बिना गरज या तड़प के मेंह बरसता रहता है। मेरी आंख खुलते ही ठाकुर ने पूछा 'कैसे हो ? मारने वाले को पहचान लिया था।'

आगे नर्स ने टोक दिया, 'अभी ज्यादा बात न करो।'

ठकुराइन बोल तो कुछ न सकी, किन्तु उनके हृदय की पीड़ा निरन्तर आकर आंखों से झरती रही जिसे वह रह-रह कर अपने आंचल से समेटती जाती, वह भी भीग कर तर हो गया था। उन्हें देखते ही जैसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मेरी सारी पीड़ा अदृश्य हो गयी हो, मैं स्वस्थता तथा हल्केपन का अनुभव करने लगा। मैंने ठाकुर से भी बैठने का संकेत किया। उन्होंने बैठते हुए कहा, 'मैं सब समझता हूं, तुम जरा ठीक हो जाओ एक-एक से निपट लूँगा, मैंने भी यहीं बाल सफेद किए हैं।'

मैंने धीरे से उत्तर दिया, 'एक के लिए मैं अकेला ही बहुत था, लेकिन वह चार-पांच थे।' इतना बोलने से भी मैं दर्द से कराह उठा और चुप हो गया। लगभग सात दिन मैं अस्पताल में पड़ा रहा। ठकुराइन नित्य मिलने जाती। उन सात दिनों में हम एक दूसरे के और निकट आ गए।

वहां से वापस आने पर मुझे सात दिन का अवकाश भी दिया गया मैं दिन रात कोठरी में पड़ा रहता, वह मेरी सेवा में इतनी निमग्न रहती, जैसे जीवन में मैं ही एक उनका हूं। एक दिन मेरे मुख से निकल ही गया, 'मैं तो संसार में अपने को अकेला ही पाता था किन्तु तुमने वह कमी पूरी कर दी।'

मुस्कराते हुए उन्होंने कहा, 'लेकिन मैं तो अपने को अकेला ही समझती हूं।'

'क्यों ?' साश्चर्य मैंने पूछा !

'तुम भी पीछा छुड़ा कर भाग जाना चाहते हो।'

'हां यह बात तो ठीक है लेकिन तुम मेरे साथ चल भी कैसे सकोगी।'

'क्यों ? जब सब कुछ तुम्हें सौंप चुकी तो यहां रखा ही क्या है ?'

'मैंने उनकी ओर देखा तो लज्जा से उनकी दृष्टि झुक गई।'

मैंने कहा, 'मेरे साथ चलने वाले के पास खुद खड़े होने की शक्ति चाहिए।' उन्होंने एक निश्वास छोड़ते हुए कहा, 'मैं एक स्त्री हूं न जिसे स्वयं सहारे की जरूरत होती है तभी ऐसा कह रहे हो।'

मैं चुप हो गया।

सात दिन मेरे लिए अभिशाय बन गए। मुझे उठते बैठते चक्कर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आने लगे । डाक्टर के पास पुनः परीक्षण के लिए पहुंचा, उसने मुस्कराते हुए कहा, 'जिन्दगी सिर्फ इसी के लिए नहीं है, पहले अपनी सेहत ठीक करो तभी सच्चा सुख है ।' मेरी दृष्टि झुक गई, मैंने डाक्टर के आशय को भली-भांति समझ लिया । उसने मेरे ऊपर दया कर के पन्द्रह दिन का और अवकाश दे दिया जो उस समय खदान के श्रमिकों के लिए दुर्लभ था ।

जब मैं उठ कर चलने लगा तो देखा सामने काली बाबू आ रहे हैं। मैं कुछ क्षणों को ठहर गया उन्होंने आते ही मेरी ओर देखा फिर डाक्टर से हाथ मिलाते हुए पूछा इसकी हालत कैसी है ।'

'अभी पन्द्रह दिन और लगेंगे ।'

'कोई बात नहीं ।' कहते हुए वह मेरी ओर मुड़ कर बोले, 'जरा अपनी सेहत का ध्यान रखना । और खदान के लोगों से न उलझना, तुम भले लड़के हो, और भले लोगों को बुरे लोगों के मुँह न लगना ही अच्छा है ।'

मैंने कोई उत्तर नही दिया ।

मेरे विचारों में स्वास्थ्य, विलास, आनन्द सभी के रूप उभर आए, जैसे गहन अन्धकार को चीरती हुई प्रकाश की एक किरण विलीन हो जाती है वैसे ही संयम की एक लहर आकर दूषित वातावरण में विलीन हो गई ।

फिर काली बाबू ने सहृदयता प्रगट करते हुए डाक्टर से कहा, 'अगर जरूरत समझे डाक्टर तो इसे पन्द्रह दिनों के लिए अस्पताल में ही रख लो, बिल्कुल ठीक हो जाने पर ही छोड़ना ।

डाक्टर ने मुझसे पूछा, 'क्यों ठीक रहेगा न मैं तुम्हें फिर भरती किए देता हूं ।'

मैंने सोचा संयम तभी संभव है, अतः भर्ती हो गया ।'

मुझे वास्तव में संयम करना ही था । क्योंकि मैं किसी से प्रेम नहीं करता और न मेरा कोई अधिकार ही था न सम्बन्ध ही, मुझे उसके साथ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रहना भी नहीं, यहाँ भी नहीं रहना। जहाँ आदमी को केवल एक मशीन समझ कर काम लिया जाता हो, तथा वह सारे सामाजिक व्याय-हारिक, मानवीय जीवन से वंचित कर दिया जाता हो वहाँ मनुष्य जाति के पशु ही जीवित रह सकते थे। फिर मेरा मोह कैसा। लेकिन वह तो प्रेम करती है। उसने तो आत्म-समर्पण कर दिया है न ?

सब गलत है, झूठ है, एक भ्रम है। वासना के मोह से हम अन्धेरे को प्रकाश समझ बैठते हैं स्वार्थ के वशीभूत हो हम प्रेम सत्य और अपनत्व के नाटक रचा बैठते हैं। दूसरों को धोखे में रखने के लिए प्रयत्न शील रहते हैं और स्वय धोखा खा जाते हैं। जो बीत गया वही सत्य था जो शेष है वह कुछ नहीं। यही चाहती है वह और ऐसे वातावरण के लोग। फिर तुम ऐसे वातावरण में प्रेम, आनन्द और जीवन का स्वप्न क्यों देख रहे हो। मैंने अनुभव किया जैसे कोई मेरे अन्तर से चीख रहा हो, अपनी रक्षा करो, अपनी रक्षा करो।

मैं कोठरी पर पहुंच चुका था, मेरी मुखाकृति को देखते ही ठकुरा-इन ने कुछ संदेह में डूबते हुए पूछा, 'क्या बात है।'

मेरे मुंह से निकल गया 'मुझे जाना है !'

'कहा ?' साश्चर्य उन्होंने प्रश्न किया।

इस नर्क कुण्ड से बाहर, इस बन्दीग्रह से बाहर, इस दूषित वातावरण से बाहर। मैं समझता था वह सुन कर उदास हो जायेगी, लेकिन इतना सूनते ही उसका चेहरा दमक उठा, उत्साह जैसे एकदम हृदय से छलक पड़ा हो, बोली, 'मैं भी साथ चलूँगी।'

मैंने निराशा व्यक्त की 'लेकिन सभी रास्ते बन्द हैं सभी ओर कम्पनी के गुप्तचर हैं बस एक ही युक्ति समझ में आती है।' उन्होंने उत्सुकता से पूछा, 'कौन सी ?' मैं पिछली खिड़की पर खड़ा होकर जंगल की ओर देखता हुआ बोला, 'यही एक रास्ता है।'

सुनते ही जैसे वह कांप उठी हो, 'जंगल से......बाबू बड़े-बड़े खतरे सुने हैं। यह रास्ता तो बड़ा ही खतरनाक है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'क्या खतरे हैं, जरा मैं भी तो सुनूं ।' निसंकोच निडर भाव से मैंने पूछा। 'एक दिन बूढ़ा कहता था इस जंगल में शेर चीते, सभी खूं-खार जंगली जानवर रहते हैं, और फिर नागाओं की बस्तियां हैं जो आदमी को सुना है कच्चा ही खा जाते हैं।' इतना कहते हुए उनका शरीर भय से सिहर उठा और मेरे समीप आकर पुनः धीरे से बोली, 'मेरे पास दो तोले सोना, सवा सेर चांदी और पांच सौ रुपए हैं, क्या ले दे के काम नहीं चलेगा।'

मैं साश्चर्य उनको देखने लगा, उन्होंने अपना सर मेरे वक्षस्थल पर रखते हुए फिर कहा, 'मैं तुम्हारे विना यहां कैसे रहूंगी।'

मैंने उनका सर सहलाते हुए कहा, 'लेकिन यहां के लोग पैसा नहीं तुम्हें चाहते हैं।'

जैसे एक विद्युत लहर ने उनके शरीर में एक झटका मार दिया हो, 'मेरी रक्षा करो बाबू, मेरी रक्षा करो' और उनकी आंखों से अश्रु धारा प्रवाहित हो चली। वह रुँधे कण्ठ से आगे बोली, 'यहां के लोग तो उन जंगली जानवरों और नागाओं से भी गए बीते हैं, इनकी संगति से तो मौत हजार गुनी अच्छी है' इतना कहते हुए झुक कर उन्होंने मेरे पैर पकड़ते हुए आगे कहा, 'मुझे साथ ही ले चलो, मैं सब दुःख सह लूँगी लेकिन इन नर पिशाचों से मेरी रक्षा करो मैं इस भंयकर तथा कांटों भरे रास्ते पर भी तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूं।' मैंने उन्हें उठाते हुए सीने से लगा लिया, 'काँटों वाले फूल ही अच्छे होते हैं देखो न गुलाब को, मनुष्य का जीवन भी कितना सुन्दर है लेकिन कितने कांटों के बीच वह पलता है।'

कुछ उत्साह उनके चेहरे पर उभर आया, 'तो कब चलोगे।'

वहुत जल्दी, यह पन्द्रह दिन समाप्त होते ही चल दूंगा, 'अच्छा अब मैं चलता हूं।'

'कहां ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'मुझे डाक्टर ने पन्द्रह दिनों के लिए फिर अस्पताल में भर्ती कर लिया है।'

यह सुनते ही उनकी मुखाकृति पर कोई अप्रत्याशित भाव भंगिमा उभरी जिसका अनुमान मैं नहीं लगा सका। और मैं वापस अस्पताल की ओर चल दिया।

एक पखवारा था, लेकिन मन्जिल की दूरी का कोई ज्ञान नहीं। विनय कभी तुमने विचार किया है कि एक आपत्ति से बचने के लिए मनुष्य दूसरी आपत्ति मोल ले सकता है। जो पहले की तुलना में कहीं अधिक भंयकर तथा अनिश्चित हो। अन्धकारमय हो। लेकिन बात सच है, जब हम ऐसी परिस्थितियों में फंस जाते हैं जहां धैर्य हमसे छूट जाता है, सफलता की सारी आशाओं पर पानी पड़ जाता है, चारों ओर से निराशा की घनघोर घटायें घिर आती हैं उस समय जीवन से अधिक मूल्लवान होता है छुटकारा, भले ही उस छुटकारे में जीवन का अन्त ही क्यों न छिपा बैठा हो। उस मृत प्राय: जीवन से मृत्यु कहीं अच्छी थी अत: यह दुस्साहस हमें करना ही पड़ा।

मैं समझता हूं, अपनी कठिनाइयों पर, परिस्थितियों पर विजय पाने की हममें असीम शक्ति है। किन्तु दुर्भाग्य अथवा अज्ञानवश हम अपनी शक्ति को भूल जाते हैं या अवसर आने पर प्राणों के मोह से प्रयोग नहीं कर पाते तथा अपने सर्वनाश से भी उपेक्षित हो जाते हैं, प्राणों का मोह ही प्राण लेकर छूटता है फिर प्राणों का मोह क्या ? क्या यह हमारी भूल नहीं, लेकिन लोग इसे भूल नहीं कहते क्योंकि जानते हुए आग में कोई नहीं कूदना चाहता, किन्तु लगी आग में फंस जाना समय का कुचक्र है।

'यह तो ठीक है बाबा कि मृत्यु निश्चित है, अटल है, लोग उससे नहीं डरते किन्तु अनिश्चित मृत्यु से सभी डरते हैं।' विनय ने प्रश्न किया।

'मृत्यु सदा ही अनिश्चित होती है विनय।' कहते हुए बाबा ने बीड़ी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुलगाई और फिर बोले, और वहां तो मेरी मृत्यु निश्चित थी या तो उन नर पिशाचों के पंजे में मसल-मसल कर या किसी दिन कोयले की खदान धसक जाने से अथवा ठाकुर की तरह धीरे-धीरे घिस जाने से या फिर किसी पशु का भक्ष्य बन कर, लेकिन पशुओं का भक्ष्य होना संदिग्ध था, वहाँ से हम बच भी सकते थे और यहां तो कोई दूसरा मार्ग ही न था। जहां आशा होगी वहीं उत्साह होगा, वहीं शक्ति होगी। जहां शक्ति होगी वहीं जीवन क्योंकि जीवन का चालन मैं शक्ति से मानता हूं।'

इसी समय किसी ने भीतर से विनय को पुकारा और वह उठ कर चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

***

ठीक तीन बजे राजेश आ गया। विनय ने उसे ऊपर कमरे में ही बुला लिया। राजेश कुछ संकुचित सा बोलना ही चाहता था कि विनय ने नोटों की गड्डी उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा, 'यह लो पूरे पांच सौ हैं।'

संकोच हर्ष में विलीन हो गया, 'मैं इस उपकार को कभी न भूल सकूंगा विनय! मैं तो अभी तक तुम्हें कुछ और ही समझता रहा, लेकिन अब मैं क्या कहूं मेरी तो कुछ समझ में ही नहीं आ रहा है।'

उसकी उल्टी-सीधी बातें सुनता हुआ विनय मुस्करा दिया, 'यह उपकार प्रत्यक्षात्मक है अथवा आशात्मक।'

राजेश हंस पड़ा। विनय भी अपने को नहीं रोक सका और बात हंसी में टल गई।

विनय ने पूछा, 'गाड़ी में अभी कितनी देर है।'

'अभी दो घन्टे हैं, लेकिन मैं घर से तैयार होकर ही आया हूं, बिस्तर बन्द स्टेशन पर छोड़ आया हूं, चलो कुछ बातें ही होंगी।' राजेश ने उत्तर देते हुए कहा।

'तुमसे बातें करना तो बहुत आसान है लेकिन तुम्हारा गुस्सा सम्भालना जरा कठिन।' विनय ने व्यंगात्मक परिहास किया।

'गुस्सा आ जाना तो मेरी एक आदत सी पड़ गई है।'

'इसलिए कि रगों में जमीन्दार का खून है, गुस्सा सहन करने वाले बहुत से होंगे।'

एक दीर्घ नि:श्वास के साथ राजेश बोला, 'यही तो मैं भी कभी-कभी सोचने लगता हूं, यदि एक भिखारी होता तो कितना अच्छा होता, किसी बात की चिन्ता न होती।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'भिखारी क्यों ? पागल वही पागल, उससे ज्यादा बेफिक्री किसी के पास नहीं होती, क्योंकि भिखारी होते तो सोचते जमीन्दार क्यों न हुआ।' राजेश मुस्करा पड़ा। विनय फिर बोला, 'मैं भी कभी-कभी सोचता हूं कि आदमी जहां होता है, वहां से संतुष्ट क्यों नहीं हो पाता। क्या तुम और क्या मैं, फिर बाबा को देखो-सारा जीवन अतृप्त निरुद्देश्य, कोई एक राह नहीं, कोई एक ढंग नहीं, आखिर क्यों ?'

राजेश ने उत्तर देते हुए कहा, 'वह तो जीवन के एक भटके हुए राही है, विनय! उनका कोई गन्तव्य नहीं, कोई उद्देश्य नहीं, फिर भला सन्तोष कहां से आता।' कुछ रुकते हुए वह फिर बोला, 'अच्छा छोड़ो इन बातों को, मैं अभी इलाहाबाद जा रहा हूं या तो दो दिन में वापस आ जाऊँगा या फिर वहीं से सीधा नैनीताल चला जाऊंगा, तो फिर लौटने में कम-से-कम बीस-बाइस दिन लग जायेंगे।'

'पहले यह सोचो, हम अपनी राह पर कहां तक सही हैं, तब इस बात का सोचना छोड़ा जा सकता है।' कहते हुए विनय ने पूछा, आखिर काम क्या है इलाहाबाद में 'यह तो वापस आने पर ही बता सकूंगा, और हां एक खुशखबरी है' राजेश कहते हुए ज़रा मुस्कराया।

'वह क्या ?'

'हंसना नहीं' मुस्कराते हुए राजेश ने कहा, 'लोग मेरी शादी करने आये हैं, समय मिले तो संध्या को जरा हाल-चाल ले आना।'

प्रसन्न होते हुए विनय बोला, 'जरूर-जरूर तुम्हारी शादी के ए से जेड़ तक सब हाल मुझे चाहिए। तभी तो मेरा काम चलेगा।'

राजेश मुस्करा कर बोला, 'क्यों ? मेरे ऊपर कोई उपन्यास लिखने की सोच रहे हो क्या ?'

विनय हंस पड़ा, 'विचार बुरा तो नहीं है। लेकिन यह तो बताओ शादी करोगे भी, या यूं ही आने-जाने वालों को तंग करते रहोगे।' हंसी-हंसी में विनय एक गम्भीर प्रश्न कर बैठा।

गम्भीर होते हुए राजेश ने उत्तर दिया,' इस विषय पर मेरा तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

एक ही निर्णय है'''और वह है नहीं। यदि अवसर आ जाय तो निश्चय के साथ तुम इन लोगों को सचेत कर सकते हो। अच्छा अब मैं चलता हूं।'

मनुष्य का निश्चय कभी-कभी स्वयं बोलता है, पता नहीं यह प्रेरणा या आवेश उसमें कहां से आ जाता है, लेकिन इस निश्चयात्मक बुद्धि में बड़ी शक्ति होती है। जिस अचेत से वह सचेत होता है, जिस अव्यक्त से वह व्यक्त होती है, सम्भवतः मनुष्य की यही शक्ति सनातन है आत्मा और परमात्मा है। और यह व्यक्तिकरण होता कैसे है, उसकी निश्चयात्मक बुद्धि द्वारा अव्यक्त प्रेरणा से, या फिर निरन्तर हृदय पर अंकित होते रहने वाले निश्चयात्मक विचारों से।. सम्भवतः यही सब अव्यक्त राजेश के केवल मात्र 'नहीं' से व्यक्त हो मुख मण्डल पर अंकुरित हो गया।

राजेश उठ खड़ा हुआ। विनय भी तैयार हो चुका था अतः दोनों साथ ही बाहर आ गए तथा स्टेशन की ओर पैदल ही चल दिए। कुछ देर चुप रहने के बाद विनय ने फिर प्रश्न किया, 'वास्तव में तुम्हारी सही सम्मति क्या है।' विनय ने सोचा संभव है उसने आवेश में कह डाला हो। राजेश इस बार कोई निश्चयात्मक उत्तर नहीं दे सका, सम्भवतः वह भी अब तक निश्चित 'नहीं' के साथ संदिग्ध 'हां' से उलझा हुआ था, अतः संदिग्ध भाषा में बोला, 'इस बार तो खानदान का पूरा कबीला ही पीछे पड़ गया है। देखो पंच परमेश्वर क्या निर्णय देते हैं।'

'तो तुम उस निर्णय को स्वीकार करोगे या नहीं' विनय ने अपने हृदय के संदेह को मिटाने के लिए बात स्पष्ट रूप से जाननी चाही।

'वैसा ही करना पड़ेगा, जैसे परिस्थितियां करायेंगी।'

'तुम भी परिस्थितियों के दास हो।'

'और तुम क्या परिस्थितियों को मनुष्य का दास समझते हो।'

विनय ने गम्भीर होते हुए कहा, 'मैं क्या समझता हूं, इसमें अभी संदेह है क्यों कि अभी मैं खुद को नहीं समझ पाया, फिर परिस्थितियां

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तो वाह्य वातावरण की चीज हैं।'

राजेश ने कहा 'भीतर से बाहर की चीज समझना बहुत आसान है। तुम भीतर से क्या हो कोई नहीं जान सकता, लेकिन बाहर से तो ..'हाड़-मांस का एक पुतला ही हूं' विनय ने वाक्य पूरा करते हुए आगे कहा, 'पंच परमेश्वरों का एक साकार रूप, दस रथों का एक अश्व हूं, यदि कुछ हूं तो भीतर ही हूं, यदि भीतर से कुछ नहीं तो केवल एक मशीन मात्र हूं जो जरा सी भूल में बड़ा-से-बड़ा भी अहित करने में नहीं चूकती।'

'जब देखता हूं तुम्हें गहराई में ही पाता हूं, अरे जीवन का आनन्द तो ऊपर से ही है, भीतर तुम स्वयं जो आनन्द चाहो उठा लो, संसार तथा समाज को लाभ नहीं पहुंचा सकते' राजेश ने व्यंग करते हुए कह डाला।

मैं समझता हूं इससे भी थोड़ी गहराई में यदि लोग डूबने का प्रयास करें, तो सभी को लाभ रहेगा। लेकिन इन मशीनों का बाहरी कोहराम भीतर झांकने ही नहीं देता। लोगों को समझना चाहिए जैसे आंधी-वर्षा में घर का कमरा रक्षा तथा शांति और सुख देता है, जैसे कमरे में बैठे हुए आप शीतल पवन और फुहारों का आनन्द उठाते हुए भी भीगने से बच जाते हैं। ठीक वैसे ही मानवीय क्रियाओं से आप सुरक्षित रह सकते हैं। लेकिन लोग समझते हैं, वहां कुछ भी नहीं जो भी है भीगने में, देखो न बच्चे फुहारों में आनन्द उठा कर उछलते कूदते और बीमार पड़ते हैं और बड़े कमरे में ही आनन्द उठा लेते हैं।'

स्टेशन आ गया। राजेश को इस समय दूसरी चिन्ता थी बोला, 'मेरी गाड़ी का समय हो गया, मैं चलता हूं, तुम सीधे मेरे यहां चले जाओ।'

'मैं वहीं जा रहा हूं' विनय ने उत्तर देते हुए आगे कहा, 'देखूं तो तुम्हारी कीमत क्या है।'

राजेश मुस्कराते हुए प्लेटफार्म की ओर चल दिया और विनय धीरे-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

धीरे राजेश के घर की ओर।

'आखिर मैं जो समझता हूं, उसे लोग समझने की कोशिश क्यों नहीं करते। क्या मैं जो सोचता और समझता हूं सब ग़लत है। केवल मेरी अज्ञानता है क्या? या मेरी ग़लत धारणा है, विश्वास है अथवा विषम है। यदि मैं ऐसा होता तो मनुष्य स्वाभाविक क्रियाएं भी न करता, उन्हें भी भेंट देता। इसमें अवश्य ही अज्ञानता है, जो मनुष्य को समझने का, सही रास्ते पर आने का, स्वार्थ तथा स्वाभिमान की रक्षा वश रोक लेता है, वह अज्ञान है। वह उन सारी क्रियाओं को करने में रत है, जिनमें उसका अपना स्वार्थ निहित है।'

राजेश के यहाँ जब विनय पहुंचा तो इष्टमित्रों तथा सम्बन्धियों का एक छोटा सा मेला लगा था। सभी इस बात पर आश्चर्य प्रकट कर रहे थे कि आखिर ऐसे ऊंट की नकेल हाथ आ ही गई, जो काबू से बाहर होता जा रहा था। राजेश और विनय की घनिष्टता से अधिक लोग परिचित थे अतः उसे देखते ही एक मियां ने कहा, 'लो अब तुम्हें भी संशय करने की गुंजाइश नहीं रह गई, आखिर राजेश को मानना ही पड़ा।'

विनय ने उपेक्षित होते हुए भी तनिक मुस्करा कर कहा, 'अभी तो पहला कदम है; जरा आगे तो बढ़िये और फिर यह तो बड़ी खुशी की बात है, मैं अपनी ओर से पांच रुपए का प्रसाद बांटूंगा, जरा बिल्ली के गले घन्टी लटक तो जाने दो।'

"यह भी खूब रही, अभी आपको कुछ सन्देह है क्या?" एक सज्जन। मध्यस्थ से विनय पर हल्का सा व्यंग करते हुए बोले।

'सन्देह तो वहां होता है जहां सम्भावना हो, सत्य में सन्देह कैसा?' विनय के मुंह से सन्देह की परिभाषा सुनते ही मध्यस्थ महोदय सकपका गए,' तो क्या यह सब झूठ है, यदि उसे स्वीकार न होता तो परीक्षा ही क्यों लेता?'

सारे का सारा वातावरण अचम्भित तथा सत्य और सन्देह के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

थपेड़ों में अस्थिर होकर विनय के शब्दों पर विचार करने लगा। मध्यस्थ की दूसरी बात का उत्तर देते हुए विनय बोला, 'आदमी जो गलत रास्ते पर सही समझ कर चल रहा हो, मुझे उस पर इस दृढ़ता से विश्वास करना नहीं आता, मैं तो सही तब मानूंगा जब घर में भाभी जी आ जायेंगी।' यह बात सुनते ही सभी की मुखाकृतियों पर सन्देह की सलवटें पड़ गईं, किन्तु मध्यस्थ जी ने व्यंग भरी मुस्कराहट के साथ कहा, 'ठीक है, हम सब विश्वास किए लेते हैं, आप बाद में कर लीजिएगा।' इस पर सभी उपस्थित लोग हंस पड़े, विनय ने भी व्यंग भरी मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया, 'आपका विश्वास आपको आज मुबारक हो, और मुझे विश्वास प्राप्त होने का सुदिन, तथा सुअवसर।' वह बोले,' चलो ऐसा ही सही, अभी तो आप मुंह मीठा कर ही लीजिए।' इतना कहते हुए उन्होंने एक मीठे की प्लेट मेज पर से उठा कर विनय की ओर बढ़ा दी।

'जरूर-जरूर' विनय ने प्लेट हाथ में लेते हुए आगे कहा, ईश्वर करे यह मिठास सदा बनी रहे। फिर बूँदी का लड्डू उठाकर मुख में रखने से पहले पूछा, 'लेकिन राजेश नहीं दीखा।'

'उसे कुछ आवश्यक काम था दोपहर की गाड़ी से इलाहाबाद गया है,' मध्यस्थ जी ने उत्तर दिया।

धीरे-धीरे भीड़ हट गई। अभय राजेश के एक दूसरे मित्र तथा मध्यस्थ उपाध्याय जी और विनय बस तीन व्यक्ति कमरे में रह गए! उपाध्याय जी बोल तो बहुत कुछ गए थे लेकिन सन्देह अभी उनके हृदय में करवटें ले रहा था, अतः उन्होंने पूछा, 'क्या वास्तव में अभी आपको सन्देह है विनय बाबू!'

'मैं भला किसी के अन्तर की बात क्या जानूँ, जैसा मेरी समझ में आया वैसा कह दिआ।' विनय ने उत्तर दिया।

'क्या शहर में उसका किसी से सम्बन्ध है?'

'मुझे तो नहीं मालूम, अभय जी जानते हों तो और बात है।'

अभय जी, जो अब तक ध्यान से वार्तालाप सुन रहे थे, अपना नाम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुनते ही एकदम सकपका गए, 'मुझे क्यों सान रहे हो भाई जो बात तुम्हारे साथ है. मेरे साथ कहाँ ?'

'मैंने सुना है आप ही उसके एक अभिन्न मित्र हैं' उपाध्याय जी ने अपने प्रश्न की पुष्ट धारणा को सहयोग देते हुए कहा।

'मुझे तो इसमें भी सन्देह है. उपाध्याय जी, अभिन्न होता तो मैं भी इलाहाबाद की ट्रेन में होता।'

'आप तो मज़ाक करने लगे।'

'अच्छा तो अभिन्न ही समझ लीजिए।'

'फिर तो यह बात आपको आवश्य मालूम होनी चाहिए, भले ही आप न कहें।' उपाध्याय जी ने अपना सन्देह प्रकट किया।

'आपका दृष्टिकोण तो ठीक हो सकता है, पर सत्य कुछ और ही है।'

वह कुछ उत्सुक होते हुए बोले, 'वह क्या ?'

'यही कि इस विषय में मुझे कुछ भी नहीं मालूम।' उनका चेहरा उतर गया, फिर भी कुछ ढिठाई से बोले, 'विवाह तो अब होकर ही रहेगा, आपकी संदिग्ध बातों से हम अपना निर्णय तो नहीं बदल सकते।'

'मैंने तो आपसे कोई ऐसी संदिग्धता नहीं प्रकट की, आप अकारण ही मुझ पर संदेह बढ़ा कर लांछित कर रहे हैं।' विनय ने अपनी स्थिति को बिगड़ते देख स्पष्ट किया, लेकिन उपाध्याय जी ने एक व्यंग और कसते हुए कहा," मैं आपको शादी का निमंत्रण देता हूं, अपनी ओर से भी।'

'वह मुझे सहर्ष स्वीकार है' इतना कहते हुए विनय उठ खड़ा हुआ, तब उपाध्याय जी ने फिर पूछा, 'तो आप बारात में निश्चित रुप से आ रहे हैं न ?' इस बार विनय ने फिर एक संदिग्ध व्यंग कसते हुए कहा, 'अजी साहब, राजेश की शादी और भला न आऊं, मुझे तो वर्षों से प्रतीक्षा है, वह दिन आये तो।' कहते हुए बोला, 'अच्छा अब मुझे आज्ञा दीजिए। 'नमस्ते' 'नमस्ते' किन्तु उपाध्याय जी की स्थिति ठीक वैसी ही थी जैसे बौड़ियाली हवा में कटी पतंग।

विनय वापस चला आया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१८

★★★

मैं अस्पताल से वापस आ गया । कोठरी पर पहुंचा तो ठकुराइन नहीं थी । मेरे मन में तमाम सन्देहात्मक विचार उठने लगे । तभी देखा ठकुराइन कुछ लकड़ियां लिए चली आ रही है पास आते ही मुस्करा कर बोली, 'जरा देर हो गई आने में, कितनी देर हुई आये ।'

'अभी-अभी आया हूं' मेरे हृदय का सन्देह जाता रहा ।

ठाकुर दिन पाली में थे अतः मेरे सन्देह को कोई गुंजाइश नहीं थी लेकिन बार-बार मेरे मस्तिष्क में काली बाबू की सहानुभूति चक्कर काट जाती, आज मुझे इतने दिनों तक अस्पताल में रह कर ठकुराइन को अकेला छोड़ने का दुख था । मैंने अस्पताल में पड़े-पड़े जंगल में सफर करने के लिए ठकुराइन से चार बोतल मिट्टी का तेल, एक सेर नमक और चार छः माचिसें तैयार रखने के लिए कह दिया था । अस्पताल से आने पर मुझे तीन दिन का अवकाश और मिल गया था, और इन तीन दिनों में मैंने मिट्टी के तेल की बोतलें जंगल में जा कर छिपा दीं । तीसरे दिन हमें वहां से चल देना था, उस दिन जब हम लकड़ी काटने के लिए चले तो ठकुराइन ठिठक गई, मैंने पूछा 'क्यों रास्ते की कठिनाइयों से डर गईं ।'

'नहीं बाबू, 'अब मरना यहां के जीने से ज्यादा अच्छा होगा ।'

'क्यों ?' साश्चर्य मैंने पूछा ।

'तुम बुरा न मानो तो कहूं' कहते हुए वह उदास हो गई और उनकी पलकें एक-एक भारी हो गई ।

'कहो न !'

'अब मैं तुम्हारे साथ जाने लायक नहीं रह गई ।'

'क्या हुआ' मैंने संदेहात्मक स्वर से पूछा ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'अब मैं वह नहीं रही बाबू जो तुम्हारे अस्पताल जाने के पहले थी, यहां के लोगों ने ...' कहते हुए वह रुक गई, उनकी जबान बन्द हो गई और आंखों से झर-झर बरसात होने लगी।

मैं समझ गया, फिर भी मैंने स्पष्ट रूप से जानने के लिए पूछा, 'बताओ न क्या हुआ, कैसे हुआ ?'

'यह सब मुझसे न कहा जायेगा' उन्होंने बड़े कष्ट से यह बात कह पाई और मेरे पांव पकड़ते हुए फिर बोली, 'शक्तिहीन का यहां जीना सम्भव नहीं है। मुझे अब नर्क में ही तड़प-तड़प कर मरना पड़ेगा।'

उस समय मैं क्रोध से कांपने लगा, जी में आया इसी समय इसका गला घोट दूं और मैंने दोनों हाथों में उसका गला दाबते हुए कहा, 'नीच, दुष्टा।'

बड़े कष्ट से वह कह पाई, 'जरा और जोर से बाबू, जरा और जोर से मेरी मुक्ति हो जाय।'

मैंने उसका गला छोड़ दिया, मुझे ऐसा लगा कि मैं किसी गुनाह में खुद हाथ डालने जा रहा हूं। गला छूटते ही वह जमीन पर गिर गई और बोली, 'बाबू आदमी की इन शक्तिशाली बाहों से स्त्री को मार देना कितना आसान है। मुझे मार दो ! नहीं तो .....वह बोल नहीं सकी। लेकिन उनकी इस बात ने मेरे हृदय में सहानुभूति के अंकुर उपजा दिए। वास्तव में स्त्री असहाय, बेबस, और शक्तिहीन ही है। ऐसे स्थल मानव जीवन में बहुत ही कम आ पाते हैं जब वह अपने स्वार्थ को, अपने आवेश को, क्रोध को रोक कर दो क्षणों को निष्पक्ष भाव से किसी बात पर विचार कर सके। अपने अहं में मनुष्य सदा से उचित-अनुचित पर विचार करने में असफल रहा है। ठकुराइन ने अपने को सम्भालते हुए आगे कहा 'तुम आदमी हो, तुम्हारे पास साहस है, शक्ति है इस बंधन से छुटकारा पा जाना आसान है, और मैं ...मैं तुम्हारे सहारे ही मुक्ति पा सकती थी लेकिन जाओ बाबू, तुम जाओ, तुम भी तो आखिर एक पुरुष ही हो न......उनकी आंखों के आँसू सूख चुके थे, एक-एक शब्द

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मेरे हृदय पर अंकित होता जा रहा था और मैं वास्तविकता समझने में अपने को सफल पा रहा था। एक विचार आया, मैंने अपने स्वार्थान्धता के अवसर पर क्यों नहीं सोचा कि वह दूसरे की भी हैं, अब इस पर इतना रोष क्यों, दुख क्यों, समय कम था अतः मैंने सोचा अभी यहां से चल देना ही उचित है अतः मैंने कहा, चल 'अगर मेरे साथ ही मरना है तो चल उठ।'

वह तुरन्त उठ खड़ी हुई। हम दोनों लकड़ियां लेने के बहाने जंगल की ओर चल दिए।

मैंने कह तो दिया, लेकिन मेरे मानसिक झंझावातों का क्रम अभी कम नहीं पड़ा था। सोचा ठकुराइन को थोड़ी से देर के लिए अपने मस्तिष्क से यह समझकर निकाल दिया जाय कि उनसे मेरा कोई सम्बंध रहा है या है। तो...तो . क्या मेरा अधिकार है उन पर...सम्बन्ध अगर था तो क्या...क्या यह उचित था। नहीं फिर हुआ क्यों?...किसी आवेश में...स्वार्थवश रूप और यौवन के आकर्षण में...लेकिन...यह दुर्घटना अगर तुम्हारी स्त्री के साथ ही होती तो क्या तुम इसे छोड़ देते क्या उसे इस खदान के कामुक कुत्तों का आहार बना देते... उन्हें क्या मिला केवल एक शरीर वह भी बेबस, अशक्त बर्बरता के शिकजें में कसा हुआ, फिर उसका दोष ही क्या था। ऐसी परिस्थितियों में अशक्त शरीर की रक्षा असम्भव है, लेकिन मन...मन तो उसका निष्पाप ही है, फिर दोष कैसा......

अब तक हम लोग जंगल में पहुंच चुके थे। हम लोगों को पहुंचने में कुछ देर हो गई थी श्रमिकों की भीड़ हट आई थी, दो चार इधर-उधर बिखरे हुए रह गए थे, वनमें से कुछ तो लकड़ियां काट रहे थे, कुछ कटी हुई लकड़ियों को जमा कर रहे थे, और कुछ अपने गट्ठर बांधने में व्यस्त थे। हम स्वाभाविक गति से आगे बढ़ते गए। एक ओर एक लम्बा पड़े देख मैं उधर बढ़ गया।

पेड़ के नीचे खड़े होकर मैंने एक बार इधर-उधर दृष्टि डाली, सब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लोग अपने अपने काम में व्यस्त ही नजर आए अतः मैं पेड़ पर चढ़ने लगा। मेरे मन का मैल छट गया था अब मैं ठकुराइन को फिर उसी दृष्टि से देखने लगा। मुझे उनकी कही हुई कुछ बात याद आ गई अतः मैंने पूछा, 'तुम तो बहुत कुछ कहती थी, खाली हाथ कैसे आई।'

चट से मुस्कराते हुए उन्होंने कहा, 'मैं जो कहती थी सब पूरा है। देखो तुम भी नहीं जान पाये' और उन्होंने अपने उभरे हुए वक्ष की ओर आँखों का इशारा किया ठकुराइन के इस इशारे से मैं सब कुछ भूल गया आज वह मुझे पहले से भी अधिक आकर्षक लगी, मैंने व्यंग करते हुए कहा, 'जो स्वयं छिप कर रहना चाहे पर छिप न सके, वह भी दूसरों को छिपा सकता है यह मुझे आज ही मालूम हुआ।' उन्होंने बड़ी सरलता से उत्तर दिया, जो अपना मूल्य जानते हैं वह छिप कर ही रहते हैं, और दूसरों को छिपाने का स्थान भी रखते हैं।' इतना कहते हुए वह तनिक मुस्कराई फिर बोली, एक बात तो बताओ, मैं अपने पैरों ही चल रही हूं न तुम्हें भार तो नहीं लगती।'

'बिल्कुल नहीं अब तो मुझे बढ़ने का साहस भी तुम से मिल रहा है।' इतना कहते हुए मैंने लकड़ी काटना आरम्भ कर दिया।

'लेकिन मैं तो तुम्हारे ही सहारे चल रही हूं' उत्तर मिला।

मैंने कोई उत्तर न दिया और पेड़ की ऊंचाई पर चढ़ने लगा। वह नीचे गिरी लकड़ियों को जमा करने लगी। इसी समय वहां से एक परिचित गुजरा, ठकुराइन को देखते हुए उसने साश्चर्य कहा, आज बड़ी देर कर दी' 'क्या करूं खाना बनाने में देर हो गई' ठकुराइन ने सीधे-साधे स्वर में उत्तर दे दिया।

वह चलता जा रहा था, बोला, 'तुम्हें डर भी नहीं लगता, जो इतने घने जंगल में चली आती हो।'

उन्होंने तपाक से उत्तर दिया, 'साथी भरोसे का हो तो डर कैसा।'

वह हंस पड़ा, 'बड़ा विश्वास है' अब तक वह कुछ पग आगे बढ़ चुका था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैंने सब से ऊंचाई पर जा कर चारों ओर दृष्टि डाली, एक ओर श्रमिक दल लकड़ियों के वण्डल लादे नदी पार करता हुआ दृष्टिगत हुआ और दूसरी ओर सांय-सांय करता हुआ घनघोर वन प्रदेश, जिसका कोई अन्त नहीं था। मैं कुछ सहम गया, फिर धीरे-धीरे उतरकर लकड़ियां समेटने लगा। ठकुराइन को मैंने एक ओर इशारे से बताया कि वह अपनी धरोहर उठा ले अतः उन्होंने मिट्टी के तेल की चारों बोतलें साथ में लाये हुए एक खाली झोले में रख लीं।

भगवान भास्कर की रक्तिम आभा शेष रह गई थी, जो एक ओर तो कुछ झलक दे रही थी और दूसरी ओर से अंधकार उभरता आ रहा था। उसी अंधकार के मुंह में हमें प्रवेश करना था मैंने एक बार ठकुराइन की ओर देखा जैसे मैं अपने हृदय में छिपे भय को उनके भय से तोलना चाहता हूं, अपने साहस को उनके साहस से मिलाना चाहता हूं, उनकी दृष्टि में अमूक आशंका थीं, भय था और मेरे प्रति असीम विश्वास की भावना। उन्होंने बढ़कर मेरे वक्षस्थल पर अपना सर रख दिया।

मैंने एक बार उनकें बालों पर हाथ फेरा और दृढ़ विश्वास के साथ कहा, 'चलो, जो आगे बढ़ते हैं, ईश्वर उनकी सदा सहायता करता है।'

हम दोनों सरपट उस सांय-सांय करते हुए बन प्रदेश में घुस पड़े। जब तक पूर्ण अंधकार अपनी छाया में जग समेट पाया, हम लगभग दो मील की यात्रा पार कर चुके होंगे।

रास्ते में ठकुराइन ने पूछा, 'यह सामान क्या होगा।'

मैंने उत्तर दिया-'तेल तो प्रकाश देगा, और माचिस आग।'

'और नमक।'

'तुम्हें नहीं मालूम, इस जंगल में जोंकें बहुत बड़ी-बड़ी हैं, उन्हें छुड़ाने की यह बहुत अच्छी दवा है' इतना कहते हुए मैंने उनके एक चुटकी ली। सारचर्य वह बोली, 'जोंकें भी हैं ?'

मैंने मुस्कराते हुए व्यंग किया, 'हां-हां जोंक, जैसे तुम।'

'मैं' उन्होंने बड़े ही भोले रुख से कहा, 'सो कैसे ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'देखो न चलने का नाम लिया नहीं कि चिपक गईं ।'

उन्होंने सर झुका कर कहा, 'फिर तुम क्या हो।'

'ओ हो, मैं यह तो मैं अभी तक नहीं जान पाया कि मैं क्या हूं ।'

धीरे-धीरे अंधकार की गहनता बढ़ने लगी । पक्षियों के समुदाय में पूरी नीरवता छा गई, हम लोगों को चलना भी भारी पड़ने लगा, चारों ओर अंधेरा, सन्नाटा और जंगली जानवरों की डरावनी आवाजें आनी आरम्भ हो गईं, भय से हम दोनों सिहर उठे और एक दूसरे के पास आ गए, 'अब क्या होगा,' सहमी हुई-सी कांपती आवाज में वह बोली ।

मैंने भी साहस बटोरते हुए कहा,' डरो नहीं, अभी प्रबन्ध करता हूं ।'

मैंने आंखों पर जोर डालते हुए चारों ओर देखा, घनी झाड़ियां, ऊंचे-ऊंचे पेड़ और चारों ओर बलखाती हुई लतायें, एक सन्नाटा, जो श्मशान भूमि से भी ज्यादा भयंकर, तथा डरावना था । अचानक उन्होंने पीछे की ओर मुड़ कर देखा, 'वह देखो ।'

मैंने देखा दूर तक दौड़ती हुई प्रकाश की एक रेखा-सी दीख पड़ी । सम्भव है वह लोग हमें खोजने आये थे, किन्तु उस प्रकाश की रेखा से मैंने अनुमान लगाया कि हम काफी दूर आ गए हैं और ऐसे गहन अंध-कार में वह इस वन में प्रवेश करने का साहस नहीं कर सकेंगे । फिर, भी मैं ध्यान से उस ओर देखता रहा ताकि प्रकाश की गति से मुझे उनकी क्रियाओं का अनुमान मिलता रहे । किन्तु चारों दिशाओं में देख-देखकर वह लोग सम्भवतः वापस लौट चले, क्योंकि जो प्रकाश की रेखा अपनी ओर दौड़ती हुई देख रहा था, वही एक हल्की आभा-सी विपरीत दिशा में मालूम पड़ी ।

मैं कुछ विचार करने लगा, क्योंकि मिट्टी का तेल प्रयोग करना ठीक नहीं था, जरा-सा प्रकाश भी उन लोगों को मेरे वहाँ होने का संकेत दे सकता था । ठकुराइन के पास एक छोटी-सी टार्च थी जिसे वह छिपा कर ले आई थी ।

मेरी ओर बढ़ाते हुए बोली, 'यह लो इससे कुछ काम चलेगा ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मानो मुझे प्राण मिल गए हों, मैंने टार्च लेते हुए कहा, 'तुमने तो मेरे भी कान काट लिए।'

उन्होंने हंसते हुए कहा, 'मैंने गांव में एक किताव पढ़ी थी, उसकी कहानी याद आ गई।'

मैंने पूछा, 'क्या नाम था उस कहानी का।'

वह चट से बोली, 'जंगल रहस्य।'

मैंने हंसते हुए कहा, 'फिर तो आगे-आगे तुम्हें चलना चाहिए।'

उन्होंने वड़े भोलेपन से कहा, 'क्या करूँ तरकीवें तो मालूम हैं, लेकिन रास्ता नहीं!'

इसी समय कुछ खटखटाहट की आवाज हुई, वह मेरे बदन से आ कर सट गईं, 'हाय राम!'

मैंने उस टार्च से अपने चारों ओर देखा तो सूखे पत्तों पर किसी कीड़े के रेंगने की गति दिखलाई पड़ी और कुछ भी न था, इधर-उधर दो चार पेड़ों पर मैंने प्रकाश फेंक कर आश्रय ढूँढ़ लिया और एक पेड़ के तने पर हम दोनों चढ़कर मोटी शाखा पर निकल गए। ठकुराइन सहमी हुई सी मुझसे सटकर बैठते हुए बोली, 'क्या यहीं रात गुजार दोगे?'

'हां अब बढ़ना ठीक नहीं?' कहते हुए मैंने उनकी कमर में हाथ डालकर कस लिया। वह भय से कांप-सी रही थी, 'डरो नहीं, मैं तो हूं, आगे बढ़ना अब ठीक नहीं है क्योंकि अभी तक वह लोग पहाड़ी पर नहीं पहुंचे होंगे, हम प्रकाश कर नहीं सकते। क्योंकि प्रकाश से उन्हें हमारी स्थिति का ज्ञान हो जायेगा। अभी थोड़ी-सी देर में चांद निकल आयेगा, तव कुछ सोचूँगा।'

चांदनी छिटकने तक हमने दो मशालें बनाकर तैयार कर लीं। तथा पक्षियों के कलरव के कुछ पूर्व ही, मशालें जलाकर हम आगे बढ़ चले।

हम उस घने जंगल में ही बढ़ते जा रहे थे, ठकुराइन ने कहा,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'अब तो हम दूर निकल आये हैं, क्यों न जंगल की बाहर की ओर निकल चलें।'

मैंने कहा, 'नहीं सीधा ही चलना होगा, इधर-उधर भटकने से दिशा भ्रम हो जाने का डर है, और फिर कहीं रास्ता भूल कर हम वापस पहुंच गए तो ?'

वह सुनते ही कांप उठी।

इस प्रकार दोपहर तक हम अविराम चलते रहे, फिर हमने झरना देखा।

ठकुराइन ने कहा, 'चार पनेकियां बांध लाई हूं भूख नहीं लगी क्या ?'

आंशका और भय से भूख-प्यास जैसे डरकर भाग गई हो, लेकिन रोटियों का नाम सुनते ही एक पग बढ़ना भी भारी हो गया। हम दोनों वहीं एक ओर झरने के किनारे बैठ गये और नमकीन रोटी का आनन्द लेते हुए बातें करने लगे। मैंने पूछा, 'रोटी कैसे छिपा लाई मैंने तो देखा भी नहीं।'

'बस उस खाली झोले में थीं।'

'तुमने तो जैसे कहानी रट रखी हो, मैंने तो खाने की बात सोची भी नहीं थी।'

उन्होंने कुछ लजाते हुए संकोच प्रगट किया, 'कहां, एक दिन का ही प्रबन्ध कर पाई थी, क्या कल तक हम किसी ठीक-ठिकाने तक नहीं पहुंच पायेंगे।'

मैंने एक घूंट पानी पीते हुए कहा, 'क्या मालूम, कल या कभी कहीं पहुंच भी पायेंगे या !.....कहते हुए मैं रुक गया और उनकी ओर देखा।

वह इस बात को सुनते ही सिहर उठी, फिर भी मुझे साहस देने का प्रयास करती हुई बोली, 'जब चल ही पड़े हैं तो कहीं न कहीं पहुंच ही जायेंगे।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैंने एक निःश्वास छोड़ते हुए कहा, 'अनजाने रास्ते पर बढ़ जाने से आदमी भटकता ही रह जाता है।'

मेरी बात उनकी समझ में नहीं आई, मेरे हृदय में विश्वास बढ़ाते हुए बोली, 'तुम साथ हो चिन्ता कैसी अब मुझे तो मरना भी पड़ा तो उन दुष्टों से छुटकारा पाकर, वह भी मेरे लिए अच्छा है।'

'और अगर मैं मर गया। और तुम......'

उन्होंने मेरे मुंह पर हाथ रख रोकते हुए कहा, 'ऐसा न कहो बाबू मेरा ही मरना अच्छा है, पहले मुझे ही मरना चाहिए।'

'अगर ऐसा हो गया तो।'

'तो भी मुझे मरना पड़ेगा, मैं अकेले कैसे रहूंगी इस संसार में, यहीं किसी पहाड़ी से कूद कर जान दे दूंगी या किसी शेर-चीते का पेट भर दूंगी।'

यह बात सुनते ही मेरा हृदय किसी अप्रत्याशित आशंका से कांप उठा फिर भी मैंने, विश्वासपूर्ण शब्दों में कहा, 'डरना नहीं चाहिए, चलो अब आगे बढ़ें।'

वह बोली, 'थोड़ी सी देर आराम कर लो तब चलेंगे।'

और हम दोनों वहीं झरने के किनारे एक ओर वृक्ष की सुखद छाया के नीचे लेट गए।

ठकुराइन की आंख पल भर में झपक गई। मैंने एक दृष्टि उसके शरीर पर डाली और उसकी पूर्णता में मुझे एक विशेष प्रेरणा, एक साहसिक अनुभूति का अनुभव हुआ। काश कि उसके शरीर पर कामुक नर-पिशाचों ने आक्रमण न किया होता तो हृदय में उठने वाली द्वेष की भावना न होकर मेरे जीवन में कितना उल्लास होता। फिर सोचा मैं भी तो हूं उन्हीं में से एक, भले ही मुझे उस ढंग से इसे उपलब्ध करने की चेष्टा न करनी पड़ी। नैतिकता की विशेषता तो व्यक्तिगत रुप से मेरे भीतर होनी ही चाहिए थी, जो दूसरे करते हैं वही मैं करूं या करता रहूं, तो मेरी विशेषता क्या ? दूसरे ऐसा करते इसलिए मैंने किया या मैं भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

करूँ की भावना ही क्यों उठती है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी विशेषताओं पर ही जीता है, अपनी नैतिकता पर ही गर्व कर सकता है। तभी उसका कल्याण है, मनुष्यता का कल्याण है।

फिर सोचा जो किया उसे निबाहना भी एक महत्वपूर्ण कर्म है। जिन्दगी हर रोज नए ढंग से शुरू होती है और हमें नए ढंग से ही अपने जीवन का उल्लास, अपने सिद्धांतों का प्रतिपालन, अपनी नैतिकता की रक्षा करनी चाहिए। यदि हमको वास्तव में एक मनुष्य कहलाने का अधिकार है तो मनुष्यता की रक्षा करना भी हमारा प्रथम अनिवार्य कर्म तथा उत्तरदायित्व भी है। उत्तरदायित्वहीन कोई अधिकार जीवित नहीं रहता। मैंने एक करवट बदली, ठकुराइन को अपने पास खींच कर चूम लिया। उसकी आंखें खुल गईं, 'अरे यह क्या ?'

'अब हमें चलना चाहिए।'

वह उठते हुए बोली, 'मैं तो सो गई, कितनी देन हो गई।'

मैं भी उठ खड़ा हुआ और हम दोनों चल दिए।

धीरे-धीरे शाम हो गई हम दोनों आगे ही बढ़ते जा रहे थे। कहीं से किसी ओर से, किसी भी बस्ती के दर्शन नहीं हुए, न कोई ऐसा चिन्ह ही दिखाई पड़ा जिससे पास में बस्ती होने का अनुमान लगाया जा सकता। धीरे-धीरे अंधेरा बढ़ने लगा, और कुछ देर बाद हम दोनों ने अपने को गहन अंधकार में पाया। आगे बढ़ना मुश्किल हो गया। हम रुक गए और कुछ सूखे पत्तों को बटोर कर जमा करने लगे। ठकुराइन ने भी हाथ बंटाया। पत्तों का एक बड़ा घेरा बना कर हम दोनों उसके बीच में बैठ गए, कुछ सूखी लकड़ियां भी बीच में रख ली थीं, फिर थोड़ा सा मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा दी।

उस गहन अंधकार में प्रकाश होते ही हम दोनों के हृदयों से कुछ भय कम पड़ा, तथा कुछ उत्साह और हर्ष की मिश्रित रेखायें, मुखों पर प्रतिबिम्बित होने लगीं। तथा उस भयंकर अंधकार को हम देखने लगे।

दूर तक फैला हुआ वह गहन अंधकार हमारे क्षणिक प्रकाश को भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अपने में समेटता हुआ-सा प्रतीत हो भयावना लगने लगा । केवल पत्तों और सूखी लकड़ियों के जलने से कुछ चिट-चिटाहट के सिवा सारा वातावरण मत्यु-सा शान्त था । कभी-कभी किसी जंगली जानवर के गुजरने से भी सूखे पत्ते फड़फड़ा उठते, जिससे हमारे हृदय कांप उठते और रोम-रोम सिहर उठता । कभी-कभी जंगली जानवरों की चमकती हुई आंखें ऐसा आभास देतीं मानो अंधकार स्वयं उस ओर से ताक रहा हो अथवा भय साक्षात् हमें उठा लेने के लिए आ गया हो । किन्तु आग के अथवा प्रकाश के भय से उनका साहस हमारे पास तक आने का नहीं हुआ ।

लेकिन वे आंखें भूखी थीं; उनके पेट में क्षुधाग्नि प्रज्ज्वलित हो रही होगी, किन्तु उसे शांत करने के लिए वह आग में नहीं कूदना चाहते थे, उसी क्षुधा के लिए मनुष्य क्या नहीं कर उठाता ? विनय ज़रा विचार करो पशु भी अपने हित में सोचने के लिए हम से विचारवान हैं । हम दूसरों को शिक्षा अवश्य देते हैं किन्तु यह सब बातें अभ्यासिक रूप में हम ग्रहण नहीं कर पाते । क्योंकि दिया तले अंधेरा होता है न ! सही तो यह है कि हम भटक गए हैं, हमारे पास मान मर्यादा का आडम्बर, बौद्धिक तथा वैज्ञानिक शक्ति है, किन्तु हम उसका समुचित प्रयोग नहीं कर सकते, तभी तो प्रत्येक शक्तिवान इस सार्वभौम सत्ता का अधिनायक होने के लिए सचेष्ट है ! हमारे पास प्रतिक्रियात्मक नाश करने की बौद्धिक शक्ति बहुत बढ़ गई लेकिन सृजन ज्ञान कम होता जा रहा है । तभी तो हम अपनी शक्ति का गलत अनुमान लगा, सार्वभौम अधिनायक होने का स्वप्न देख रहे हैं ।

'आप तो राजनीति की ओर चल पड़े बाबा ? हमें इनसे क्या प्रयोजन ? विनय ने टोक दिया तो बाबा ने खांसते हुए कहा—है, क्यों नहीं ! इसके मूल में तो व्यक्तिवाद है न ! सैकड़े से अधिक महत्व तो इकाई का है न, फिर भी सैकड़ा अपने को बड़ा समझता है, या यूं समझ लो एक अपने दो बिन्दुओं से अपना महत्व अधिक समझता है ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लेकिन उस ओर किसी का ध्यान नहीं जाता। यदि इकाई का स्थान सही है तो सैकड़ा भी सही होगा, एक का महत्व होगा अन्यथा हम सदा ऐसे ही रोते रहेंगे। सैकड़ों से इकाई नहीं बनती बल्कि इकाई से सैकड़ा बनता है।'

विनय ने कुछ सन्देहात्मक समर्थन किया, 'मान लो बात ठीक है लेकिन इस युग की तो प्रत्येक इकाई अपने को सैकड़ा समझती है और इस समस्या का सुलझना कठिन ही नहीं वरन् असम्भव हो गया है।'

बाबा ने समर्थन करते हुए अपना मत प्रगट किया, 'यह तो ठीक है, लेकिन उस ओर हम यदि व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना आरम्भ कर दें तो कठिन और असम्भव होते हुए भी हम आने वाली पीढ़ियों में यह सब संभव रूप से देख सकते हैं। असंभव तो हमारी जड़ता का चाचा और चेतना का भतीजा है, यह हमारे अन्तर की पुकार है, विनय! जिसे दूषित मनोवृत्तियों ने दबोच रक्खा है। हमें ऐसी मनोवृत्तियों के प्रति मानसिक क्रान्ति की आवश्यकता है जो सदा संभव रही है।'

विनय ने विषय बदला, जो आंखें दिखलाई दी थीं उनके शरीर नहीं देखे आपने?'

देखे क्यों नहीं, वही शेर चीते थे, जिन्हें हम अजायबघर में कैद देखते हैं, उन्होंने अग्नि के पास आने का साहस अवश्य किया लेकिन खतरा उठा नहीं सके। यदि वे चाहते तो एक छलांग में हम उनके शिकार होते। बस इतना ही तो अन्तर है मनुष्य और पशु में, एक अनावरित खतरा उठाने से डर जाता है और दूसरा खतरे से ही खेलता है।'

बाबा ने बीड़ी सुलगाते हुए फिर कहा, 'ठकुराइन भय से आतंकित थी उनके हृदय की धड़कन ऐसी नीरवता में साफ सुनाई पड़ रही थी, फिर भी अलसाई हुई आंखों से मेरी ओर देखते हुए बोली, 'मुझे तो नींद लग रही है, और डर भी! तुम्हें डर नहीं लगता क्या?' इतना कहते हुए मेरे सीने पर अपना हाथ रख कर वह हृदय की धड़कन को परखने लगीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैंने कहा, 'मेरी जांघ पर सर रख कर सो जाओ न। मैं तो जाग रहा हूं फिर डर कैसा !'

'हूं, अगर कहीं तुम्हें भी नींद आ गई तो' उन्होंने आशंका प्रगट की।

'वह भी तुम्हें सौंप दूंगा, तुम लेट भी जाओ' और मैंने उन्हें अपनी जांघ पर सर रख कर लिटा लिया।

इस प्रकार मेरी दृष्टि उनके मुख पर पड़ी। भय और शंका की बनती बिगड़ती रेखाएं विद्यमान थीं जो ऐसे अदृश्य होती-सी प्रतीत हुई मानो वह कृत्रिम प्रकाश अंधकार को समूल नष्ट कर देने का उपक्रम कर रहा हो।

समय-समय पर अग्नि को प्रज्वलित रखने के लिए मैं तेल के दो चार छींटे मार देता तथा पत्ते और जमा की हुई लकड़ियां भी डालता जाता, साथ ही चारों ओर देखता भी जाता कि कहीं से कोई अप्रत्याशित विपत्ति न आ खड़ी हो। इसलिए मेरे विचार स्थिर नहीं रह सके और रात यूं ही आंखों में कट गई।

पक्षियों की प्रभाती के साथ ही हम दोनों वहां से बढ़ चले। उन दो दिनों में हमने एक लम्बा रास्ता पार कर लिया था। आश्चर्य ता इस बात पर बढ़ता जा रहा था कि जितना ही हम आगे बढ़ते जाते, वनकी सघनता भी बढ़ती जाती। न तो हम छोड़े हुए मार्ग का ही कुछ अनुमान लगा पाते थे, और न आगे के लिए। पाथेय भी नहीं था। दो पहर हो चली थी, पांव भारी होते जा रहे थे, और भूख से अशक्तता भी बढ़ती जा रही थी। बड़े-बड़े वृक्षों के बाद छोटी-छोटी झाड़ियां आ गईं, पथ की दुर्गमता और बढ़ गई और ऐसा प्रतीत होने लगा कि हम किसी नदी की घाटी की ओर बढ़ रहे हैं।

मेरा अनुमान सही निकला, हम एक नदी के किनारे जा पहुंचे। यह नदी दोनों ओर से वन की गहन सघनता में घिरी थी, तथा खदान के नीचे बहने वाली नदी से भी छिछली और मन्द प्रवाहिनी थी। एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ओर बांसों की सघनता जिसे हम किसी प्रकार पार कर तट तक पहुंच पाये थे, और दूसरी ओर केले के वृक्ष। थकान और क्षुधा से हमारा साहस दम-सा तोड़ रहा था। केले के वृक्षों को देखते ही उत्साह और साहस का संचार इस प्रकार होने लगा जैसे अचानक विद्युत की लहर-सी दौड़ गई हो।

हमने नदी पार की और केले के वृक्षों से पके केले ढूंढ़-ढूंढ़ कर खाने लगे। जब दो चार केले उदर में पहुंचे तब कुछ सन्तोष हुआ और ऐसा अनुभव होने लगा मानो हमें अपनी खोई शक्ति वापस मिल गई हो। ठकुराइन ने कहा, 'पेट तो भर गया, अब थोड़ा-सा पानी पीलूं तब जी को शान्ति आये' मैंने देखा वह खुशी से फूली नहीं समा रही थी। जैसे कोई निधि मिल गई हो। इस क्षणिक समय में हमने जिस स्वतंत्रता का अनुभव किया वह समय जीवन में कभी नहीं आया। मैंने कहा, 'तुम पानी पी कर आओ, तब तक मैं विश्राम का प्रबन्ध कर लूं।'

वह मुस्कराती हुई नदी की ओर पानी पीने चल दी। मेरे पास कुल्हाड़ी तो थी ही जो मैं लकड़ी काटने के लिए साथ में लाया था। अतः सोचा दस-बीस केले के पत्ते काटकर सुन्दर शीतल बिस्तर बना डालूं, क्योंकि केले के पत्तों पर विश्राम करने से पथ की क्लांति और शरीर की गर्मी शान्त होने की आशा थी अतः जब तक ठकुराइन पानी पीकर वापस आई मैंने बड़ा सुन्दर केले के पत्तों का बिस्तर एक ओर सुखद छाया में बिछा दिया था। देखते ही वह मुस्करा कर बोली, 'यह क्या, चलना नहीं है।'

मैंने उनकी ओर देखते हुए मुस्कराकर कहा, 'चलना तो है ही, न जाने कब तक, थोड़ा-सा आराम भी कर लिया जाय तो क्या बुरा है।' कहते हुए मैं उसी बिस्तर पर बैठ गया। मैंने उनकी ओर एक हाथ बढ़ाया उन्होंने उस पर अपना हाथ रख दिया। मैंने धीरे से झटका दिया और वह मेरी गोद में आ गिरीं।

मध्याह्न का समय था। सूर्य की प्रखरता से सारा वातावरण प्रभा-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वित था। हम दोनों उस एकान्त नीरव प्रदेश में कुछ समय के लिए ऐसे सो गए, जैसे संसार का कोई सुख हमें नहीं चाहिए या उस समय संसार के सभी सुख हमारे लिए नगण्य थे।

अपराह्न में हमारी आँख खुल गई। ठकुराइन ने कहा, 'मैं जरा हाथ मुंह धो लूं।'

मैंने कहा, 'मैं भी चलता हूं।'

हम दोनों ने हाथ मुंह धोये। ठकुराइन ने कहा, 'मन होता है नहा डालूं, सारी थकान चली जायेगी।'

मैंने मुस्कराते हुए कहा, 'नहा लो न, कपड़े न गीले करना, मैं तब तक रास्ते के लिए कुछ केले तोड़े लेता हूं।

कहता हुआ मैं किनारे की ओर बढ़ चला और वह मुझे देखते हुए मुस्करा दी।

मैंने अभी थोड़ से केले ही तोड़ पाये थे, अचानक मेरे कानों में ठकुराइन की भयंकर चीख सुन पड़ी, 'अरे बाबू दौड़ो।'

मैं तुरन्त कुल्हाड़ी लेकर दौड़ पड़ा, किन्तु कगार पर आकर देखते ही स्तम्भित रह गया। विनय! जीवन में मैंने कभी ऐसा हृदय विदारक दृश्य नहीं देखा था, मुझे मालूम पड़ा, मेरे चारों ओर की पृथ्वी घूम रही है, आकाश घूम रहा है, हृदय की गति मन्द होती जा रही है, मेरी आंखें पथरा गईं, पांव लड़खड़ाने लगे, और मैं धड़ाम से वहीं गिर पड़ा।

कब और कैसे यह दुर्घटना घटी, मैं नहीं देख पाया, किन्तु जिस समय मेरी दृष्टि उस दृश्य पर पड़ी, वह एक खूँखार काले चीते के पंजों तथा मुख से अपनी जीवन रक्षा के अन्तिम संघर्ष में रत थी।

उनकी चीख पर मैं बेबस रहा। उनके साहस पर स्तम्भित प्रस्तर-सा रह गया। उस क्रूर पशु ने उन्हें नदी की पथरीली चट्टान पर गरदन पकड़ कर दे मारा। नदी का जल रक्त रंजित हो गया, जैसे रक्त की नदी हो या रक्त की किसी बड़ी भील से निकली हो। ठकुराइन क्रिया-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हीन हो चुकी थी। पशु ने उन्हें अपने जबड़ों में दबोचा और छलांग मारता हुआ नदी पार की झाड़ियों में अदृश्य हो गया।

जिस उभरे हुए शरीर को मैं अपने आलिंगन पाश में बांध कुछ क्षणों के लिए आत्मविभोर हो गया था। जिसे मैंने संसार में अपना समझा था, जो मेरे जीवन में एक नई शक्ति, नई चेतना लेकर आई थी, जिसके लिए मैं जीवन का दांव खेल चुका था, जिसे पूर्ण विश्वास था कि मेरे होते हुए उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता; देखने ही देखते, मेरी आँखों के ही सामने, यह सब कृत्य हो गया और मैं कुछ न कर सका। स्वार्थ, कायरता और प्राणों के मोह ने मुझे जड़वत कर दिया। मेरी आंखों के सामने अंधेरा छाने लगा, जैसे धीरे-धीरे काले बादलों की घनघोर घटायें भास्कर को प्रभाहीन कर देती हैं। कुछ देर मैं भी अर्ध चेतन अवस्था में पड़ा रह गया। मैं किसी भी निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सका। उस दुर्दान्त, अप्रत्याशित दुर्घटना के स्मरणमात्र से इस समय भी मेरा सारा शरीर सिहर उठा है, कांप उठा है, फिर जीवन में ऐसा दृश्य मैंने कभी नहीं देखा।

मनुष्य भी कैसा जड़ है, जो ऐसी परिस्थितियों के बाद भी जीवन की कामना करता है, क्या यही है उसकी चेतनता। विनय मैं विह्वल हो फूट-फूट कर रोने लगा और धीरे-धीरे फिर अचेत हो गया।

कहते हुए बाबा की आँखें डब-डबा आईं और वह अपने अंगोछे से आंसू पोंछते हुए बोले, 'जब चेतना मिली तो मस्तिष्क और मैं दोनों ही हल्के हो गए थे। मैं धीरे-धीरे उस स्थान पर पहुंचा जहां उनके वस्त्र पड़े थे। एक बार सोच सब यहीं पड़ा रहने दूं, क्या होगा, फिर सोचा ठकु-राइन तो सदा के लिए चली ही गई है। जैसे एक स्वप्न था जो चेतना आने पर लुप्त हो चुका है। विनय जीवन भी एक ऐसा ही स्वप्न है जो मृत्यु के बाद समझ में आता होगा।

मैंने वस्त्र वहीं छोड़ शेष का सब कुछ उठा लिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए कहा, 'आपने तो मस्तिष्क में एक अजीब सी क्रान्ति पैदा कर दी।'

'यही क्रान्तियां तो हमें जीना सिखलाती हैं विनय? वैसे मरना तो बहुत आसान है।' कहते हुए बाबा ने बीड़ी सुलगाई और बोले, 'सूर्य की रक्तिम आभा से नदी का जल भी प्रभावित हो रहा था, मैं तुरन्त किनारे की ओर बढ़ा और अपना सामान उठाकर चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

***

इस प्रकार दुर्घटनाओं में बदल कर मनुष्य के जीवन में आशंकाएं गहराई तक उतरने में सफल हो गई। मानता हूं मनुष्य जीवन में एक ही बार मरता है और मृत्यु आने पर वह एक मिनट भी नहीं ठहर सकता, फिर भी मृत्यु से बचने का उपक्रम वह सदा ही करता रहता है। जीवन की सफलता में मृत्यु का भय भी एक रोड़ा ही समझो क्योंकि उसके भय से मनुष्य बहुत से ऐसे कार्यों की ओर ध्यान नहीं देता जिसमें जीवन की सफलता छिपी रहती है, या निर्भर करती है। लेकिन जब मृत्यु को नियंत्रित किए बिना कोई चारा नहीं रह जाता, तो विवश होकर हमें यह दुस्साहस करना ही पड़ता है। ऐसे अवसर पर हमारी मानसिक प्रतिक्रियाओं का रूप बड़ा ही भयंकर हो जाता है, और उसे संयमित कर सकने का सार्मथ्य केवल मृत्यु में ही होती है। और उससे बचने के लिए भी हम कुछ नहीं उठा रखते। मेरे सामने भी कोई उपाय न था या तो जीवन अथवा मृत्यु अतः मुझे आगे बढ़ना ही पड़ा, और मैं बढ़ता गया।

उस भयावह जंगल को एक आदमी के लिए अकेले पार करना कितने साहस का काम था और मैं कैसे करता गया, यह कभी नहीं सोच पाया। मैंने एक मशाल बनाकर अपने हाथ में ले ली थी, क्योंकि दिन में भी कहीं कहीं ऐसी गहनता हो जाती थी कि बढ़ना मुश्किल हो जाता था, फिर रात की बात क्या कहूं हृदय भी पत्थर हो सकता है या उस पर बज्रपात हो सकता है यह तभी मैंने महसूस किया। मेरे लिए भय जैसे एक काल्पनिक बात रह गई हो, जिसका मुझसे कोई सम्बन्ध नहीं। रात और दिन मेरे लिए एक ही से थे, केवल अन्तर यह था कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रात को हाथ में जलती हुई मशाल होती और दिन को वही बुझा हुआ दण्ड। मेरी दूसरी सहायिका थी कुल्हाड़ी।

इस प्रकार मुझे लगभग तीन दिन और तीन रातें बितानी पड़ीं। पाथेय का काम केलों से ही चलता जाता। ठकुराइन के गहने मैंने अगोछे में बाँध लिए तथा नोटों का बण्डल लंगोट में, ताकि नागाओं से उनकी सुरक्षा हो सके। कभी-कभी ठकुराइन की ओर ध्यान जाता, और कभी-कभी पर्वतीय निर्झरनियों के मनोहारी दृश्यों में भ्रमित हो जाता। कभी-कभी सोचता समाज में क्या है, जीवन में क्या है, जो इस ओर दौड़ रहा हूं क्यों न यहीं कुटी बनाकर शान्ति से रहा जाय। फिर वही आकर्षण जीवन का, मोह प्राणों का, मुझे ढकेलता हुआ आगे बढ़ाता रहा।

चौथे दिन उन जंगलों को पार कर गोधूलि के समय मैं एक घाटी में पहुंच गया। सामने एक पहाड़ी थी जिसके द्वारा कुछ घरौंदें से गोल मकान दीख पड़े। हृदय में आशा का संचार बढ़ गया, और तीव्र गति से मैं पहाड़ी की ओर बढ़ने लगा। वहां तक पहुंचते पहुंचते सूर्यास्त हो गया। बहुत भटकने पर भी मैं ऊपर जाने का रास्ता नहीं पा रहा था। पहाड़ी पर घर हैं इस बात का संकेत, वहां के टिमटिमाते हुए एक आध दीपों से मिल रहा था। अनायास नागाओं के अमानवीय कृत्यों का स्मरण हो आया, जो खदान पर प्रसिद्ध थे और भय से सिहर उठा, फिर सोचा जंगली लोग दीपक का उपयोग क्या जानें, और फिर खा ही जायेंगे तो दूसरा उपाय भी क्या है। सम्भव हो खदान कर्मचारियों ने श्रमिकों के हृदयों में शंका तथा भय बैठाने के लिए ऐसा प्रचार कर रखा हो।

अंधेरा बढ़ चला था अतः मैंने मशाल जला ली तथा पहाड़ी के किनारे-किनारे ऊपर जाने का मार्ग ढूँढ़ने लगा। एक स्थान पर छोटा सा पेड़ देखा जो पहाड़ी के निचले भाग पर बेड़ा जमा हुआ था। मैंने जरा मशाल को उठा कर देखा तो पहाड़ी का ऊबड़-खाबड़ प्रदेश दिखाई

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पड़ा। उस पेड़ को मैं सुविधा के साथ पकड़ सकता था, अतः उसका तना पकड़ कर मैं चढ़ गया। ऊपर देखा पहाड़ी के उस भाग में सीधा ढाल समाप्त हो चुका था, अतः मैं मशाल के प्रकाश में धीरे-धीरे बैठ कर या लम्बा हो कर चट्टानों पर उभरे हुए पत्थरों तथा झाड़ों के सहारे चढ़ने लगा।

मुझे कितनी कठिनाई का सामना करना पड़ा, इसका तुम अनुमान नहीं लगा सकोगे, फिर भी मैं किसी प्रकार चढ़ता ही गया। थोड़ी सी देर में मैंने वह चढ़ाई समाप्त कर ली, और एक खुले हुए समतल खण्ड पर पहुंच गया। वहां से जब मैंने पलट कर नीचे की ओर देखा, मशाल के प्रकाश के बाद, एक गहरी-सी काली खाई गहन अंधकार के विस्तार में दीख पड़ी। हर्ष और विजय की लहर से मैं कुछ क्षणों तक विशेष अनुभूति का अनुभव करता रहा, फिर मुड़ कर देखा जलते दीप बहुत ही समीप दृष्टिगत हुए, जो थोड़ी ऊंचाई पर थे। मैं पुनः उस प्रदेश में ऊपर तक मार्ग खोज निकालने का प्रयास करने लगा।

अचानक चार पांच पहाड़ी कुत्ते, एक साथ मेरी ओर दौड़ पड़े। उनके खूंखार जबड़े, और तेजी से अपने ऊपर झपटते देखते ही मेरे शरीर से पसीने की धार छूट पड़ी। भाग कर बचने का कोई उपाय न सूझा अतः मैंने मशाल को मजबूती से पकड़ा और अपनी कुल्हाड़ी संभाल ली, इसी समय किसी ने जोर से कुत्तों को डपट दिया।

देखा सामने दो नागा युवक खड़े हुए मुझसे मशाल और कुल्हाड़ी फेंक देने का संकेत कर रहे हैं।

मेरा सारा शरीर रोमाञ्चित हो उठा। मस्तिष्क पटल में खदान पर प्रचारित वह शब्द अंकित हो गए, 'नागा लोग आदमी को जिन्दा आग में भून कर खाते हैं।' मैं एक बार पुनः सिहर उठा, मेरे पांव कांपने लगे, जैसे विद्युत-लहरियों के तीक्ष्ण झटके ने मुझे पक्षाघातिक कर मेरी चेतना को एकाएक बाहर फेंक दिया हो, मशाल और कुल्हाड़ी मेरे हाथों से छूट गई और मैं धड़ाम से वहीं गिर पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जब चेतना आई मैंने अपने को नागाओं से घिरा पाया। उस भीड़ में स्त्री पुरुष, बच्चे सभी उपस्थित थे, तथा उनकी मुखाकृतियां मेरे विषय में दुख प्रगट कर रही हों, मैं ऐसा अनुमान लगा सका। भाषा तो मेरी समझ में आई नहीं पर यह समझने में भी देर न लगी कि वे सब मेरी ही कुशल कामना में तत्पर हैं। अपने जीवन को सुरक्षित समझते ही मेरे मुख मण्डल पर सन्तोष तथा हर्ष उभर आया। मुझे सचेत देखते ही एक वृद्ध नागा ने संकेत से मेरी कुशल जाननी चाही और मैंने संकेत से ही अपने स्वस्थ होने की बात कह दी।

धीरे-धीरे भीड़ छँट गई, मुझे एक कक्ष में पहुंचा दिया गया, एक नागा युवती को मेरी देख भाल सौंप दी गई, जो लगभग सोलह या अट्ठारह वर्ष के करीब रही होगी। मैं आज भी उसका आभारी हूं। उस कोमल नारी के पुष्ट और पूर्ण यौवन का वर्णन मैं अपनी भाषा तथा विचारों में व्यक्त करने की शक्ति नहीं रखता, हां इतना अवश्य कह सकता हूं कि ऐसा संयोग मेरे जीवन में फिर कभी नहीं आया। आतिथ्य-सत्कार हमारे देश का सर्वश्रेष्ठ है और इस बात को मानने से कोई इन्कार नहीं कर सकता, किन्तु जितनी भी सामाजिक व्यवस्थाएं हमारे देश में हैं उन सब में यह गुण भिन्न-भिन्न रूप से पाया जाता है।

मैं सुख पूर्वक सोया। न भय था न कोई चिन्ता, कुछ था तो केवल यह विचार कि अभी न जाने कितनी दूरी तै करनी होगी।

प्रातः जब सोकर उठा तो गत जीवन और दुर्घटना एक स्वप्नवत मेरी स्मृति में रह गई। मैंने उठकर कमरे का निरीक्षण बड़े ध्यान से किया जंगली जानवरों की खालों तथा सींगों से सारा कमरा बड़े ही अनौखे ढंग से सजा हुआ था। उन खालों पर किसी औषधि अथवा मंसाले का प्रयोग न होने के कारण दुर्गन्ध से एक पल भी ठहरना दूभर हो रहा था, पता नहीं रात कैसे उस कमरे में बीत गई थी।

मैं बाहर आया तो मुझे चारों ओर से घेर लिया गया। जैसे मैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किसी मदारी का नया बन्दर हूं, बस इतना ही अन्तर था कि मैं उन लोगों को देख कर भय से भड़क नहीं रहा था। रात वाला वही वृद्ध आया और अपनी उसी सांकेतिक भाषा में मेरी कुशल-क्षेम जाननी चाही। मेरी प्रसन्न मुखाकृति को देखते ही वह भी मुस्कराया। वहां सभी लोग मेरे आगमन पर प्रसन्न दृष्टिगत हुए, तथा उनमें आपस में मेरे ही विषय में चर्चायें होने लगीं, क्योंकि लोग बार-बार मेरी ओर इंगित करते हुए वाद-विवाद कर रहे थे।

मैंने जरा जंगल की ओर जाने का संकेत किया, तो मेरे साथ दो संरक्षक हो लिए और मुझे एक छोटी सी नदी तट पर ले गए। वहां का नैनाभिराम दृश्य देखते ही हृदय में उत्साह भर गया, एक अनोखा सा आकर्षण घर कर गया। न मैं मृत्यु को गले लगाने दौड़ता और न कभी ऐसी दुर्लभ सुरम्य तथा मनोरम दृश्यावलियां ही मिलतीं। हमारी कल्पना जिस अनदेखे स्वर्ग का विचार करती है वह धरती पर ही है। मुझे ऐसा आभास होने लगा। वह एक टेढ़ी-मेढ़ी ऊंची नीची पहाड़ी घाटी थी, चारों ओर हरा-भरा जंगल फूलों से महक रहा था और बीच से बलखाकर प्रवाहित होने वाली वह नदी पास की एक चट्टान का हृदय फोड़ कर निकली थी। बड़ी ऊँचाई से श्वेत चन्द्रिका-का जलप्रपात चट्टान पर गिर-गिर कर अपने हृदय का एक एक कण विखेरता जाता और वही कण सिमट-सिमट कर एक धार बनते जाते। किन्तु उन्हें फिर दूसरी चट्टान पर गिर कर बिखरना पड़ता। इस जलप्रपात के गिरने की गति उस नीरव प्रदेश में एक अनोखा संगीत छेड़ती सी प्रतीत हो रही थी।

नागाओं के विषय में जो भी सुना,सब कुछ उसके विपरीत ही निकला, हम उनकी मनुष्यता की सराहना किए बिना नहीं रह सकते। इतनी एकता, आपसी प्रेम, दूसरों के प्रति सहानुभूति हम अपने समाज में कम ही पाते हैं यदि उनके रहने का ढंग असभ्य न होता तो कदाचित मैं उस प्रदेश को छोड़ना भी पसन्द न करता।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय ने किंचित प्रतिवाद किया, संभव है हमारे समाज का जान कर उन्होंने ऐसा-व्यवहार किया हो, लेकिन आपसी मामलों में उनकी भी कुछ स्वार्थ नीतियां होगी, कुछ बुराइयां होंगी, जिन्हें आप थोड़े से समय में न परख पायें हों, फिर असम्भव कैसे कहा आपने, सम्भता तो अपने समुदाय की भिन्न-भिन्न होती है।'

बाबा ने तुरन्त उत्तर दिया, 'मानव समुदाय की सभ्यता तो एक ही होनी चाहिए, और मेरे विचार से यह मनुष्य - मात्र का दुर्भाग्य है कि मानवीय सिद्धान्तों में, विचारों में भी यहां अन्तर है। बुराइयां तो सभी जगह होती हैं, अतः वहां भी रही होंगी, मैं तो समझता हूं बुराई के कारण ही भलाई का महत्व है। या यूं समझ लो कि एक का महत्व तथा गुण दूसरे की हीनता तथा अवगुणों पर निर्भर करता है। सुन्दरता का महत्व क्या होता, यदि कुरुपता न होती।'

'यह भी हमारा एक दोष है कि अपने रूप, ज्ञान, और ऐश्वर्य से कुरूप, अज्ञानी और ऐश्वर्य हीनों को महत्वहीन समझते हैं। हम जिनके द्वारा आदर का पात्र बने उन्हीं का निरादर करें यह तो शोभा नहीं देता। लेकिन हम करते हैं और हमें करना पड़ता है। केवल इस विचार से कि हम गुणवान हैं, ऐश्वर्यवान हैं, श्रेष्ठ हैं। अब तुम्हीं सोच लो यहां भी दोष का कितना अभिन्न और प्रगाढ़ सम्बन्ध है।'

विनय ने पुनः प्रतिवाद किया, इससे तो स्पष्ट है कि हम दोषों से बच ही नहीं सकते।'

'अवश्य' बाबा ने अपनामत स्पष्ट किया 'मेरे विचार से तो हम इन्हें हटा नहीं सकते, आवरित तथा नियंत्रित रख सकते हैं, और तभी हम उनसे सुरक्षित रह सकते हैं।'

'मैं समझता हूं, मनुष्य के अन्तर का एक भी दोष क्यों न हो अवसर पर उसके सर्वनाश के लिए बहुत है,' विनय ने पुनः प्रतिवाद किया।

'मेरे और तुम्हारे विचारों में थोड़ा सा अन्तर है, [वह यह कि गुणों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के महत्व से दोष नियंत्रित कर लिए जायं तो वह अनुकल हो जाते हैं। क्या महापुरुषों में दोष नहीं होते और दोषों पर हमारी दृष्टि उतनी पैनी क्यों नहीं हो जाती, केवल गुणों के प्रभाव से ही तो ? जहां दोषों के प्रभाव से गुण नहीं उभर पाते वहीं वे सर्वनाश का कारण बन जाते हैं।'

'तो आपने नागाओं में क्या दोष पाया,' विनय ने प्रश्न किया।

'प्रथम तो यह कि उन्हें जरा सा सोने का लोभ संवरण नहीं हो सका और वह छीन लिया, दूसरे यह कि उनके बात करने का ढंग बड़ा ही असभ्य था। तीसरे यह कि चारित्रिक विशेषता हीन या नहीं के बराबर समझ लो। लेकिन मैं तो इन्हें दोष ही कहूंगा, उन्होंने अपनी शक्ति का गलत प्रयोग किया। ओछी तथा गिरी प्रकृति का प्रमाण दिया, भले ही उनका लुटेरापन आतिथ्य सत्कार के प्रभाव में नगण्य हो गया।'

'शक्ति का प्रयोग तो सदा से गलत होता रहा है। सभी शक्ति का अनुचित लाभ उठाते हैं।' विनय, ने अपना विचार स्पष्ट किया।

'हां' समर्थन करते हुए बाबा ने कहा, 'लेकिन जब कहीं किसी के द्वारा शक्ति का गलत प्रयोग हुआ है, सदा ही विनाशकारी रहा है। अनुकूल अवस्थाओं में शक्ति ही सृजन करती है, सुख, वैभव और यश देती है, किन्तु प्रतिकूल होते ही सर्वनाशिनी, प्रलयंकारी हो जाती है।'

'शक्ति का लोभ मानव से संवरण नहीं हो पा रहा है, अतः सर्व-नाश तथा प्रलय अनिवार्य हैं' विनय के अपना मत प्रगटाया।

इस विषय की गहनता में मैं उतरना नहीं चाहता। जिसमें जितनी शक्ति होती है उसकी क्रियाएं भी उतनी ही सीमित रहती हैं। यदि नागाओं ने किसी लोभ अथवा स्वार्थ से गहने छीन भी लिए तो क्षम्य हैं, क्योंकि उन्होंने प्राण दान तो दिया ही।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नदी पर मैंने अपने कपड़े साफ कर लिए, ताकि कोयले की खदान का कोई चिन्ह शेष न रह जाय, क्योंकि ऐसा सुना था कि खदान के भागे हुए कर्मचारी गोरखपुर तक से पकड कर वापस भेज दिए जाते थे, और इस कार्य में खदान का गुप्तचर विभाग बहुत ही दक्ष था।

वह दिन और रात भी वहीं सुख के साथ बीत गई। दूसरे दिन प्रात: मुखिया ने दो संरक्षकों के साथ मुझे विदा कर दिया। उसकी बातें तो मैं नहीं समझ सका, किन्तु तिनसुखिया शब्द सुन कर यह अनुमान अवश्य लगा लिया, कि वे संरक्षक मुझे तिनसुखिया के सीधे मार्ग पर छोड़ देंगे।

दोपहर तक हम चलते ही रहे, जीवन को इतना सुरक्षित देख हृदय उत्साह से भर गया था, किन्तु रह-रह कर ठकुराइन की निर्मम हत्या तथा दृश्य की वीभतसता का स्मरण आते ही हृदय कांप उठता था। मानों सारा का सारा दृश्य आँखों के सामने ही हो। इतना कहते हुए बाबा ने एक दीर्घ श्वास छोड़ते हुए फिर कहा, मत्यु भी दो क्षणों में जीवन स्वप्न भंग कर देने में कितनी सामर्थ्यवान है। उसका इतना नग्न ताण्डव जीवन में एक ही बार देखने को मिला। फिर ध्यान नागाओं की ओर गया, कितनी सादगी थी उनके जीवन में, आतिथ्य-सत्कार की भावनाएं कितनी जागरूक थीं उनमें! असभ्यता और जंगली पन में पलने वाले लोगों में यह गुण ईश्वरीय देन नहीं तो और क्या है।

मेरे विचारों की शृंखला टूट गई, देखा तो मेरे संरक्षक मुझे एक ओर इंगित करते हुए कह रहे थे, 'तिनसुखिया-तिनसुखिया . . .'

सुदूर पहाड़ी घाटी के नीचे मैंने देखा तिनसुखिया की बिखरी हुई बस्ती और मील की चिमनियों से निकलता हुआ धुंआ यह वह शहर था, जहाँ से हो कर अपनी जन्मभूमि तक वापस पहुंचने के सभी साधन उपलब्ध थे।

मानो तिनसुखिया मेरे पांव के नीचे हो, मेरा घर, घर के सब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लोग, भाई, भावज, मेरे इष्ट मित्र सभी एक-एक कर मेरी आँखों के सामने नाचने लगे। इसी समय संरक्षकों ने नीचे जाने वाली पगडण्डी की ओर मेरा ध्यान आकर्षित कर दिया। जिसे देखते ही एक बार फिर हृदय कांप उठा, शरीर रोमाञ्चिक हो उठा, एक टेढ़ी-मेढ़ी ढालू पगडण्डी नीचे उतरती हुई घाटी की सघनता में विलीन हो रही थी। फिर घना वन जहां पेड़ और झाड़ियों के सिवा एक इंच भी भूमि के दर्शन दुर्लभ थे और तब कहीं बिखरते हुए पेड़ और झाड़ियां, फिर कुछ मैदान, छिटका हुआ जंगल और बीच-बीच में झाँकते हुए तिनसुखिया के छोटे-छोटे घरोंदे जैसे घर मीलों की चिमनियों मे निकलते हुए काले धुएं की रेखाएँ जो अन्तरिक्ष की ओर श्वेत होती हुई अदृश्य होती जा रही थीं, 'ओफ ! अब तो अकेले ही चलना है।

एक संरक्षक ने पहाड़ी पत्तों का बना हुआ, एक बहुत ही सुन्दर झोला मेरी ओर बढ़ा दिया, मैंने झोला पकड़ लिया। उन लोगों ने हाथ उठा कर अभिवादन किया और वापस हो लिए। मैं अभिवादन का उत्तर दे उनकी ओर खड़ा देखता रह गया। वह थोड़ी सी देर में पहाड़ी की ऊंची नीची पगडण्डी पर विलीन हो गए। मैंने अनुभव किया,मेरे हाथ में जो झोला है भारी है। खोल कर देखा तो मिट्टी के तेल की बोतलें, माचिस की डिबियां, नमक की पुड़िया तथा पत्तों से लिपटा हुआ कुछ पाथेय। मेरी आत्मा ने मानो मेरी अवज्ञा करते हुए कहा, चिरंजीव रहें वह जिनके हृदयों में एक अज्ञात के प्रति इतना प्रेम, आदर और मनुष्यता की भावनाएं जागरूक हैं।

मैं धीरे-धीरे उस पगडण्डी से नीचे की ओर चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२०

***

विनय ने जैसे ही उठने के लिए अपना मुंह फेरा, देखा राजेश खड़ा मुस्करा रहा है। 'अरे, कब आये तुम।'

'अभी-अभी इसी गाड़ी से।'

'वह तो तुम्हारा हुलिया बता रहा है कि शहर से आ रहे हो। चलो ऊपर कमरे में ··· समान कहाँ है ?'

'सब स्टेशन पर, सोचा घर चलने से पहले तुमसे मिलता चलूं, सम्भव है कुछ नए समाचार मिल जायं ··· हाँ पंचपरमेश्वरों ने क्या निर्णय दिया।'

'वही जो तुम स्वीकार कर गए थे।'

'क्या ?' राजेश ने अज्ञानता प्रगट करते हुए कहा।

'बड़े भोले हो, एडवान्स ···'

सुनते ही राजेश हंस पड़ा ! 'तो तुम सब पक्की खबर ले कर आये थे। तो सुनाओ क्या-क्या बातें हुईं।'

'तुम पहले नहा धो लो, रास्ते की मिट्टी साफ कर डालो, पीछे बातें होंगी।'

राजेश ने कपड़े उतारे और नीचे, स्नानागार में जा पहुंचा। थोड़ी सी देर में जब वह निपट कर आया तो प्रफुल्ल था।

'बोलो, क्या-क्या खाना चाहते हो।' विनय ने पूछा।

'सिर्फ चाय।'

'चाय तो पीने की चीज है, मैं तो खाने की बात पूछ रहा हूं" कहता हुआ विनय मुस्कराया।

राजेश ने मुस्कराते हुए कहा, 'फिर तुम जो चाहो।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'अच्छा मैं अभी आया' कहता हुआ विनय भीतर चला गया, और राजेश शीशे के सामने खड़ा होकर केश-विन्यास करने लगा।

'ओह ! स्वास्थ्य परीक्षा हो रही है।' विनय ने वापस कमरे में प्रवेश करते हुए कहा।

कुछ हंस कर राजेश ने कहा, बिल्कुल ठीक बात है, तुम तो जानते हो, मैं अपने को सब से ज्यादा प्यार करता हूं।'

'लेकिन अब यह गुंजाइश नहीं रहेगी।'

'क्यों ?'

'कोई दूसरा भी इस शरीर पर अपना अधिकार जमाने वाला आ रहा है।'

फिर क्या प्रसाद बांटिए, ढोल तरसे बजा कर खुशी मनाइए, किसी की जागीर लुटने वाली है न, शायद आपको भी कुछ भाग मिले आप भी तो इस डकेती में साथ जाने वालों में से हैं !' मुस्कराते हुए राजेश कहता गया।

विनय सुनते ही ठहाका मार कर हंस पड़ा, 'बहुत खूब, बहुत खूब, तो क्या सारे बरातियों को उस माल का भागीदार बनाओगे, जो वह लुटवाकर लायेंगे।'

राजेश झेंप कर रह गया। तुरन्त बात बदलते हुए बोला, 'अरे कोई और बात करो न, जब देखा तब शादी, शादी ! आखिर शादी में रखा ही क्या है, एक औरत ही तो....'

'और उसकी कीमत ही क्या है तुम्हारे विचारों से' विनय ने टोकते हुए कहा और फिर पूछा, 'औरतों का अनुभव तो तुम्हें अच्छा होगा। क्यों न, तुम तो इस विषय पर रिसर्च कर रहे हो।

'इसमें क्या शक' राजेश ने विषय बदलते देख तपाक से कह डाला।

'तो फिर मुझे भी कुछ अपने अनुभव से लाभ उठाने का अवसर दो।'

'इसके लिए आपको दीक्षा लेनी पड़ेगी, गुरुदक्षिण भी देनी होगी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बोलो मंजूर है ?' राजेश ने अपने अनुभव को महत्व देते हुए कहा ।

'जी गुरु जी महाराज ।'

तभी विनय की छोटी बहन ने गरम-गरम पकौड़ियां और चाय ला कर रख दीं ।

'लो पहले कुछ पेट पूजा स्वीकार करो और साथ-साथ दीक्षान्त भाषण ।'

'नो-नो' (नहीं-नहीं) अच्छे गुरु भाषण नहीं करते प्रश्नों के उत्तर देते हैं, शंका का समाधान करते हैं ।'

एक पकौड़ी उठाते हुए विनय ने कहा, 'तो यही सही, चेले का पहला प्रश्न है, भांति-भांति के रूपाकर्षणों में एक भांति की क्रिया ही क्यों ?'

गुरु जी प्रश्न सुनते ही सकपका गए । फिर अपनी स्थिति को संभालते हुए बोले, 'शाबाश, बहुत अच्छा प्रश्न है, बच्चे, जैसे एक सनातन ब्रह्म है, किन्तु उसे पाने के रास्ते भिन्न-भिन्न ठीक; इसी भांति एक क्रिया की विशेषताओं को रूपाकर्षणों के भिन्न-भिन्न स्वरूपों से पाने का ही नियोजन है । यहां क्रिया सनातन है और रूपाकर्षण भिन्न-भिन्न मार्ग ।'

विनय सुनकर मुस्कराया, फिर बोला, 'तो आपके मार्ग में ब्रह्मा को एक बार प्राप्त करने के बाद, कमी क्या रह जाती है जो पुनः ब्रह्म-प्राप्ति की जरूरत रह जाती है ।'

'बार-बार प्राप्त करने का विधान है, एक बार में आप ब्रह्मानन्द नहीं पाते ।'

'बिल्कुल ठीक, ब्रह्म का कोई रूप स्थिर हो तब न' राजेश ने समर्थन किया ।

'तो आपका ब्रह्म आकर्षण है, जिसे पाने के बाद फिर पाने की जरूरत रह जाती है ।'

'यह बात भी बिल्कुल ठीक है, आकर्षण और आशा यदि यह दो न होते तो जीवन ही व्यर्थ होता ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

धन्य है गुरु जी, इसीलिए तो मनुष्य व्यर्थ जीवन को बनाए रखने का प्रलोभन पाता है।' विनय ने व्यंग किया।

'हां, जैसे एक यह बाबा' राजेश ने व्यंग का उत्तर बड़ा कटु दे दिया।

विनय ने कुछ गम्भीर होते हुए कहा, 'क्यों ? बाबा ही क्यों लाखों होंगे इस संसार में।'

'इसमें क्या सन्देह, और उन सब की यही दशा होती है।' राजेश ने अपनी बात प्रकट की।

'और वह दशाएँ ही हमें गलत रास्तों का प्रतिबिम्ब दर्शाती हैं, आकर्षण और आशाओं के फलाफल का रूप सामने करती हैं।'

'बच्चा, तुम्हारा विषय बदलता जा रहा है, फिर भी यहां एक प्रश्न है, क्या बाबा ने अपना जीवन यूं ही गुजार दिया, कभी किसी स्त्री का संयोग प्राप्त नहीं हुआ।' राजेश ने भी प्रश्न कर दिया।

'हुआ क्यों नहीं' इतना कहते हुए विनय ने बाबा की कहानी संक्षेप में कह सुनाई, तो राजेश ने मुस्कराते हुए कहा, 'अभी तो नम्बर दो तक ही पहुंचा है कहानी बढ़ने दो तब एक लिस्ट बन जायेगी।'

'लेकिन ठकुराइन से उनका सम्बन्ध था, वह भी परिस्थितिवश।'

'यही बात तुम नागा लड़की के लिए भी कहोगे।'

'हां गुरु जी; अपनी समझ में तो ऐसा ही आया, परिस्थितिवश ही उन्हें ऐसा करना पड़ा।'

'लेकिन बच्चा अपना मत कुछ और ही है, यदि सामाजिकता पर ध्यान रख कर सोचो तो यह सम्बन्ध भी नैतिक दृष्टि से हेय था, और यदि प्रकृत गत सोचो तो पवित्र था।'

'मैं समझा नहीं गुरू जी!' विनय ने राजेश की बात का स्पष्टीकरण चाहा।

'तो सुनो, ध्यान से सुनो, सृष्टि में मानव की एक अद्भुत रचना है, उसमें स्त्री-पुरुष दो संज्ञाएँ हैं, यह दोनों ही एक दूसरे की पूरक हैं। आदि काल में जब मनुष्य असभ्य रहा, इनके सम्बन्धों में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कोई पाप नहीं था और न इन सम्बन्धों के लिए कोई व्यवस्था ही थी, विधान ही था । अतः स्त्री और पुरुष की अपनी-अपनी व्यक्तिगत रुचियों के प्रति होते रहे । मनुष्य जैसे-जैसे सभ्य होता गया और इन सम्बन्धों को एक वैधानिक रूप दे दिया गया, सामाजिक नियमों का सृजन, नैतिक-अनैतिक पाप-पुण्य की सीमा निर्धारित कर दी गयी । लेकिन यह सम्बन्ध सदा व्यक्तिगत रुचियों पर ही अटल बने रहे, और आज भी जो दोष पाप और अनैतिक घटनाएँ होती हैं उनका मूल महत्व यही है । पाप या अनैतिकता स्त्री पुरुष के परस्पर सम्बन्धों में नहीं, वरन उन्हें करके छिपाने के लिए मजबूर करने में है । आज हमारी सामाजिक व्यवस्था का यही स्वरूप है । खुल जाने पर पापी और छिपे रहने पर पुण्यात्मा । अरे इस समाज में इतनी भी अकल नहीं है कि लड़का खराब होने से कुछ भी नहीं, और लड़की खराब होने पर सारा परिवार बहिष्कृत क्यों ?' कहते हुए राजेश कुछ गम्भीर हो गया ।

'गुरू जी, कुछ मतभेद है', विनय ने मुस्कराते हुए ही कहा ।

'वही भी कहो' राजेश ने उसी स्थिति में रहते हुए कहा ।

'ईश्वर ने यदि स्त्री और पुरुष दो बनाए हैं तो उनकी क्रियाओं का मूल महत्व एक होते हुए भी विपरीत दिशाओं में ही पूरक है, और दोनों की अपनी-अपनी सीमाएँ भी वैसे ही अटल हैं, सामाजिक व्यवस्था का आधार भी वह सीमाएं ही हैं, पुरुष स्वच्छन्द है, किन्तु नारी परतंत्र, किसी भी दृश्य से विचार कर देखिए, मेरे विचार से तो ऐसा ही है, अब आप कुछ इस पर प्रकाश डाल सकते हों तो और बात है । हां, खराब होने का जहां तक प्रश्न है वहां मैं इस बात से सहमत हो सकता हूं कि खराब चीज त्याज्य है और त्याज्य होने पर उसके प्रभाव या संबंध से दूसरे को प्रभावित करना हमारी मूर्खता है । परिवार के एक सदस्य की हीनता के लिए सम्पूर्ण परिवार उत्तरदायी नहीं है ।'

'चलो ऐसा ही समझो तो बुरा नहीं है' कहते हुए राजेश भी मुस्करा कर आगे बोला, 'तो मेरी व्यक्तिगत रुचियों का उत्तरदायी मैं ही तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुआ, फिर दूसरों को उसके लिए प्रश्न करने का या उंगली उठाने का अधिकार कहां है यदि मैं उनकी दृष्टि में बुरा हूं, बुरा ही सही।'

विनय ने मुस्कराते हुए व्यंग कसा, 'गुरू जी, बुरे से लोग बचने की शिक्षा देते हैं, लेकिन उसे उंगली उठाकर अपमानित करने की शिक्षा नहीं देते, यह तो बात पुरानी कहावत-सी है चोर की दाढ़ी में तिनका! मेरे विचार से मनुष्य की बुराई उसे स्वयं हेय और हीन दृष्टि से देखने लगती है और उसका अहं दूसरों को दोषारोपण कर अपनी श्रेष्ठता को सुरक्षित करने का आडम्बर रचता रहता है।'

राजेश ने व्यंग करते हुए कहा, 'तुम फिर विषय बदल रहे हो।'

'अच्छा गुरू जी, तो इन सम्बन्धों को जहां तक हो बनाये रखना चाहिए, इनकी वजह से किसी को बुरा नहीं समझना चाहिए। बस विनय ने राजेश के भावी क्रोध को भड़कने से रोकते हुए कहा।

'बिल्कुल ठीक है।'

'तो फिर गुरू जी बाबा भी बुरे तो नहीं हुए।'

'तो क्या तुम बाबा की तुलना मुझसे करना चाहते हो।'

'नहीं गुरू जी, आप एक महान व्यक्ति, वह एक तुच्छ प्राणी, जिन्दगी के मुकदमे में आप एक आने वाले और वह एक गुजरे हुए गवाह हैं, भला आपकी और उनकी क्या समता, क्या तुलना!'

राजेश मुस्करा दिया। 'अच्छा यह फिजूल की बातें छोड़ो, और यह बताओ उस दिन क्या हुआ?'

'हुआ क्या, मिठाई खाने को मिली, विवाह का मुहूर्त निकाला गया और आपके लिए शुभ कामनाएं मनाई गईं। पंच परमेश्वरों ने कन्या के पक्ष में निर्णय घोषित कर दिया।'

'मैं यह जानना चाहता हूं कि तुमने किसके पक्ष में निर्णय किया।'

'वहां की स्थिति से तो यह ज्ञान हुआ कि कन्या के ग्रह अच्छे प्रबल हैं, मैं कैसे विरोध में ठहर सकता था; बल्कि सबको तो एक ओर का निमंत्रण ही मिला, और मुझे तो उपाध्याय जी ने अपनी ओर से भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आमंत्रित कर दिया है।'

राजेश ने मुस्कराते हुए कहा, 'तुम ऐसा ही करना, हमारी बरात में कन्या पक्ष से ही सम्मिलित होना।'

'जी हां। गुरू जी मैंने भी वहीं पहुंचना, साथ जाने से ठीक समझा है।'

'आदमी समझदार हो, अब मैं चलता हूं' मुस्कराते हुए राजेश उठ खड़ा हुआ।

'एक समझदार जानवर का ही दूसरा नाम आदमी है, अब आगे-आगे आप पहुंचिये। पीछे-पीछे मैं आता हूं' कहते हुए विनय भी उठ खड़ा हुआ। दोनों उतर कर नीचे आ गए। बाबा को राजेश ने अभिवादन किया, बाबा ने उत्तर में कहा, 'जीते रहो।'

'जीना तो पड़ता ही है बाबा ?' राजेश ने व्यंग कसा।

बाबा ने मुस्कराते हुए कहा, 'इसी का दूसरा नाम है जिन्दगी।'

विनय सुनते हुए मुस्कराया। राजेश बाहर आ गया।

'अच्छा मैं चलता हूं, समय मिले तो शाम को आ जाना।'

'जरूर-जरूर!'

राजेश चला गया। विनय आकर बाबा के पास बैठ गया। बाबा ने अपनी कहानी गतांक से आगे शुरू की।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२१

***

एक दिन और एक रात चलने के बाद मैं तिनसुखिया पहुंच गया। मार्ग में मैंने अपने कपड़े साफ ही कर लिए थे, गहने नागाओं की भेंट हो गए थे, बस नोटों का बण्डल शेष रह गया था। मेरे लिए उस समय एक-एक रुपया भी मूल्यवान था। तभी मेरी समझ में आया कि असमय में रुपया मनुष्य का कितना बड़ा साथी है। ऐसे अवसरों पर ही हमें उसका महत्व समझ में आता है। मन में संकल्प भी किया, कि भविष्य में सदा इसका ध्यान रक्खूंगा।

जैसे कारागार से मुक्त होने पर बन्दी को घर का मोह उत्पन्न हो जाता है, या पिंजड़े का पंछी स्वतंत्र होने पर अपने दल की ओर दौड़ता है, वैसे ही मैं भी अपने घर की ओर दौड़ पड़ा। न जाने क्यों कटु होते हुए भी भाभी से मिलने की उत्कट अभिलाषा जाग उठी। कदाचित अपनत्व के जो संस्कार हमारे हृदयों में बचपन से तह तक अंकित हो जाते हैं, जिन्हें समूल नष्ट करने में हम असमर्थ रह जाते हैं। यह एक अनोखा भाव है, प्रेम है जो माता-पिता, भाई-बहन, घर और देश के प्रति धीरे-धीरे दृढ़ होता हुआ सदा के लिए सजीव होकर रह जाता है। जीवन का मोह, कर्तव्य की भावनाएं, संघर्ष के लिए उत्साह, शक्ति, सभी कुछ तो मिलता है। इन सबसे विमुख होकर भी हमारा कोई जीवन हो सकता है क्या ? और यदि है भी तो वह निरुद्देश्य, गति-हीन है, निष्फल है, मेरे विचार से यह भावनाएं मनुष्य में जितनी ही पुष्ट होंगी वह उतना ही कर्तव्य परायण तथा जीवन को अधिक सफल बना सकने में सामर्थ्यवान होगा। इसलिए मैं वैरागियों का कोई जीवन नहीं मानता, और न उन्हें मनुष्य ही समझता हूं, वह तो हमारे समाज

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के लिए, अभिशाप स्वरूप एक कुष्ठ हैं।

विनय ने प्रतिवाद किया, 'ऐसा क्यों कहते हो बाबा, उनका भी एक समाज है एक मार्ग है, ईश्वर भक्ति तथा मोक्ष में ही तो वे घर का त्याग करते हैं। नहीं तो भला घर भी किसी को काटता है।'

'तुम ठीक कहते हो विनय, घर किसी को नहीं काटता, बल्कि वे घर को काटते हैं। समाज में अकर्मण्य होकर जीवित नहीं रहा जा सकता। जो संघर्ष से ऊबते या घबड़ा जाते हैं, वही दूसरों की कमाई का आश्रय ढूंढ़ते हैं। यह अकर्मण्यता है। जहां स्वार्थ होगा वहां त्याग कैसा? वह तो व्यक्तिगत स्वार्थ के आखेट हैं। यहाँ पहला प्रश्न तो जीवन-यापन है, मोक्ष दूसरा, मोक्ष का तो वही सच्चा अधिकारी है, जिसमें कर्तव्यमय त्याग हो। अकर्मण्यता या वैराग्यता नहीं।'

'इसके माने तो ईश्वर भजन भी आपकी दृष्टि में ढोंग और पाखण्ड है।' विनय ने प्रश्न किया।

दृढ़ता के साथ बाबा ने कहा, 'जो सर्वव्यापी है उसके भजन के लिए कर्तव्य विमुख होना पाखण्ड नहीं तो और क्या है।'

'फिर तो यह आदि और अनादि काल का रोग है।'

'है अवश्य पुराना, किन्तु असाध्य नहीं, हमारे नैतिक विकास का सही रूप सामने आते ही इस कुष्ठ से छुटकारा पाना भी आसान हो जायेगा।'

'इसके माने हम नैतिकता से भी पतित हैं' विनय ने प्रतिवाद स्वरूप प्रश्न किया।

'अवश्य और सबसे अधिक' बाबा ने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया, 'क्योंकि हम जरा-जरा सी बातों में सही रास्ते से भटक जाते हैं, या समझो भटके हुए हैं, जो हमारे घरेलू, सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन में एक सब से बड़ी अखरने वाली बात है, और यही कारण है कि हमारे जीवन में माधुर्य की कमी है, यदि माधुर्य है तो कुछ इने-गिने व्यक्तियों के पास जिनके सुखी जीवन को देखकर हमें स्पर्धा नहीं ईर्ष्या होती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हम जीवन चाहते हैं, लेकिन दूसरे को जीने नहीं देना नहीं चाहते; विनय जीता वही है जो दूसरे को जीता रखना चाहता है।'

विनय ने किंचित मुस्कराते हुए कहा, 'आप विषय से बहुत दूर हो जाते हैं, कभी वैरागियों को अकर्मण्य, कभी अपने को पतित कहना कहां तक शोभनीय है।'

'मैं अपने जीवन को लेकर चला हूं, जिसमें तमाम उतार-चढ़ाव हैं। एक ऐसे जीवन के चढ़ाव-उतार जो सदा निरुद्देश्य रहा, तथा किसी उद्देश्य के लिए भटकता रहा, जिन्दा रहने के लिए भटकता रहा, किन्तु मेरे विचार से यह जीवन उन सबके लिए अमूल्य निधि है जो किसी निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति चाहते हैं। इसीलिए मैंने कहा जिन्दा रहने के लिए दूसरों को जिन्दा रखना पड़ता है। क्या तुम मेरे जीवन को जीवन कह सकते हो, मेरा भी एक समुदाय है, दल है, जो वैरागियों की तरह समाज का कुष्ठ है। मैं तो केवल उन घटनाओं को, उन मूक भावनाओं को व्यक्त करने का प्रयास कर रहा हूं, जो आज मेरे अन्तर में बोल रही हैं। यदि अपने समुदाय की ओर ध्यान करता हूं, तो मैं भी अकेला नहीं हूं, इसमें ऐसी बहुत सी बातें संभव हैं, जो प्रत्येक के जीवन में घटित नहीं हो पातीं और यदि होती हैं तो उनपर ध्यान नहीं दिया जाता, इसीलिए मेरे विचार विषय छोड़कर भागते नज़र आते हैं।

'हां तो मैं वापस आ गया। पता चला बड़े भाई साहब कालरा के आखेट हो चुके हैं, एक बज्राघात हुआ, जैसे मेरा जीवन सारहीन हो गया हो। संसार मेरे लिए सूना-सूना मालूम पड़ने लगा, मुझे देखते ही भावज फूट-फूट कर रो पड़ी। मैं भी अपने आपको न सम्भाल सका और उनके पैरों पर गिर पड़ा। मैं कुछ भी न बोल सका, जैसे बुद्धि और कण्ठ दोनों को पक्षाघात हो गया हो, आंखों से अविरल धार बहने लगी।

'मैं कितना अभाग था, जो पिता तुल्य बड़े भाई को कन्धा तक न दे सका यह बात आज तक मेरे हृदय में कांटे सी चुभती रहती है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इतनाकहते हुए बाबा की आंखें भर आईं, कुछ करुण होते हुए उन्होंने आगे कहाँ, 'माता पिता के वाद मेरे लिए सब कुछ वही थे, केवल उन्हीं के हृदय में मेरे प्रति सच्चा स्नेह था ! तभी से मैं भावज की कटुता पर चुप रह जाता हूं तथा तुम लोगों के प्रति मेरे हृदय में स्नेह स्वतः अंकुरित हो गया है। मानों भाई साहब कभी-कभी मेरी आत्मा में आ धीरे-धीरे कह जाते हों, 'तुम सब मेरे हो, अपने हो अपनी भाभी और नरेन्द्र को न भूल जाना।'

'तब मैंने निश्चय किया अब भाभी की सेवा में ही जीवन बिताऊँगा और घर को सम्भालने में अपना पूरा-पूरा योग देता रहूंगा। नरेन्द्र को अपना ही समझ कर अपने कर्तव्य तथा उत्तरदायित्व का पूरा-पूरा ध्यान रखूंगा; किन्तु यह सब बातें दृढ़ता से मेरे पास नहीं रह सकीं, भाभी की कटुता पुनः धीरे-धीरे उभर कर मेरे विचारों को असंतुलित करती गयी, और एक दिन उनके मुख से निकला, 'भाई की कमाई खाने के लिए अब घर में डटे हैं, यह नहीं कहीं मुंह काला कर जाय।' तीर उनका ठीक निशाने पर पड़ा, क्रोध के आवेश को मैं दाब नहीं सका। उनसे कुछ कहने का साहस भी नहीं हुआ, बात सच थी, मैं दूसरे की कमाई पर आश्रित होने वाला हूं कौन ! उसी क्षण मैं घर से बाहर हो गया, और फिर कभी अपने को न सम्भाल सका।

'उस समय प्रथम विश्व युद्ध का श्रीगणेश हुआ था, मैंने अपने को देश की सेवा के लिए अर्पित कर दिया। मुझे ब्राह्मण पल्टन नम्बर चौदह का एक सिपाही बना कर, विदेश के लिए रवाना कर दिया गया। प्रारम्भ में स्वतंत्रता छिन जाने से कुछ कष्ट अवश्य हुआ, किन्तु भावज़ के उन वैन वाणों ने मुझे कमजोर नहीं होने दिया। दूसरी बात यह भी थी कि पैसों की कमी नहीं रही और सब से आकर्षक बात यह रही कि जुवा खेलने की पूरी स्वतंत्रता मिल गई। किन्तु दुर्भाग्य से यह गाड़ी ब्राह्मणत्व का बोझ न वहन कर सकी, क्योंकि लाम पर हमने चमड़े के जूते पहने हुए भुने चने चबाने से भी इन्कार कर दिया।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय ने साश्चर्य पूछा, 'आपको भी इंकार था क्या ?'

'हृदय से तो मुझे कोई इंकार नहीं था; किंतु उस समाज से मैं बाहर भी नहीं जा सकता था और यह भी पाखण्ड ही है, कि वास्तविकता समझते हुए भी हम उनसे दूर भाग जाते हैं, केवल लकीर के फकीर रह जाते हैं। यही कारण है कि इस युग में, हमारी प्रगति अन्य लोगों से कम रही। हां तो ब्रिटिश हुकूमत के सामने यह एक विचित्र घटना थी, जिसके लिए उसके पास कोई नियम न था, अतः हमारी पलटन को तुरन्त भारत वापस आने का आदेश मिला और हम स्वदेश वापस आ गए।

'यहां हम एक बात और कहना चाहेंगे कि जिस दिन हमारा जलपोत बम्बई तट पर आया, उसे कुछ पहले ही रोक दिया गया। पता चला तिलक का अन्तिम संस्कार होने जा रहा है। उस दिन तक राजनीति तथा देश सेवा मेरे लिए बिल्कुल बेकार सी चीज थी और इस विषय पर बात करने वाले को मैं पहले दर्जे का बेवकूफ समझता था। लेकिन मेरी आंखों ने जब जनता की उमड़ती हुई भीड़ को देखा, तो हृदय में एक विशेष प्रभावोत्पादक भाव अंकुरित हो उठा।

'उस समय तक मनुष्य की परिभाषा मेरे लिए कितनी सीमित थी किन्तु उस उमड़ती हुई भीड़ ने मस्तिष्क की सीमाओं को मनुष्य के विषय में असीमित कर दिया। मैं मनुष्य को ज्ञान-सम्मान, नाम इत्यादि विशेष रूपों में विभक्त तथा तुलनात्मक विवेचन करके भी किसी परिभाषा की परिधि में नही बांध सका, मैं डूबता ही गया किन्तु मनुष्य की महान गहनता तक नहीं पहुंच सका। मेरे विचार बिल्कुल बदल गए और एक देश सेवक के रूप में अपने को अर्पण कर देने का निस्चय कर लिया।

'भारत आते ही हमारी पल्टन भंग कर दी गई, सुरक्षा और फौज के नियमों में यह नियम और लागू हो गया कि किसी विशेष जाति, धर्म की कोई भी फौजी टुकड़ी नहीं बनेगी। मैं बेकार हो गया वापस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आने पर कुछ रुपए मिल गये थे अतः अपने निश्चय के अनुसार मैं कांग्रेस के गर्म दल में सम्मिलित हो गया। नया खून और नया जोश ले कर आने वाले हम जैसे और भी लोग थे, मैं उनकी व्याख्या नहीं करना चाहता। इतना जरूर कहूंगा कि हम लोगों ने ब्रिटिश हुकूमत के सामने कुछ जटिल समस्याएं खड़ी कर दीं, और एक दिन अपने कुछ साथियों के साथ हम हुकूमत के मेहमान हो गंए।

'तब तक जेल भी मेरी कल्पना से बाहर थी लेकिन वहां एक सत्य जो सामने आया, मनुष्य के भिन्न-भिन्न रूप एक ही स्थान पर आ उपस्थित हुए, सुना करता था कि जेल दुराचारियों, अपराधियों को सही रास्ते पर लाने की जगह है, किन्तु मैंने बिल्कुल विपरीत पाया। जेल केवल उन सज्जन व्यक्तियों के मस्तिष्क का दण्ड है, जहां जाने से पहले वे सोच लेते हैं कि कठोरता वर्ती जाती है। लेकिन सही तो यह है कि समाज में फैली हुई बुराइयों की जेल एक संस्था है, पाठशाला है। जहां से सीख कर मनुष्य गलत रास्तों पर चलने का सही कौशल जान जाता है। या अनाड़ी खिलाड़ी बन जाता है।

'ऐसा क्यों बाबा ? दण्ड से तो पश्चाताप होना ही चाहिए' विनय ने प्रश्न किया।

'हां, होना तो पश्चाताप ही चाहिए, और होता भी है, लेकिन वह तभी तक होता है जब उसे जेल जाने का आदेश मिलता है, और जितना समय जेल तक पहुंचने में उसे लगता है। किन्तु अन्दर पहुंच जाने पर वह भावना अन्तर्लोप हो जाती है कि वह बुरा नहीं यह उससे गलती हो गई। यदि एक अवसर मिल सकता तो सम्भवतः वह अपने को सुधार लेता।'

एक दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए बाबा ने आगे कहा, 'लेकिन जब उसने सोच लिया कि वह बुरा हो गया तो निश्चय ही उसमें बुराई आ जाती है। फिर उस वातावरण का प्रभाव उन बुराइयों को धीरे-धीरे पुष्ट कर पक्का बना देता है। किन्तु इसकी मूल तो हमारे समाज में है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

घर में है, जिस ओर हमारा ध्यान नहीं जाता, और यदि जाता भी है तो हम स्वार्थान्धता वश अपने को रोक भी नहीं पाते।'

विनय बोला, 'जेल और समाज में तो बड़ा अन्तर है बाबा; जो बात वहां है वह बात यहां कैसे हो सकती है भला।'

'वहां व्यक्ति के लिए एक ही बन्धन है, समाज से, अपने प्रेमियों से अलग रहने का, किन्तु समाज में व्यक्ति के लिए कई बन्धन हैं। अन्तर यह है कि सामाजिक बन्धनों का पालन एक कर्तव्य है, और जेल के नियमों का पालन करना एक आदेश है। वहां के लिए एक निश्चित अवधि होती है, उसके बाद मनुष्य स्वतंत्र हो जाता है और तब वह समझ लेता है कि अमुक अपराध के दण्ड की कितनी अवधि है। किन्तु सामाजिक कर्तव्य जीवन पर्यन्त साथ ही रहते हैं। वह जन्म से मृत्यु तक उनके बन्धन में है। किन्तु जो अपराधी इस समाज के अंग होकर अपने अपराधों को, भोगों की, वासनाओं को अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए जो दाव पेंच फेंकते हैं, उसी के फलस्वरूप बहुत से लोग कर्तव्य विमुख हो जाते हैं। यह बुराई, वहीं से, हमारे अपनों से, प्रेमियों, इस मित्रों और घरों से पैदा हो कर जेल में जाकर दण्ड भोगने पर पुष्ट हो जाती है।'

'यह बात मेरी समझ में नहीं आई, स्वार्थी तो अपनी ही छाया निहारता है, फिर भला उसका प्रभाव दूसरों पर कैसे पड़ेगा। स्वार्थी व्यक्ति स्वयं बच कर दूसरे में कैसे बुराई पैदा कर सकने में सफल हो सकता है।' विनय ने प्रतिवाद करते हुए कहा।

बाबा ने स्पष्ट करते हुए कहा, 'यह एक सत्य है, विनय! अपनी किसी स्वार्थ सिद्धि के लिए ज्ञान अथवा अज्ञान वश, तुम किसी व्यक्ति को अवलोकित करना आरम्भ कर दो, धीरे-धीरे उसके मानस पर उठने वाले संकल्प-विकल्पों की भाव-रश्मियां, उसे विचलित करना आरम्भ कर देंगी, और एक न एक दिन वह अवलोक को निःसंकोच दृढ़ता के साथ उठा लेने के लिए तैयार हो जायेगा। हां एक व्यक्ति द्वारा यह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सम्भव तभी होता है, जब वह उस व्यक्ति की प्रतिकूल परिस्थितियों का अवसर आते ही उकसाने में नहीं चूकता। जैसे प्रकृति के तमाम सत्य तथा वर्जित क्रियाओं से हमारा वश नहीं चलता वैसे ही मेरे विचार से यह भी मानवीय मानसिक क्रियाओं का एक सत्य है जिसे तुम मनोवैज्ञानिक सत्य भी कह सकते हो। यह ठीक है कि प्रत्येक व्यक्ति मनोविज्ञान का ज्ञाता नहीं होता, किन्तु उसकी मानसिक क्रियाएं उसी पर आधारित रहती हैं। वह उसकी सीमा का उल्लंघन नहीं कर सकता। एक मूर्ख अथवा विद्वान की मानसिक क्रियाएं स्वार्थ सिद्धि के लिए एक सी ही होंगी, किन्तु उनके उपकरण, दाव-पेंच में अन्तर हो जाता है। और यह भी वास्तविक है, सत्य है, यदि तुम जीवन की गहराइयों, तथ्यों पर ध्यान पूर्वक मनन करो तो तुम्हारी समझ में भी आ सकता है कि मनुष्य के नैतिक पतन और उत्थान के मूल में क्या है। मैंने मनोविज्ञान के मोटे-मोटे पोथे न तो देखे हैं और न पढ़े हैं और न उसके मर्मज्ञों से ही कभी बात करने का अवसर ही मिला है। लेकिन मैंने जीवन की गहराइयों में पैठने का कुछ प्रयास अवश्य किया है। मैं कहां तक समझने में सफल हो सकता हूं कह नहीं सकता, फिर भी जो थोड़ा बहुत मैं अपने जीवन के भटके हुए रास्तों से समझ सका, तुम्हारे सामने कहता जा रहा हूं।

'मेरे पास कल्पना या शब्दों का फेर नहीं है, न विचारों का कोई संश्लिष्ट व्यक्ति करण ही है, जो भी है, मेरे जीवन का सत्य है। मेरे विचार से सत्य कल्पना रहित है उसकी कोई कल्पना नहीं हो सकती और यदि कोई कल्पना होगी तो, निराधार, निरर्थक और असत्य।'

बाबा को खांसी आ गई कुछ रुक कर बोले, 'तुम मुझे दो पैसों की बीड़ी ला दो, मैं जरा आराम कर लूं।'

विनय उठकर बीड़ी लेने चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

***

बाबा के वह शब्द विनय के मस्तिष्क पटल पर सागर की तरंगों से उठने और गिरने लगे; क्या यह सत्य है कि सत्य की कोई कल्पना नहीं हो सकती, और यदि होगी तो निराधार, निरर्थक, असत्य होगी। फिर तो असत्य का मूल रूप ही सत्य हुआ, असत्य कैसा सब का सब सत्य, जो सुना जाय, कहा जाय, देखा जाय सब का सब सत्य ही तो है ! आम के पेड़ से खजूर कैसे गिरेंगे, ऐसा तो सम्भव नहीं । खेत में लहलहाते पौधे के बीज का अनुमान तो लग सकता है, किन्तु उस पौधे में भी बीज आयेगा या नहीं, यह संशय है, सत्य का काल्पनिक रूप असत्य। मूल रूप बीज देने के लिए पौधे को अंकुरित होना पड़ता है, फूलना पड़ता है, फलना पड़ता है । पकना पड़ता है और तब, उसका असत्य विलीन हो जाता है । रहेगा क्या ? सत्य का वही सत्य स्वरूप ! तो क्या हम किसी निराधार, निरर्थक विषय से सत्य के मूल रूप तक नहीं पहुंच सकते; जब तक कि वह पुनः सत्य न हो जाय। क्या यही वह असत्य है जो सत्य को अवरित कर हमारे सर्वनाश का कारण बन जाता है। वह नकली, हरापन, आकर्षण और रूप में सही रास्ते से विलग कर देता है आकर्षण के जाल में पड़ कर सत्य के देखने-खोजने का अवसर ही हमें कब मिलता है। नहीं-नहीं अवसर तो बहुत आते होंगे, अवकाश नहीं मिल पाता, यह भी नहीं, तो फिर हम अपने बुद्धि ज्ञान के संतुलन को खोकर आकर्षण में भटक जाते हैं क्या ? संभव है, और तभी कदाचित हम अपने जीवन को महत्व देते हैं दूसरे के जीवन को नहीं, हम जीना चाहते हैं लेकिन दूसरे को जीने नहीं देना चाहते, तभी बाबा ने कहा, जीना चाहते हो तो दूसरे को जीने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दो अपने स्वार्थ, आकर्षण को छोड़कर……'

तभी सहसा कोई परिचित स्वर उसके कानों में पड़ा तो चेतना की एक लहर ने उसका मुंह खोल दिया, 'अरे किशोर, कब आये, कहां हो, क्या कर रहे हो, कैसे हो ?'

किशोर ने विनय को गले से लगाते हुए कहा, 'तुमने तो एक साथ कई प्रश्न कर डाले, बोलो पहले किस प्रश्न का उत्तर दूं ।'

विनय कुछ संकुचित हो गया, किशोर ने ठीक ही तो कहा, उसकी विचार श्रृंखला भंग होने पर वह इतने प्रश्न इसी संशय में तो कर गया कि किशोर ने कहीं कई बार न पुकारा हो । या समझ रहा हो कि पहचान नहीं सका, किन्तु मुस्कराकर बोला. 'क्या एक बार में पूछे गए कई प्रश्नों का एक बार में उत्तर नहीं दिया जा सकता !'

वह चट से उत्तर देते हुए बोला, 'आज ही आया हूं, बम्बई में हूं, झख मारने वालों का इन्सपेक्टर था, लेकिन अब नई जगह पर काम करने बनारस जा रहा हूं ।'

सुनते ही विनय हंस पड़ा, 'सब बातें अभी तक वैसी ही बरकरार हैं ।'

'जी हुजूर, मगर आपका नक्शा कैसे बदल गया' विनय की ओर देखते हुए किशोर ने पूछा ।

एक हलकी सी निःश्वास के साथ मुस्कराने का प्रयास करते हुए, विनय ने उत्तर दिया, 'समय का सहयोग नहीं मिल रहा है ।' किन्तु उसके व्यक्तिकरण ने हृदय की गहराइयों को चेहरे पर उभार दिया ।

'हूं' किंचित गम्भीर होते हुए किशोर ने कहा, 'तो अभी तक बेकार हो ।'

'यह भी एक जरूरी बात है ।'

'बी. ए. तो कर लिया होगा ।'

'बी. ए. तो नहीं पर बीवी जरूर कर ली है ।' विनय ने परिहासिक उत्तर दिया ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'चलो यह भी ठीक किया, तब तो परवरदिगार ने खिलौना भी दे दिया होगा।'

'अभी तक तो……'

किशोर ने बात पूरी करते हुए कहा, 'चलो यह भी ठीक है, बेकारी में कुछ तो राहत दी उसने, हां यह बताओ भाभी तो मन की हैं।'

विनय चुप रहा तो किशोर ने अनुमान लगाते हुए कहा, 'चलो यह भी ठीक है मन-पसन्द बीवी पाकर लोग माया में फंस कर खुद गर्ज हो जाते हैं, अब कुछ काम की बातें होनी चाहिएं!'

विनय ने मुस्कराते हुए कहा, 'चलो यह भी ठीक है। घर पर चाय-वाय पीकर ही आऊंगा।'

विनय ने घर की ओर मुड़ते हुए पूछा, 'यहाँ आना कैसे हुआ।'

किशोर ने एक सिफारशी पत्र दिखलाते हुए कहा, 'यह देखो इनसे मिलना है; ताकि बनारस में कोई कष्ट न हो। और नौकरी भी इन्हीं की कृपा से लग गई। वैसे तो मुझे कपड़े के काम में ए और बी भी नहीं आता।'

विनय ने मुस्करा कर कहा, 'समझा! आंधी के आम हैं, बीन लो, लेकिन जब तक इस आंधी का वक्त न होगा, देश इसी जर्जर अवस्था में पड़ा रहेगा।'

किशोर ने व्यंग किया, 'तुम तो फिलासफर हो गये हो, लेकिन यह क्यों भूल जाते हो कि सुकरात को भी ज़हर दिया गया था। मेरे दोस्त जिन्दा रहना चाहते हो तो इस आंधी में पीठ कर लो!'

विनय को याद आया कि वह बीड़ी लेने आया था, अतः उसने दो पैसे की बीड़ियाँ खरीदीं और बात करता हुआ चल दिया।

धीरे-धीरे दोनों घर पहुंच गए। विनय ने बाबा को बीड़ियां देते हुए किशोर का परिचय दिया, 'यह हैं मेरे पुराने मित्र किशोर और यह मेरे बाबा जी हैं।'

'नमस्ते।' कहते हुए किशोर विनय के साथ कमरे में चला गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कमरे में प्रवेश करते हुए विनय ने कहा, 'हवा के रुख की बात तो तुमने ठीक कही, लेकिन यह हमारे कल्याण की बात नहीं है। स्वार्थ की बात है।'

'अरे स्वार्थ तो प्रकृति के कण-कण में व्याप्त है, प्यारे, तुम भी अवसर से लाभ उठाना सीखो नहीं तो जिन्दगी भर बेकार के बेकार ही रह जाओगे।'

'लेकिन'.......'

'लेकिन-लेकिन कुछ नहीं, जल्दी से एक अर्जी, मैनेजर 'सुविधा भंडार' बनारस के नाम से लिख डालो और मुझे दे दो, बस एक महीने के अन्दर तुम्हारी नौकरी पक्की।'

'इतनी जल्दी, सो कैसे ?'

'हाँ-हाँ होने वाला मैनेजर तो तुम्हारे सामने ही खड़ा है, चाहो तो अभी से बौस कह सकते हो।'

विनय हंसकर बोला, 'फिर एक महीना कैसे लगेया 'बौस'।'

'अरे प्यारे दस पन्द्रह दिन मेरे जमने के और दस पन्द्रह दिन तुमको फिट करने के, बस।'

विनय प्रार्थना-पत्र लिखने लगा, इसी समय विनय की छोटी बहन ने चाय की ट्रे लाकर रख दी।

किशोर ने चाय बनाते हुए, बेबी से पूछा, 'तुम्हारा नाम क्या है ?'

'गीता'

'तुम्हारी भाभी तो अच्छी हैं न ?'

'बड़ी अच्छी हैं।'

'अच्छा तो उनसे मेरा नमस्ते कह दो, लेकिन हां, वह मुझे क्या पहचाने, उनसे कहना तुम्हारे भइया के एक दिली दोस्त किशोर ने नमस्ते हमारे हाथ भेजा है। समझीं ?'

गीता ने सर हिलाते हुए कहा, 'समझी।'

'क्या समझी बोलो तो ?' किशोर ने पूछा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गीता ने किशोर के वाक्य को दोहराते हुए कहा, 'विनय भइया के दिली दोस्त ने अपने साथ आपको नमस्ते भेजा है।'

किशोर ठहाके के साथ हंस पड़ा, 'बिल्कुल गलत समझी।'

गीता लजा कर भाग गई!

विनय अब तक प्रार्थना-पत्र लिख चुका था, किशोर को देते हुए बोला, 'वह बिल्कुल ठीक से समझ गई; जब ऐसा ही कहेगी तो समझने वाले उसे सीधा करके समझ लेंगे।'

'यह भी ठीक है, उल्टी बात को सीधा समझा जाता है, यानी किसी सीधी बात को उल्टा' इतना कहते हुए किशोर ने चाय की चुस्की ली।

विनय ने भी चाय की चुस्की लेते हुए पूछा, 'क्या तुम्हें विश्वास है है कि मेरी नौकरी लग ही जायेगी।'

'चलो यह भी ठीक है, लग भी जाय तो तुम विश्वास न करना, प्यारे! जब तक समय साथ नहीं देता, यही होता है, दिल और दिमाग दोनों बवंडर की तरह, दिन रात चक्कर काटते और धूल बटोरते रहते हैं, 'लेकिन हां नौकरी लग जाय और तुम बनारस आओ तो, मेरी एक बात अभी गांठ से बांध लो' इतना कहते हुए किशोर ने फिर चाय की चुस्की ली।

'वह क्या?' विनय ने पूछा।

'यही कि एक सेल्समैन बन कर आना, फिलासफर नहीं?' फिर शेष चाय समाप्त करते हुए किशोर ने पूछा, 'मेरे कहने से क्या सोचा आपने?'

विनय मुस्करा दिया, 'दिमाग यहीं छोड़ कर चला आऊंगा।' इतना कहते हुए उसने भी प्याला खाली कर दिया।

किशोर ने उठते हुए कहा, 'पुरानी बातें याद आ गईं, सोचा तुमसे मिलता चलूं, और कुछ मनोरंजन ही हो जायेगा, साथ में आ गए तो हंसी मजाक में दिन भी आराम से कट जाया करेंगे! और अगर तुमने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहीं सोचना शुरू कर दिया, आदमी क्या है ? फिर उसमें दिमाग क्या है, फिर दिमाग में विचार क्या है, और फिर उनकी दौड़ कहां तक कैसे है, चन्द्रमा तो सामने ही हैं, फिर क्यों वहां तक पहुंचने के लिए इतना प्रपंच हो रहा है और फिर . . .

विनय हंस पड़ा, 'बस-बस, कहीं चांद को स्वयं न उतर आना पड़े।' मुझसे तो ज्यादा दूर तक तुम सोचते हो !'

'मेरे कहने का मकसद है कि विचारों में अगर आप ग्राहक को दूकान से उठा कर बाहर फेंकने लगे तो बस तुम्हारे साथ हमें भी वापसी टिकट खरीदना पड़ जायेगा।'

'फिर सोचना क्या पड़ेगा वह भी कह डालो।'

सोचता पड़ेगा ग्राहक क्या चाहता है ? कैसा चाहता है, क्यों चाहता है। नई-नई शादी हुई है, या प्यार की पहचान देना चाहता है, अगर साथ में किसी को लाया है तो उसका झुकाव किधर है, क्योंकि जिधर झुकाव होगा, उधर ही तुम और झुका सकोगे ! सब आकर्षण की तरफ भागते हैं, तुम्हारी चीज के रंगरूप के साथ बातों-बातों में फांसने का ढंग होना चाहिए, बस सौदा पट गया समझो, और अगर तुम्हारी फिलासफी के चक्कर में वह उठ कर यूं बाहर की ओर पिण्ड छुड़ा कर चल दिया तो . . .' कहते हुए किशोर यूं के साथ ही साथ उठ कर चल भी दिया, तो विनय ने भी उठते हुए मुस्करा कर कहा, 'लेकिन आकर्षण में वास्तविकता तो होती नहीं।'

किशोर द्वार तक पहुंचा ही था, यह सुनते ही पलट कर बोला, 'फिर वही बात, अमां साल भर बम्बई में झक ही नहीं मारता रहा; जरा देखो तो चारों तरफ आकर्षण ही आकर्षण है, और इसीलिए भूखों रह कर भी लोगों का मोह जिन्दगी से नहीं छूट पाता' कहता हुआ वह नीचे उतरने लगा, साथ-साथ विनय भी उतरता चला आया।

बाबा के सामने पहुंचते हुए किशोर ने कहा, 'अच्छा बाबा जी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नमस्ते ! फिर कभी अवसर मिला तो आपके दर्शनों को हाजिर हो जाऊंगा ।'

बाबा ने कहा, 'खुश रहो ! मुझसे तो मिलने आना, दर्शन करना हो तो बनारस में विश्वनाथ जी का मन्दिर तो है ही ।'

किशोर ने मुस्कराते हुए कहा, 'मालूम होता है, घर का घर दर्शन शास्त्र के अध्ययन का केन्द्र हो रहा है ! क्षमा कीजिएगा बाबाजी, अपना स्वभाव ही ऐसा है । कुछ सोच नहीं पाता, बात जबान पर आते ही फिसल जाती है, जैसे कोई मशीन हो ।'

बाबा ने हंसते हुए कहा, 'मशीनों का युग है ! विज्ञान का, आज कल दिमाग कम मशीनें ज्यादा चलती हैं । आदमी को अपने ऊपर कम, अपनी निर्मित वस्तुओं पर अधिक विश्वास बढ़ गया है न ! तुम इस युग में ठीक हो ! '

किशोर ने फिर मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया, 'मालूम होता है यह फिलासफी विनय को आप ही पढ़ा रहे हैं; फिर तो अपना भी कल्याण हो जायेगा । क्योंकि इन्हें मैं शीघ्र ही बनारस बुलाये ले रहा हूं । देखिए अभी लगभग एक माह लग सकता है, अतः तब तक इनमें कोई कमी न रहने पाये, क्योंकि आप तो जानते ही है, काशी तो पुराना अखाड़ा है ।'

विनय ने हंसते हुए कहा, 'चलो यह भी ठीक है बाबा को कोई सलाहकार नहीं मिला था ! '

इस पर बाबा भी हंस पड़े ! किशोर बाहर की ओर चल दिया साथ ही बाहर आते हुए विनय ने पूछा, 'मैं समझ नहीं सका कि अभी तक तुम इतने हलके कैसे रह गए ?'

किशोर ने प्रश्न किया; और मैं यदि पूछूं, आप इतने भारी कैसे हो गए तो · ·'

हंसते हुए विनय ने पुनः प्रश्न किया, 'तुम्हारे जीवन का उद्देश्य क्या है ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'वाह जी, उत्तर केवल हंसी में और प्रश्न में इतनी गम्भीरता' किशोर ने व्यंगात्मक ढंग से कहते हुए उत्तर दिया, 'उद्देश्य है ज्यादा से ज्यादा कमाना दिन भर हंसना गाना, और रात को वीवी से मीठी मीठी प्यार की बातें।'

'चलो यह भी ठीक है,' कहते हुए विनय मुस्करा पड़ा, 'लेकिन कभी समाज की ओर नैतिकता के विकास की ओर ध्यान नहीं जाता क्या ?'

'जी नहीं, हम जिस गढ़े में हैं निकलना मुश्किल है, जैसे तुम कल्पना सागर में इतना डूब गए हो कि स्वयं कल्पना बन कर सत्य से दूर हो गए हो अब उसकी कोई कल्पना नहीं की जा सकती। जैसे हमारी वहुरंगी कल्पनाएं होती हैं, वैसे ही यहां वहुरंगे मानव जीवन और वहुरंगे समाज। मैं तो सिर्फ इतनी ही कल्पना करता हूं, जो मेरे जीवन को सुखमय वना सके; हां इतना ध्यान अवश्य रखता हूं कि मेरी कल्पना से, विचारों से या मुझ से किसी को हानि न हो। स्वार्थ यहां सब का अपना अपना है, अपने सुख के लिए, अपने कल्याण के लिए, समाज के लिए नहीं, जग के लिए नहीं। हम समाज की नैतिकता की शिकायत तभी कर सकते हैं, जब नैतिकता का ढोल न पीट स्वयं भी नैतिकता का विकास करें। किन्तु लोग दूसरों पर आक्षेप करने में अपने को सम्भालने से ज्यादा कुशल हैं।'

किशोर की विनोदता कुछ क्षणों के लिए ऐसी विलीन हो गई जैसे कि छोटी नदी किसी महासागर के अन्तस्तल में वैठ जाती है और उसका कोई अस्तित्व ही नहीं रह जाता। फिर उसने विनय के कंधे पर हाथ रखते हुए आगे कहा, 'मेरे दोस्त इन सब बातों की गहनता में उतरने के लिए, भारी होने के लिए, नए युग, नए जीवन के लिए नए बीज वोने पड़ेंगे! उनके अंकुरों को, अपने व्यक्तिगत बड़े-से-बड़े स्वार्थों को त्याग कर सींचना पड़ेगा, ताकि फूलने-फलने तक उनमें दोषी बीज का प्रभाव न रह जाय, लेकिन वहुरंगी कल्पनाओं में यह कहां तक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

संभव है। आदमी को हलके से भारी होना आसान है, लेकिन भारी से हलका होना असम्भव।'

'यदि ऐसी ही कल्पना करें तो' विनय के मुख से निकल गया। किशोर हंस पड़ा, 'मेरी बातों पर पहले विचार करना, कल्पना नहीं, गहनता में बैठना, फिर एक माह बाद जब दूसरी भेंट हो तब उत्तर देना!'

मनुष्य कभी-कभी ऐसी परिस्थिति में आ फंसता है, जहां वह समझता तो हर बात है, लेकिन न तो उसे स्पष्ट रूप से व्यक्त ही कर सकता है, न सक्रिय योग ही दे सकता है, तो वह दशा बड़ी ही नाजुक और शोचनीय हो जाती है; ऐसी स्थिति में संभव-असंभव, निश्चित-अनिश्चित के संकल्प-विकल्प में फंस कर वह कुछ समय के लिए निष्क्रिय तो हो ही जाता है भले ही उसका बौद्धिक संतुलन कालान्तर में परिस्थितियों का सहयोग पा सक्रिय कर सके।

विनय ने सोचा, कि जिन बातों की गहनता पर वह सोचता हैं उन्हें अकेले वही नहीं समझता; समझने वाले बहुत हैं, किन्तु वास्तव में करने वाले कम। विनय को चुप देख किशोर ने टोका, 'हुजूर मेरी गाड़ी का समय हो गया, अब नमस्ते कीजिए न।'

विनय को स्थिति सम्भालने में एक क्षण भी न लगा, 'नमस्ते, लेकित ध्यान रखना।'

'किस बात का?'

'मेरी अर्जी का' विनय ने ऐसे कहा, मानों कहना कुछ था और कहता कुछ गया।

किशोर ने हंस कर उत्तर दिया, 'वह तो मेरी जेब में है ही; लेकिन तुमने अब तक की बातों में यही एक बात फायदे की सोची है। जरा अपना भी ध्यान रक्खा करो प्यारे!'

विनय किंचित मुस्कराया। किशोर चल दिया।

वह भी घर की ओर मुड़ चला।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२३

***

शहनाई की धुन गूंज कर मंगलमय प्रसार कर रही थी। सारे का सारा घर तीर्थ स्थान के धर्मशाले की तरह खचाखच भरा हुआ था। जैसा कि किसी पर्व-स्नान पर होता है। कहीं बच्चे ऊधम कर रहे थे, कहीं स्त्रियां अपने-अपने बक्सों को खोल कर अपनी वेशभूषा संवारने की छानबीन में तल्लीन थीं। किसी कमरे में गांव से आए नवयुवक सिलवट्टा लिए भंग का रंग उभारने में जुट रहे थे, तथा कहीं बारात सजाने, ले जाने के प्रबन्धकर्ताओं का सम्मेलन हो रहा था!

लगभग सभी लोग अपने-अपने रंग और ढंग में उलझे हुए थे। बीच-बीच में यदि कहीं राजेश की पुकार होती तो वह तुरन्त जा उपस्थित होता। मध्यस्थ जी उपाध्याय जी सभी गतिविधियों को बड़े ध्यान से देख रहे थे। किसी पल वह राजेश को अपनी आंखों से ओझल न होने देते। लेकिन राजेश की उत्सुकता, प्रफुल्लता और व्यवहार की आत्मीयता, उनके हृदय में जड़े सन्देह को धीरे-धीरे समूल उखाड़ता जा रहा था।

भंग तैयार हो गई। राजेश तो भंग पीने में गुरु था ही, दूसरे को पिलाने में नहीं चूकता था, अतः उपाध्याय जी को भी एक गिलास लेनी ही पड़ गई! सन्तरे और अंगूर के रस में छानी गई भंग अति स्वादिष्ट थी उपाध्याय जी अपनी पुरानी आदत के कारण तथा स्वादिष्ट स्वाद का लोभ संवरण नहीं कर सके और एक के स्थान पर दो गिलास चढ़ा गए।

संध्या को पांच बज रहे थे। सभी भंग की तरंग में डूबने उतरने लगे। बारात का प्रस्थान दूसरे दिन प्रातः तीन बजे होना था। राजेश

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ने पाजामा और कुर्ता पहन रखा था। जब वह भीतर का एक चक्कर काट बाहर वाले कमरे में पहुंचा तो उपाध्याय जी ने पूछा, 'आज आपके मित्र नहीं दिखलाई पड़े।'

राजेश ने उपाध्याय जी की मुखाकृति पर दृष्टि गड़ाते हुए उत्तर दिया, 'आप किस मियां की बात कर रहे हैं।'

'मेरा आशय तो केवल विनय से ही था' व्यंग के साथ-साथ उपाध्याय जी की आंखों में भंग की तरंग के लाल-लाल डोरे उभर आए।'

राजेश ने गम्भीरता से उत्तर दिया, 'वह नहीं आयेगा।'

'क्यों'? साश्चर्य उन्होंने पूछा!

राजेश ने तनिक मुस्कराते हुए कहा, 'क्योंकि मेरी शादी है, आप से उस दिन बातें तो हुई होंगी।'

'उस दिन तो उसने आने का वायदा किया था।'

'लेकिन मैं तो उसकी शादी में सम्मिलित नहीं हुआ था।'

'अच्छा तो यह बात है। 'अब समझा' उपाध्याय जी ऐसे बोले जैसे उनके मस्तिष्क का कोई विशेष तथा भारी बोझ उतर गया हो!

इसी समय भीतर से समाचार मिला, कि राजेश को भीतर पंडित जी बुला रहे हैं। राजेश भीतर की ओर चल दिया।

भीतर जाने का रास्ता तथा नीचे जाने का रास्ता साथ ही साथ था। बहुधा भीड़ में लोगों को एक दूसरे का ध्यान नहीं रह पाता था। स्त्रियों को तो अपना ही ध्यान रह पाता है फिर दूसरे की बात क्या। राजेश भीतर गया यह जान कर उपाध्याय जी भी निश्चिंत हो गए।

राजेश कमरे से बाहर ही हुआ था कि इसी समय उसके एक मित्र कुमार ने कमरे में प्रवेश करते ही उपाध्याय जी को अपने साथ लपेटते हुए कहा, 'अच्छा! तो उपाध्याय जी; आप अभी तक यहीं हैं। मालूम देता है वर-बारात साथ ही लेकर जाने का विचार है।'

भंग की तरंग में मुस्कराते हुए उपाध्याय जी ने उत्तर दिया, 'आप लोगों की कृपा का आभारी हूं।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'अब तो कोई संशय-वंशय नहीं रहा ?'

उपाध्याय जी ने निश्चितता व्यक्त करते हुए कहा, 'संशय कैसा; मेरे विचार से तो विनय जी ने खाम-ख्वाह बात बढ़ा दी थी !'

'फिर तो चैन से बारात के मजे रहेंगे।'

इसी समय भीतर राजेश के भांनजे ने आकर पूछा,' राजेश मामा कहां हैं, कितनी देर से पण्डित जी बुलाते हैं।'

उपाध्याय जी तुरन्त उठ बैठे; सन्देह की रेखाएं उनके मस्तिष्क पर उभर आईं 'कहीं चला तो नहीं गया' धीरे से बुड़-बुड़ाए भी पर किसी ने ध्यान नहीं दिया।

राजेश कहां है। पण्डित जी चौक सजा, पटा बिछा बैठे रह गए। दक्षिणा की सभी आशाएं धूल हो गईं। सजी-सजाई स्त्रियों की वेशभूषा बदलने लगी। लोगों की भंग फीकी पड़ने लगी। प्रबन्धकों के नीचे से तो जैसे धीरे-धीरे धरती खिसक रही हो। उपाध्याय जी का नशा तो चौकड़िया भर गया, और वह सब मुँह ताकते हुए इधर-उधर राजेश को खोजने लगे। मिस्टर कुमार जो अब तक उपाध्याय जी को लपेटे बैठे थे उन्हें तो जैसे सांप सूंघ गया हो, बार-बार वह यही सोचते; उपाध्याय जी कहीं उन्हीं पर सन्देह न कर रहे हों, क्योंकि उन्हीं की लपेट में उनका ध्यान कुछ क्षणों को हट गया था; और कमबख्त भागा भी तो मेरे आने के साथ ही साथ। लेकिन एक बात और जटिल थी, वह अपने निर्दोष होने का कारण क्या बताएं, उपाध्याय जी का ध्यान बटाने में मैंने ही तो------तभी उपाध्याय जी कमरे में प्रवेश करते हुए बड़बड़ाए, 'विनय के यहां गया होगा; मालूम होता है उसे सब खबर है, तभी वह नहीं आया !' कुमार को इस बात से जान मिल गई; अपनी स्थिति सम्भालते हुए वह बोल पड़ा, 'विनय का घर मुझे मालूम है; मुझे उसके सारे अड्डे मालूम हैं; चलिए अभी शहर के बाहर नहीं गया होगा।'

उपाध्याय जी बिना कुछ आगे सोचे तुरन्त उसके साथ चल दिए। कुमार की समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या कहे, किस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अपनी सफाई दे कि राजेश के इस कृत्य से वह बिल्कुल अनभिज्ञ था। उपाध्याय जी ने उसकी उलझन को समझते हुए कहा, 'केवल विनय पर ही मुझे सन्देह है, क्योंकि बात उसी की सच निकली, फिर वह आया भी नहीं, इससे स्पष्ट है कि उसे सब कुछ मालूम है ! अब कुमार को कुछ कहने का अवसर मिला, 'देखो तो पढ़ा लिखा मूर्ख निकला। इसने तो सब का सर नीचा कर दिया। यहां की तो बात ही नहीं, आखिर आपके यहां जब यह खबर पहुंचेगी, तो राम जाने क्या हाल होगा, क्या सोचेंगे उधर के सम्बन्धी।'

'मैंने भी कच्ची गोलियां नहीं खेली हैं कुमार ! सब प्रबन्ध कर रखा है। पहले स्टेशन चलिए तो तार दे दूँ।' उपाध्याय जी ने अपना चातुर्य प्रकट करते हुए कहा।

'क्यों नहीं, काम हो ही जाता है, उपाध्याय जी, लेकिन मनुष्यता भी तो कोई चीज है। छिः-छिः मेरी मित्रता तो आज से समाप्त हो गयी; यह तो बड़ा ही खतरनाक आदमी निकला।' कुमार ने उपाध्याय जी की हां में हां मिलाते हुए कहा !

'बुरा न मानियेगा कुमार बाबू; आखिर आप मित्र ठहरे, लेकिन कहूंगा मैं जरूर। आप उसे आदमी कहते हैं वह भी खतरनाक, लेकिन मैं वह नहीं कह सकता !'

कुमार ने समर्थन किया, 'बात तो आप ठीक कह रहे हैं, ऐसे आदमी को आदमी कहना भी आदमी की तौहीन करना है।'

उसी समय सामने रिक्शा आ गया। दोनों उस गर बैठ कर स्टेशन की ओर चल दिए !

उपाध्याय जी ने सबसे पहले पहुंच कर तार दिया, 'राजेश चिन्ता-जनक टाल दीजिए।'

कुमार ने पूछा, 'उससे क्या होगा ?'

'बात छिप जायेगी।'

कुमार ने रिक्शे की ओर बढ़ते हुए कहा, 'लेकिन बात छिप जाने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से तो काम नहीं चलेगा। अब राजेश का क्या भरोसा।'

उपाध्याय जी ने स्पष्ट करते हुए कहा, 'राजेश उस कन्या के योग्य नहीं है। वहां बारात अगले सप्ताह पहुंच जायेगी।'

साश्चर्य कुमार ने पूछा, 'सो कैसे।'

'मैंने दूसरी जगह भी सम्बन्ध तै कर रक्खा है।'

'फिर तो आपने बड़ी दूर-दर्शिता की।'

'जी हां,' विनय की उल्टी-सीधी बातों ने सन्देह तो उत्पन्न ही कर दिया था।

लेकिन यह लड़का भी भटक गया।'

अब तक रिक्शा विनय के दरवाज़े पर पहुंच चुका था। बाबा वहीं बाहर तख्त पर बैठे बीड़ी पी रहे थे। कुमार ने पास जाते हुए पूछा, 'विनय है बाबा ?'

'बाहर गए हैं, कल तक शायद आ जाय।' बाबा ने उत्तर देते हुए कुमार की ओर देखा।

'कब गए थे ?'

'आज चौथा दिन है' कुमार की चिन्तित मुखाकृति की ओर देखते हुए बाबा प्रश्न कर बैठे, 'क्यों ? क्या बात है ?'

'कुछ नहीं ! राजेश तो यहां नहीं आया ?'

'राजेश !' साश्चर्य बाबा के मुख से निकल गया, 'उसकी तो आज बारात जानी है।'

'हां, विनय नहीं पहुंचा था, मैंने सोचा शायद वह उसे लेने आया हो, अच्छा धन्यवाद' इतना कहते हुए कुमार रिक्शे की ओर मुड़ा तो बाबा ने पूछा, 'लेकिन आप अपना नाम तो बताते जाइए, विनय आएगा तो क्या कहूंगा।'

'कह दीजिएगा कुमार आया था।' कहते हुए वह रिक्शे पर जा बैठा।

रिक्शा वापस चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उपाध्याय जी बोले, 'देखा मैं ठीक कहता था न, विनय को सब कुछ मालूम है इसीलिए वह चला गया।'

कुमार ने समर्थन किया, 'अब मेरी समझ में भी कुछ ऐसा ही आ रहा है।

'राजेश निकल गया' उपाध्याय जी बोले।

अभी रिक्शा थोड़ी ही दूर गया होगा, सामने से विनय आता दीख पड़ा। कुमार ने पुकारा, 'विनय!'

विनय ने भी दोनों को देख लिया और पास आता हुआ बोला, 'कहिए मिस्टर कुमार सब तैयारी तो हो गई होगी।' फिर उपाध्याय जी की ओर देखते हुए उसने आश्चर्य प्रगट किया, 'अरे आप यहां कैसे।'

'जी हां, लेकिन आप कहां से आ रहे हैं?' किशोर ने प्रश्न किया।

'गांव गया था। आना तो कल था, फिर सोचा आज ही पहुंच चलूं तो ठीक रहेगा।' विनय ने उत्तर देते हुए उपाध्याय जी से पूछा, 'चुप क्यों हैं उपाध्याय जी।'

उपाध्याय जी ने तीखा व्यंग किया, 'मैं मीठी छुरी का कमाल देख रहा हूं।' क्यों? क्या हुआ? विनय को उपाध्याय जी के उत्तर से सन्देह हो गया।

'वाह, आप तो ऐसे पूछ रहे हैं जैसे आपको कुछ मालूम ही न हो, मिस्टर यह किसी के जीवन का प्रश्न है, किसी का जीवन बिगाड़ने से आपको कोई लाभ न होगा, लेकिन बन जाने से श्रेय मिल सकता है।' उपाध्याय जी ने व्यंग करते हुए कह डाला।

विनय को वास्तविक स्थिति का ज्ञान हो गया। उसने स्पष्ट करते हुए गम्भीर हो कर कहा, 'आप भ्रम में हैं उपाध्याय जी, मेरा राजेश के साथ ऐसा कोई सम्बन्ध नहीं है, और जो कुछ भी बातें मैंने आपसे उस रोज कही थीं, उनकी सीमा थी। राजेश ने जो सीमा तोड़ दी है, उसका वही जिम्मेदार है। विनय केवल एक मित्र था, जब तक वह राजेश था, सीमा के अन्दर था, और अब विनय का केवल एक परि-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चित है। राजेश के व्यक्तिगत जीवन से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं।'

उपाध्याय जी ने अब जरा तीखे स्वर में कहा, 'अजी साफ-साफ कह दीजिए, आप कुछ नहीं जानते या कहना नहीं चाहते। हम आप का दर्शन सुनने नहीं आये हैं।'

विनय ने किंचित मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया, 'भ्रम का निवारण स्वयं हो जायेगा उपाध्याय जी, मेरे कहने की कोई आवश्यकता नहीं, वह आदमी नहीं रहा, जिसने आदमी की कद्र नहीं जानी। संदिग्ध विचारों वाला व्यक्ति विश्वासपात्र नहीं होता; यही कारण है कि मैं उस पर विश्वास नहीं कर सका, और न आपको सलाह दे सका। इसीलिए मैंने कहा भी था आदमी गलत हो कर अपने को सही समझता हो तो उस पर विश्वास करना मुझे नहीं आता।'

कुमार ने साफ-साफ पूछा, 'अच्छा यह तो बताओ, वह गया कहां होगा ?

'तो क्या भाग गया ?' साश्चर्य विनय ने पूछा।

'और आपने क्या समझा था हजरत ?'

'मैंने समझा था कि उसने ऐन वक्त पर इन्कार कर दिया होगा।'

इस बात को सुनते ही उपाध्याय जी का विनय के प्रति सन्देह जाता रहा। अचानक बोल पड़े; 'तो क्या सचमुच आपको खबर नहीं कि वह भाग गया।'

'जी नहीं, और न ऐसा कोई संकेत ही उसके विचारों या बातों से मिला था।' विनय ने स्पष्ट करते हुए कह दिया।

'हूं, गम्भीर होते हुए उपाध्याय जी ने कहा, 'तो हजरत जरूरत से ज्यादा गिर चुके हैं : अब मिल भी जाय तो यह सम्बन्ध मुझे मन्जूर नहीं। क्षमा कीजिएगा विनय जी, मैंने आपको गलत समझा था।'

विनय ने किंचित मुस्कराते हुए कुमार से कहा, 'हजरत आपकी ओर से तो...'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुमार जी सिटपिटाये से बोल पड़े, 'देखो, मिस्टर विनय बेकार की बातें अच्छी नहीं; उस दिन आपने अभय को लपेट लिया और आज मेरे ऊपर हावी हो गए।'

उपाध्याय जी ने स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा, 'आप लोग चिन्ता न करें मैं सब कुछ समझ गया हूं; व्यक्ति सदा अपने लिए उत्तरदायी है, उसके लिए दूसरों को लांछन देना, उसका अपमान करना है। अच्छा अब आज्ञा दीजिए विनय जी नमस्ते !'

'नमस्ते'

रिक्शा चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२४

***

मैं एक राजनीतिक बन्दी था; समयानुकूल छूट गया। बाहर आते ही मेरे सामने फिर वही रोटी का प्रश्न था। एक ऐसा प्रश्न जिसके सामने बड़ी-बड़ी समस्याएं नतमस्तक हो जाती हैं। महाराणा प्रताप से धीर-वीर और सिद्धान्तवादी भी विचलित हो उठे थे। फिर मेरी क्या बात; भला जुवारी का भी कोई सिद्धांत होता है। कोई गति होती है, उसे तो सिर्फ पैसा चाहिए, जुए के लिए, यदि हारा है तो, अगर जीता है तो भी पैसा चाहिए सांसारिक आकर्षणों से तृप्ति के लिए या अब जैसा कि समझने लगा हूं, धोखा खाने के लिए।

यह बात कदाचित अभी तुम्हारी समझ में न आ सके क्योंकि जीवन का एक लम्बा रास्ता तुम्हें तै करना है न। जब हम अपनी मंजिल के पास, अवसान के समीप पहुंचने लगते हैं, जब बीते दिन स्वप्न की भांति मानसिक पटल पर मोहक क्रीड़ायें करने लग जाते हैं, भविष्य एक ऐसा अन्धकार प्रतीत होने लगता है जिसके लिए न हम कोई आशा ही रखते हैं, न रख ही सकते हैं। उस समय जब हम संसार को पराया देखने लगते हैं, क्योंकि मोह समाप्त हो जाता है, आकर्षण नष्ट हो जाता है, आशाएं, अभिलाषाएं सब हमें छोड़ कर अतीत के स्वप्न मात्र रह जाती हैं, हम ऐसे यात्री बन जाते हैं, जिसका प्रस्थान बहुत निकट है या वह नौका पर सवार हो किनारा छोड़ चुका है। उसे जब किनारा मिलना ही नहीं जो छूट चुका है उसकी बात ही क्या; आगे भी कोई किनारा नहीं, कोई आकर्षण नहीं, कोई मोह नहीं, कौन ले जा रहा है, कहां ले जा रहा है, इसका भी ज्ञान नहीं, तब मोह कैसा, आकर्षण कैसा, आशाएं कैसी ? तभी मनुष्य की सच्ची चेतना का स्वरूप सामने होता है और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तभी हम गत क्रियाओं के सही और गलत का कुछ अनुमान लगा पाते है। लेकिन सोचने से होता ही क्या है, तुम जहां तक मेरा विश्वास कर सको, लाभ उठा सको, उठा लेना, इसी दृष्टिकोण से मैं एक-एक घटना का चित्रण करता जा रहा हूं। तब बात और थी और अब बात और है।

दूसरों के अनुभव का लाभ विद्वान उठाते हैं और स्वयं अनुभव की अभिलाषा, नादान करते हैं।

तब जोश था, उत्साह था, लालसाएं थी, आशाएं थी, और सब कुछ भोग सकने की सामर्थ्य भी थी। मैं दिन भर मजदूरी करके पेट पाल कर जीवित रहने की भावना नहीं रखता था, मुझे पैसा चाहिए था, पैसा वह भी इतना जो मेरी तमाम आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके; उन आवश्यकताओं की पूर्ति जो असीमित थीं, अनावश्यक थीं, अनैतिक भी और घृणित भी।

सौभाग्य से ही समझो, क्योंकि उस समय मैंने इसे सौभाग्य ही समझा था, जब मेरा परिचय गफ्फार से हो गया। यह परिचय हुआ तो जेल में ही था, लेकिन सम्बन्धों की घनिष्टता जेल के बाहर हुई, जब मुझे पैसा चाहिए था और उसे सहयोग ! मैंने सहयोग देने का पूरा वचन दे दिया, तब उसने मुझसे कहा, 'देखो यह अपना वचन पूरा-पूरा निबाहना, इस रास्ते में आदमी का मूल्य उसका वचन और मित्रों के प्रति सच्ची सहानुभूति तथा विश्वास चाहता है, नहीं तो परिणाम भी बड़े भयंकर और असह्य होते हैं, हम दण्ड के लिए किसी न्यायालय का मुंह नहीं ताकते, और न किसी का सहयोग ही चाहते हैं, जो अपराध हमारे बीच में लोग करते हैं उनका दण्ड भी हम देना जानते हैं और उन थोथे न्यायालयों तथा सामाजिक ढकोसलों से अपने सहयोगियों की रक्षा करने की कोई कसर उठा नहीं रखते, यह हमारा अपना सम्प्रदाय है, अपना समाज, जहां हमारे अपने नियम हैं, बोलो; तैयार हो ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैंने गफ्फार की बातों को बड़े ध्यान से सुना और समझा था, मैं भी इस समाज के सामने हाथ फैला कर पेट पालने का पक्षपाती नहीं था और न होना ही चाहिए था; अतः सहज ही स्वभाव से कह दिया, 'मैं तैयार हूं।'

तब वह मुझे साथ लेकर दो चार दिनों तक यूं ही काम की खोज में घूमता रहा, लेकिन कोई काम न मिल सका, छोटे काम वह करना नहीं चाहता था, अतः चौथे दिन वह मुझे लेकर कानपुर आ गया। मैंने पूछा, 'यहां क्या होगा ?'

तो वह बोला, 'यहां मेरा एक साथी है, अक्कू ! उससे मिल कर कोई काम कर लेगें, तो कुछ दिन चैन से कट जायंगे।

कानपुर आने पर अक्कू से भेंट तो हो गई, लेकिन तीन दिन तक हम यूं ही घूमते रहे और कोई काम न बन सका, गफ्फार के पास भी रुपए खत्म हो चुके थे और मैं तो उसी के भरोसे पर चल रहा था, तीसरे दिन संन्ध्या समय लगभग सात बजे हम तीनों घंटाघर के नीचे एक छोटी सी दूकन पर चाय पी रहे थे, उसी समय गफ्फार ने कहा, 'अक्कू भाई तीन दिन तो हो गए, आशा न हो तो इलाहाबाद चला जाऊं, देखूं छैला के क्या हाल हैं ?

इस पर अक्कू बोल पड़ा, 'गर्म-गर्म खाने से मुंह जल जाता है गफ्फार भाई, इसीलिए जरा देर लग रही है। हमारे यहां आये हो खाली हाथ क्या जाओगे।'

मुझ से रहा न गया बोल ही तो पड़ा, 'गर्म और ठन्डा सब तसल्ली के लिए ही हैं, होने को कुछ नहीं, मेरे विचार से तो कोई और घर देखो गफ्फार भाई !'

इतना सुनते ही वह उत्तेजित हो उठा और तुरन्त पायजमा, कमीज उतार कर गफ्फार को देता हुआ बोला, 'लो सम्भालो इनको; और तुम दोनों नहर के किनारे-किनारे चल कर दूसरे पुल पर खड़े रहना, मैं बीस मिनट के अन्दर ही उधर से निकलूंगा, तब तुम हमारे पीछे-पीछे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चल देना। मैं छावनी में गिरजा घर के पास पार्क में तुम लोगों का इन्तजार करूंगा, वहीं आ कर मिल लेना बस मैं जाता हूं।'

इतना कहते हुए उसने छुरे को लगोटे में खोस लिया, और नए गंज की ओर चला गया। मैं उसे देखता ही रहा जब तक वह राहगीरों के बीच में ओझल नहीं हो गया। 'क्या सचमुच यह कुछ-न-कुछ करके ही लौटेगा। क्या वास्तव में मेरी छोटी सी बात इसको लग गई, क्या मैंने...'

'गलती हो गई तुमसे!' गफ्फार भाई बोल पड़े। 'अब चलो वहीं खड़े होंगे, यहां रुकना भी ठीक नहीं है।'

हम दोनों नहर के किनारे-किनारे चल दिए।

गफ्फार की बातों का कुछ-कुछ विश्वास पड़ता जा रहा था यह लोग कितने निडर साहसी और बात के धनी होते हैं; कि बात की बात में कुछ भी कर उठाना, इनके बायें हाथ का ही खेल है। क्या इनमें परिवर्तन नहीं लाया जा सकता, जो यह अपने गुणों का सही रास्ते से प्रयोग कर सकें; क्या यह सामाजिक प्राणी नहीं हैं, क्या इनसे जो जन धन तथा एक मानसिक आतंक जो समाज में छाया रहता है, सही प्रयोग पर लाभ नही पहुंचा सकता। मैं कुछ और भी सोचता इसी बीच गफ्फार भाई बोल पड़े, 'वह जगह तो आ गई! आओ एक-एक बीड़ी पी जाय।'

मैंने जेब से बीड़ी का बण्डल और दियासलाई निकाल कर उनके हाथ पर रख दी।

'अगर इन लोगों से लाभ ही उठाया जा सकता बाबा, तो समाज इन्हें इतना निकृष्ट और हेय क्यों समझता, दूर रखने की कोशिश क्यों करता। सच तो मेरी समझ में कुछ और ही है।'

'वह क्या' बाबा ने कहा।

'समाज इन्हें हेय और निकृष्ट समझता है यह बात तो तुमने कह डाली, पर यह क्यों नहीं सोचा कि इनका सृजनकर्ता भी तो समाज ही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। वही समाज जिसे तुम अपना कहते हो, वही लोग जिन्हें तुम अपना कहते हो, और वही सब नियम-बन्धन-नीतियां जिन्हें तुम ठीक कहते हो, और उनकी सीमा में अपने को सीमित रखने के लिए तरह-तरह के आडम्वर-परिभाषाएं तथा नीतियां अपना कर अपराधों पर आवरण डाल देते हो। यह लोग भी समाज से ही ढकेल कर निकृष्ट तथा हेय बनाए गए हैं, क्यों कि उनके पास, अपने अपराधों को छिपाने की युक्तियां नहीं, आडम्बर नहीं, बनावटी परिभाषाएं नहीं। इन बातों की कमी ही तो है जो प्रतिक्रिया कर बैठती है, और यह अवसर भी हमीं प्रदान करते हैं। यह प्रतिक्रियाएं समाज द्वारा ही समाज के लिए होती हैं।

लगभग पच्चीस मिनट ही बीते होंगे, नए गंज की ओर से दौड़ती हुई तथा शोर करती हुई भीड़ दिखलाई पड़ी। 'दौड़ो, दौड़ो, पकड़ो., पकड़ो... बदमाश है…खूनी…पकड़ लेना जाने न पाए…'और देखते ही देखते वह भीड़ हमारे समाने से गुजर गई, आगे-आगे खून से भरा खँजर एक हाथ में और दूसरे हाथ में एक भरी हुई थैली लिए अक्कू था और पीछे-पीछे थी वही भयभीत भीड़, जिसमें शोर था, आवाजें थीं; बढ़ने दौड़ने का उत्साह था, किन्तु उन व्यक्तियों में से किसी एक में भी पकड़ने का साहस न था। सामने पड़ने वाले भी देखते ही एक बगल हो जाते थे। देखते ही देखते वह गलियों में ओझल हो गया।

धीरे-धीरे हम लोग भी उसी के पीछे हो लिए। गफ्फार भाई कहने लगे, 'देखा तुमने हम अपने वचन तथा काम में कितने पक्के हैं, तुम्हारी जरा सी बात ने किसी की जान ले डाली।'

'मेरा पहला अनुभव था, कहता भी तो क्या ?' संकोचित होते से मैंने कहा, 'मुझे ऐसा विश्वास न था गफ्फार भाई; भविष्य में मैं पूरा-पूरा ध्यान रक्खूंगा।' फिर मैंने पूछा, 'और क्या अक्कू का कुछ परिचय देने का भी कष्ट उठाओगे।'

'क्यों नहीं' गफ्फार ने तपाक से उत्तर दिया, और कहना आरम्भ कर दिया। 'अक्कू के मां बाप का कोई पता नहीं, पैदाइश अस्पताल की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है, तीसरे ही दिन उसकी मां अस्पताल छोड़ कर भाग गई थी। अस्पताल की एक छोटी सी नौकरानी ने उसे पाल पोस कर बड़ा किया था।

बचपन से ही यह निडर; बहादुर और मार खाने में पक्का का। एक बार उसने बताया था कि जब वह लगभग दस वर्ष का था पढ़ाई से भाग खड़ा हुआ। बात कुछ नहीं थी बस एक छोटी सी बात पर एक सहपाठी से झगड़ा हो गया था, अक्कू ने उसे चाकू मार दिया था।

एक आदमी ने उसे खाने कपड़े और दस रुपये महीने पर अपने यहां नौकर रख लिया। बेचारा, रात-दिन साहब-साहब करता तथा अथक परिश्रम, लेकिन आये दिन साहब जरा-जरा सी बात पर उसे मारने लगते, मारते समय वह यह बिल्कुल भूल जाते कि यह मासूम भी किसी की औलाद है। लेकिन उन्हें इन सब बातों से क्या है वह तो बेदर्द थे बेरहम, कसाई, उनकी आंखें तो तब खुलीं जब उस बच्चे के मस्तिष्क में प्रतिक्रिया हो गई। जब उसने यह महसूस कर लिया कि शक्ति ही मेरी रक्षा कर सकती है और एक दिन जब वह सो रहे थे, अक्कू ने उन पर भी एक भरपूर हाथ छुरे का साफ कर दिया।

वह पकड़ा गया। उसे सजा मिली। उसने वारदात की, और सज़ा के साथ-साथ उसे अपनी पाठशाला में पहुंचने का एक मौका भी मिला। फिर भला वह क्यों इन लोगों से दीनता दिखलाता या हाथ पसार कर पेट पालता। वह समझ चुका था जिस शक्ति को परिश्रम का रूप दे वह पेट पालती है, किसी नौकरी या गुलामी से तो अच्छा है कि वह अपनी शक्ति को उचित और पूरे फायदे के साथ क्यों न प्रयोग करे। शक्ति के बल से ही तो वह पीटते थे, अत्याचार करते थे, आदमी का नाजायज फायदा भी उठाते थे।

कहानी सुनकर मैं सन्न रह गया। मैंने जो समझा था गफ्फार एक चोर डकैत ही है। आदमी को इतनी गहराई से समझने का इसे अवसर ही कहां मिला होगा, लेकिन जो भी टूटा-फूटा चित्रण उसने अक्कू का किया, वही बहुत था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अक्कू जो थैली लाया था उसमें सत्ताइस सौ चांदी के रुपए थे, कुछ नोट भी थे, आश्चर्य तो इस बात का था कि मैं कठिनाई से उस बोझ को उठा सकता था, जिसे एक हाथ में लेकर वह भागा था। उसने बराबर के तीन हिस्से लगा दिए और बोला एक-एक उठा लो। मैंने कहा, 'पहले तुम अक्कू भाई ?' 'नहीं सबसे पहले तुम' इतना कहते हुए मेरी ओर देखकर अक्कू कुछ मुस्कराया।

मेरी नज़र उस छुरे की ओर गई जो एक ओर रक्खा हुआ चमक रहा था। मैं समझा वह भी मुस्कराकर कह रहा है मैं भी एक तुम्हारा साथी ही हूं जो मौके पर पूरा-पूरा साथ देता हैं, लेकिन मेरे लिए साहस चाहिए‥शक्ति चाहिए‥बोलो है तुम्हारे पास।

इतने में अक्कू फिर बोल पड़ा, उठाइए न‥देर कैसी‥

मैंने संकोचित होते हुए एक भाग उठा लिया।

तब उसने कपड़े पहनते हुए गफ्फार से कहा, 'मैंने अपना फर्ज पूरा कर दिया। गफ्फार भाई अब तुम खुशी-खुशी जा सकते हो।'

गफ्फार भाई ने निःसंकोच कहा, 'हो तुम वाकई बहादुर और निडर मुझे तो पूरा-पूरा विश्वास था, वह गलती इनसे हो ही गई, जो इतनी बात कह डाली।'

थोड़ा सा मुस्कराते हुए उसने उत्तर दिया, 'गलती कैसी गफ्फार भाई : जब तक जबान चलानी नहीं आयेगी, छुरा और गोली चलाना कैसे सीख पायेंगे अच्छा ही तो हुआ. चटपट फुर्सत मिल गई ! अच्छा अब चलना चाहिए ! तुम लोग कहां जाओगे।'

'सोचता हूं इलाहाबाद चला जाऊं !' गफ्फार भाई ने कहा !

'ठीक है ! और मैं भी चलूंगा, अभी यहां रुकना ठीक नहीं है !'

हम सब लोग वहां से स्टेशन की ओर तीन प्रथक्-प्रथक् रास्तों में विभक्त होकर चल दिए।

उत्तर से दक्षिण और पूरब से पश्चिम सारा का सारा उत्तर प्रदेश हमारे पैरों तले था। गफ्फार भाई के इष्ट मित्रों से मेरा सम्पर्क बढ़ता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ही गया, और कुछ ही दिनों में ऐसी स्थिति आ गई कि जहां भी गया कभी खाली हाथ लौटने का अवसर नहीं आया।

मेरी सारी आशाएं, अभिलाषाएँ हरे धानों में लहलहा उठीं, जीवन का, यौवन का जो भी सुख धन से प्राप्य था, मुझ से वंचित नहीं रह सका। मेरे पास पैसों की कमी न रहती; उन्हीं पैसों की जिनके लिए एक श्रमिक कठोर परिश्रम के बाद पेट पालने भर को उपार्जित कर पाता है, जिन्हें रोकने के लिए लोग अपनी बहुत सी आवश्यक अवश्यकताओं में काट छांट कर देते हैं; अपने व्यवहार और स्तर को गिरा लेते हैं, स्त्रियां अपने चरित्र बेच देती हैं, या पैसों से शरीर का सौदा कर लेती हैं, वह मेरे लिए प्रचुर थां पलक मारते ही हजारों के वारे न्यारे हो जाते हैं।

वही पैसा, जो एक ऐसी बला है, जिनके पास है, वह भी परेशान हैं जिसके पास नहीं है वह भी परेशान हैं; दोनों एक दूसरे से परेशान हैं। दोनों एक दूसरे के लिए परेशान हैं। एक के पास लालच होता है न जाने देने का, और दूसरे के पास लालच होता है पा लेने का! मजा तो यह है कि दोनों के बीच सम्बन्ध भी इसी के आधार पर निर्भर करते हैं। बनते भी हैं टूटते भी हैं। आदमी के लिए पैसा एक असाध्य रोग हो गया है जो उसे पनपनाते ही नहीं देख सकता और न इसके आकर्षण से आदमी बचना ही जानता है। मेरे विचार से पैसा केवल अपने लिए ही है, आदमी के लिए नहीं, और जब पैसा आदमी के लिए हो जाता है तो आदमी अपने लिए नहीं रहता, पैसे के लिए हो जाता है, बिक जाता है। मैं भी पैसों के लिए बिक गया।

लोग दूसरे के सामने हाथ फैलाते हैं, दीनता प्रगट करते हैं और हम अपनी शक्ति के बल बात की बात में छीन लाते। न किसी का भय, न कोई अंकुश, जहां हम जाते हमारा अपना शासन होता है, आतंक होता है। यह सब तो होता, लेकिन कुछ क्षणों के लिए, कुछ घन्टों के लिए, शेष समय के लिए हमें अपनी रक्षा के लिए इधर-उधर भटकना पड़ता, शासन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से, समाज से आंख चुरानी पड़ती। फिर भी खुश थे, क्योंकि निरंकुश थे, स्वच्छन्द !

निशाना मेरा बड़ा अच्छा था। यह बात भी सब जान गए थे कि मैं एक फौजी हूं, अतः बडे-बड़े सौदों में मेरा बुलावा आ जाता। एक वार हमें मेरठ जाना पड़ा। समय की बात विरोधी दल के पास भी हथियार थे। हम लोग भी कच्चे नहीं थे। जमकर मोर्चा हो गया। मैंने विपक्ष के दो आदमी मार दिए। उस समय तो यह जरा सी बात थी, जैसे शिकारी अपने शिकार को निर्भय हो मार लेता है, वैसे ही मैंने अपना शिकार कर डाला, और हम सब माल लेकर चले आए।'

'लेकिन आपके पास हथियार कौन से थे, उनका सामान आप लोग कैसे प्राप्त करते थे ?' विनय ने प्रश्न किया।

बाबा तनिक हंस कर बोले, 'मैंने कहा था बुराई समाज से ही शुरू होती है ! हथियार कुछ फौजी होते, कुछ समाज के लाइसेन्स दार महानुभावों से मांगे हुए। उनके सामान का प्रवन्ध कर्ता भी वही होते, और उन्हें भाग भी हम आधा देते; क्योंकि वह सुविधाएं हमें अन्यत्र उपलब्ध न हो पातीं, और वह अपनी प्रतिष्ठा और सम्मान के आवरण को उतार नहीं सकते; साथ ही केस हो जाने पर उनसे काम भी लिया जाता।'

'इससे तो यह स्पष्ट हुआ कि आपसे बड़े डाकू तो वे हैं, जो यह सुविधाएं देते हैं।'

'नहीं', बाबा हंस दिए 'डाकू तो हम लोग ही थे, जो उन सुविधाओं का पूरा-पूरा लाभ उठाते, और उनके सम्मान तथा उनकी प्रतिष्ठा की रक्षा करते।'

विनय ने गम्भीर होते हुए कहा, 'समझा आप अपने व्यावसायिक सिद्धांतों के अनुवन्ध को स्पष्ट नहीं करना चाहते।'

बाबा ने कहा,' यह बात नहीं, वह अनुबन्ध, तो अब सब समाप्त हो चुके हैं ! इन सब बातों को कह कर या इन पर कड़े से कड़ा शासन-नियम और बन्धन लगा कर भी रोका नहीं जा सकता।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'क्यों?' विनय के मुख से अनायास ही निकल गया।

बाबा ने तनिक गम्भीर होते हुए कहा, 'बुराई शासन, शक्ति या कानून से नहीं जाया करती! मेरे विचार से तो हर व्यक्ति को मनुष्यता के मौलिक सिद्धांतों का महत्व मालूम होना चाहिए, जो शिक्षा की सही प्रणाली से ही सम्भव हो सकता है! शासन शक्ति और कानून तो बाद की चीजें हैं।'

'अच्छा आगे कहिए क्या क्या हुआ' विनय ने विषय पर आते हुए कहा।

हम लोग उस शहर के धर्मशाले में वापस आ गए जहां चार दिनों से ठहरे हुए थे। पता नहीं पुलिस को सूचना कैसे मिल गई, और हम सब के सब पकड़े गए! हमारी बन्दूकें जो शहर बाहर हमने गाड़ दी थीं, पुलिस ने इस प्रकार हस्तगत कर लीं; जैसे उन्हीं की रखी हुई अमानत हो।

'फिर क्या था सभी सबूत एक साथ मिल गए, और हम लोगों को आजीवन कारवास का हुक्म सुना दिया गया।'

'आप लोग कुल कितने थे?' विनय ने प्रश्न किया।

डकैती के समय तो हम लोग कुल नौ आदमी थे, किन्तु चार आदमी मुकाम से ही मंगौती की दो बन्दूकें लेकर फूट गए थे, शेष के पांच हम पकड़े गए।' 'और माल' विनय ने पुनः प्रश्न किया।

माल का चौथाई भाग तो उन लोगों के साथ जा चुका था, शेष पकड़ा गया। अब जेल का हाल तो फिर सुनाऊंगा, पहले बताओ राजेश कहां हैं? क्योंकि कल कुमार यहां आए थे, मैं तुमसे बताना भूल गया, कहा तो उन्होंने कुछ नहीं, सिर्फ तुमको और राजेश को पूछा था, लेकिन उनके चेहरे से यह स्पष्ट था, कि राजेश कहीं भाग गया है।'

एक निःश्वास छोड़ते हुए विनय ने कहा, 'हां भाग गया है लेकिन गया कहां यह बात मुझे भी नहीं मालूम।'

'फिर तो उसने मनुष्यता के साथ खिलवाड़ किया है, अपनी योग्यता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

श्रौर शिक्षा का अपमान किया है।'

'निःसन्देह, उसने अपना विश्वास सब श्रोर से खो दिया !' विनय ने समर्थन किया !

बाबा ने बीड़ी मुंह से लगाते हुए कहा,' मेरी ही तरह वह भी भटक गय, विनय ! ऐसा व्यक्ति जो व्यावहारिक जीवन में, मनुष्यता के साथ ऐसा खिलवाड़ कर बैठे, वह कभी किसी को विश्वास दे ही नहीं सकता, वह उस योग्य नहीं रहा, उस पर किसी प्रकार का भरोसा करना भूल है !'

'लेकिन ऐसा होता क्यों है बाबा ?'

यही तो बात है जिसके लिए मनुष्य को अपने स्थान से गिरना पड़ता है। यही वह बात है जिसकी प्रतिक्रिया में सही से गलत रास्ते पर भटक जाता है, मेरे विचार से किसी श्रांतरिक अतृप्त लालसा की ही यह प्रतिक्रिया है !'

'यह लालसा क्या है बाबा, आकर्षण क्या है, जिसे हम समझ नहीं पाते।'

'मेरे विचार से यह सब अमूक है, अव्यक्त है, गहन है, मैं भी कभी-कभी इस उलझन में उलझ जाता हूं !'

'लेकिन ऐसा क्यों है' विनय ने पुनः जोर दिया जैसे कि अन्तर स्वंय इस बात को समझते हुए, कहने में अपने को विवश पा रहा हो।

आकंषण हमारी कितनी बड़ी कमजोरी है, हम कभी इस बात पर विचार नहीं कर पाते, मस्तिष्क में प्रलोभन देने का या हृदय में किसी लालसा को तृष्णा को बैठाने का श्रेय इसी को है। मनुष्य को स्वंय से दूर हटाने का मार्ग यही प्रशस्थ करता है। यदि आकर्षण न हो तो मानवीय प्रवृत्तियां कभी दानवीय प्रवृत्तियों की ओर मुंह न मोड़ें, और हमारी सभ्यता, में संस्कृति में चार चांद लग जाय ! वैसे तो हमारी सभ्यता भी आकर्षण के प्रभाव तथा भार से दबी जा रही है; लेकिन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कितना बोझ है इस आकर्षण का हमारे ऊपर, हम कभी विचार नहीं कर पाते, आखिर क्यों ?' विनय विस्मृत सा पूछ बैठा ।

यही एक जटिल प्रश्न है, जो तुम मुझसे नहीं अपने आप से कर रहे हो, तुम्हारे विचारों तक यह प्रश्न आता है ,किन्तु हल नहीं कर सकते मैं, तुम, या प्रत्येक अपने अन्तर के इन प्रश्नों के लिए अमूक हैं ! मूढ़ हैं। यह एक गहन तथा दूर तक छाये हुए अन्धकार में कहीं टिमटिमाते हुए दीपक के झिल-मिल प्रकाश की भांति जो दूर से देखने पर एक अन्तर्लीन होती हुई-सी आभा मात्र है । तुम देखो तो वह प्रकाशित है, तुम पास जाओ तो वह दूर है, न अन्धकार का अन्त होता है न उन झिलमिलाते प्रकाश का कोई अस्तित्व ही जान पड़ता है । तो बोलो क्या करोगे ?'

विनय बड़े ध्यान से सुनता हुआ उलझता जा रहा था, बोला,' तो वह आभा एक भ्रममात्र है । एक मृगतृष्णा जिसके लिए वह भटकता ही रहेगा जीवन भर; अंत और अनन्त तक ।'

'वह क्या सभी ऐसे ही भटकते रह जाते हैं ।' बाबा के मुंह से निकल गया !

विनय उन्हें देखता रह गया !

This library has horrible books

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२५
***

लगभग एक माह बाद राजेश वापस आ गया। उसकी स्थिति बड़ी ही शोचनीय थी पारिवारिक सदस्य, इष्टमित्र अथवा लोग जिन्हें इस घटना का ज्ञान था, उससे बात करना बिल्कुल पसन्द नहीं करते थे। मिला वह एक-एक बार सभी से लेकिन अपने को दूसरों की दृष्टि में उसने हेय तथा उपेक्षित पाया। उसे महसूस हुआ कि नैतिक तथा सामाजिक दृष्टि से यह एक बड़ा अपराध था। अन्त में वह विनय के पास पहुंचा।

विनय उस समय अकेला ऊपर कमरे में बैठा था, यह समाचार उसे बाबा से मिल गया, अतः वह धीरे-धीरे चढ़ता हुआ कमरे में पहुंच गया। संध्या को लगभग सात बजने को थे, विनय घूमने जाने की तैयारी में था राजेश को देखते ही व्यंग भरी मुस्कराहट के साथ बोला,' तो आप आ गए।' राजेश गम्भीर था: गम्भीर ही क्यों अपने अपराध तथा नैतिकता से कुचला हुआ मुरझाया हुआ, जैसे ग्रीष्म के असह्यताप से हरे भरे लहलहाते पौधे संध्या की नीरवता में मुरझाए से प्रतीत होते हैं। कान्ति हीन-सा बैठता हुआ वह बोला, 'हां मैं वापस आ गया।'

कुछ उपेक्षित रुख में विनय ने कहा, 'अब तुम्हारे लिए इस क्षेत्र में क्या शेष रह गया है!'

'वैसे मेरे लिए इस क्षेत्र में क्या शेष रहता। शादी मनुष्य के जीवन का सब से बड़ा अभिशाप है और मैं ऐसी गलती नहीं कर सकता।

'आप जैसे व्यक्तियों के लिए अभिशाप ही है तथा आप की दृष्टि में जो विवाहित हैं वह सब अभिशप्त होंगे।'

निःसंकोच राजेश ने उत्तर दिया, 'अवश्य! स्त्री तो क्षणिक आनन्द की, या यूं समझो वासना-तृप्ति की एक साधन मात्र है और इस युग

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में वह बहुत सस्ती है। उसे गले से बाँधकर रखना मूर्खता नहीं तो और क्या है।'

'राह पड़े कंकडों की तुलना तुम देवालय में स्थापित पत्थरों से कर रहे हो, दोनों एक होकर भी अपना-अपना पृथक स्थान रखते हैं। राह पर पड़े कंकर सदा ठुकराते और ठुकराये जाते हैं, जबकि देवालय के पत्थरों पर बड़े बड़े शीश झुक जाते हैं। तुम जैसे व्यक्तियों के लिए तुम जैसी स्त्रियां ही सस्ती हो सकती हैं। स्त्री नहीं! तुम्हारी दृष्टि में तो वह सब मूर्ख थे, जिनके प्रतिरूप तुम और हम यह सोचने की धृष्टता कर रहे हैं।' विनय ने उत्तर देते हुए कटु व्यंग किया। बातें तीर-सी उसके हृदय को भेद गईं, फिर भी उसने शोख होते हुए उत्तर दिया, 'मैं यह तो नहीं कहता, मेरा आशय तो केवल व्यक्तिगत है। वह भी अपने आप से, जैसा कि मैं चाहता हूं। जब मैं स्त्री गले से नहीं बाँधना चाहता तो यह लोग मुझे मजबूर करने वाले होते कौन हैं? यदि तुमसे पूछा जाए कि तुम अपने विवाहित जीवन से इस स्त्री से जिस की महिमा बखान कर रहे हो, सन्तुष्ट हो, सुखी हो, तो क्या उत्तर दोगे?'

राजेश के प्रत्याक्षेप से विनय भीतर ही भीतर तिलमिला उठा, लेकिन चुप रहा। राजेश जानता था कि अपने बेमेल विवाह से विनय भी अतृप्त है। संतृप्त है। किन्तु उस सीमा का उल्लंघन नहीं कर सकता, जिसे तोड़ कर राजेश बाहर खड़ा हो गया है। राजेश ने आगे कहा, 'मेरे दोस्त प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना दृष्टिकोण होता है; मैंने अपने दृष्टिकोण से ही यह सब किया है, तुम से मैंने कभी कहा था, विनय! शादी मत करना और यदि करना भी तो अभी नहीं, लेकिन तुमने कहा कुछ नहीं माना, तुमने जिन्हें अपना समझा, आदर सम्मान दिया, उसी अपनत्व ने तुम्हारी गर्दन पर अपनी पैनी छुरी फेर दी! तुम्हारे जीवन को नष्ट कर दिया, तुम्हें कहीं का न रखा; तुम एक पिंजड़े के पंछी हो कितना भी फड़फड़ाओ बाहर नहीं आ सकते, और यदि बाहर भागना चाहो तो क्या मनुष्यता कर सकते हो। मैंने कोई अपराध नहीं किया। अपनी सुरक्षा करना हमारा कर्तव्य है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय फिर भी चुप रहा राजेश बोलता ही गया।

ग्रौर सुनो, तुम्हें पाल-पोस कर पढ़ा-लिखाकर जिन लोगों ने ग्रपना कहा, उन्हीं लोगों ने तुम्हें बेच कर ग्रपनी रकम वसूल कर ली ग्रब तुम बेकार हो, तभी तुम्हें छोड़ दिया गया। तुम्हारा कोई साथ नहीं देता मैं भी ग्रब बेकार ही हो गया। खोटा सिक्का हो गया। ग्रपराधी मैं नहीं वह हैं जो ग्रादमी को, ग्रपने कर्तव्यों को बेच कर ग्रादमी होने का दावा करते हैं।

मुझे नहीं चाहिए धन, जयदाद ग्रौर ग्रपनों का प्यार, मेरा पुरुषार्थ मुझे देगा, समझे; मेरे लिए मेरा जीवन शेष है; मेरी स्वतंत्रा शेष है, मैं मुक्त हूं, सामाजिक परम्पराग्रों से, ग्रपनों से तथा सर पर लाये जाने वाले उस भार से, जिससे तुम दबे जा रहे हो। सोचा था कुछ मित्र शेष रह जायेंगे, कम से कम तुम, जिसके सामने मैंने ग्रपना हृदय खोल दिया था, लेकिन तुमने भी परोक्ष में जो भी किया ऐसी ग्राशा नहीं थी।

'क्या मतलब ? विनय पूछ बैठा।

'यह तो तुम्हारा दिल ही जानता है। ग्रब मैं कुछ नहीं कहना चाहता, लेकिन तुम पर जैसा विश्वास किया तुम न निकले।'

'विश्वास नाम का कोई शब्द भी है तुम्हारे हृदय में,' विनय ने पुन: व्यंग किया।

'खैर जो भी समझो, ग्रब सब ठीक ही है। फिर भी मैं चाहूंगा मेरी ग्रौर तुम्हारी बात मेरे ग्रौर तुम्हारे तक ही सीमित रहे। ग्रच्छा ग्रब चलता हूं, रुपए तुम्हारे ग्रा जायेंगे', इतना कहते हुए राजेश उठ खड़ा हुग्रा। सीढ़ियों की ग्रोर मुड़ता हुग्रा बोला, 'ग्राशा है मेरे लिए ग्रब तुम्हें कोई शिकायत न रहेगी।'

कुछ व्यंग भरी मुस्कराहट के साथ विनय ने कहा, 'ग्रब गुन्जाइश भी कहां रही।'

तीर बहुत ही ठिकाने से लगा लेकिन राजेश ने उससे उठने वाली

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पीड़ा को वाहर नहीं आने दिया, और बोल पड़ा, 'ठीक ही सोचा तुमने'

वह तुरन्त सीढ़ियों से उतरता हुआ सड़क पर जा पहुंचा; विनय मूर्तिवत खड़ा देखता रह गया।

बाबा यह सब पड़े-पड़े देख रहे थे। उन्होंने उठकर बैठते हुए विनय को पुकारा. 'विनय !'

विनय धीरे-धीरे उतरता हुआ बाबा के पास आ गया।

'क्या बातें हुई ?' बाबा ने पूछा।

'उसके पास कोई बात न थी करता क्या, हाँ इतना संकेत अवश्य दिया कि उसे सम्पत्ति के अधिकारों से वंचित कर दिया गया है।'

'यह तो उसे पहले से ही मालूम होगा।'

'लेकिन तब सम्भावना थी, अब स्पष्ट हो गया।'

'फिर तो वह एक जटिल परिस्थिति में पड़ गया।'

'परिस्थिति कैसी बाबा ! आदमी है, हृष्ट-पुष्ट, सुन्दर, पढ़ा-लिखा उसे भी अपने पुरुषार्थ और बुद्धि प्रयोग का अवसर मिला।'

'यदि वह मेरी ही तरह उसका प्रयोग गलत कर बैठा तो ?'

'तो क्या, फल का अनुभव भी उसे है, मैंने आपके जीवन की झलकियां उसे सुना रक्खी हैं।'

'नहीं इससे काम नहीं चलेगा, इस समय उसे सान्त्वना चाहिए, सहानुभूति चाहिए, अपनत्व चाहिए, उसे वह सब चाहिए जिन्हें उसने ठुकरा दिया है, क्यों कि यही अवसर है, जहाँ मनुष्य अपने विवेक, अपनी बुद्धि का सही प्रयोग करने में चूक जाता है, तुम उसे सहयोग नहीं कर सकते क्या ?' बाबा ने अपने विचार स्पष्ट करते हुए प्रश्न किया।

'सोचा तो मैंने भी यही था, लेकिन इसका प्रभाव उस पर कुछ पड़ेगा भी या नहीं, क्यों कि वह सुनाना चाहता है सुनना नहीं चाहता।'

'इस समय तो वह कुछ भी नहीं महसूस करेगा, मनुष्य की यह भी एक कमजोरी ही है वह गलती करके कभी-कभी धृष्ट हो जाता है और अपने स्वाभिमान के लिए, अपनी बात को ही प्रत्येक दशा में पुष्ट करना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चाहता है। भले ही उसे उसके बचाव में और कितनी ही गलतियां क्यों न करनी पड़ें। लेकिन उसके मस्तिष्क में प्रतिक्रिया जब कभी जागती है तो निश्चय ही उसे एक दिन प्रायश्चित करना पड़ता है।' बाबा ने विनय के सामने अपने विचार स्पष्ट करते हुए राजेश के प्रति सहानुभूति प्रगट की।

'बाबा प्रायश्चित तो वह करता है जिसे अपनी भूल का ज्ञान हो, उसने अपनी समझ में कोई भूल नहीं की फिर प्रायश्चित कैसा ?'

'नहीं विनय, अहम भाव में डूबे व्यक्ति भी एक न एक दिन प्रायश्चित अवश्य करते हैं, भले ही वह उसे व्यक्त कर सके या न कर सके। तुम उन मानवीय मानसिक प्रतिक्रियाओं का दम नहीं घोंट सकते जो स्वाभाविक हैं, और रहेंगी, यदि अहम के बाद भी मनुष्य अपनी भूल स्वीकार कर सके तो वह मनुष्य नहीं देवता है। भूलों तथा कमजोरियों से तो मनुष्य का सारा जीवन भरा पड़ा है, मेरे विचार से तो जीवन में वही सफल है जो उन्हें संवारता जाय।' बाबा ने पुनः अपनी बात का ही पुष्टीकरण किया।

एक दीर्घ निःश्वास के साथ उठता हुआ विनय बोल पड़ा, 'बात तो ठीक है पर राजेश के भविष्य में क्या है, राम जाने' इतना कहते हुए वह ऊपर वापस चल दिया।

बाबा भी अपनी बीड़ी का कश लेने लगे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२६

***

हम जिस तरह पिंजरे में बन्द पंछी से चहकने का आनन्द पाना चाहते हैं। और इसी दृष्टिकोण से उसे बन्दी बनाते हैं; लेकिन नया पंछी फड़फड़ाता है, व्याकुल रहता है अपनी स्वच्छन्दता के लिए, गगन में निस्सीम उड़ानों के लिए, वैसे ही मैं था एक नया पंछी, एक नया बन्दी।

जब मैं देश भक्त के रूप में जेल गया था तब बहुत सी सुविधाएं प्राप्त थीं, लेकिन जब मैं कानून की निगाहों में बन्दी बन कर पहुंचा तो वे सारी सुविधाएँ छिन गईं। मैं एक संगीन मामले का बन्दी था, मेरे लिए चारों ओर से असुविधाएँ थीं, परेशानियां थीं, कष्ट थे।

मैं एक सप्ताह में ही व्याकुल हो उठा, और अनुभव करने लगा कि ऐसे जीवन से तो मृत्यु हजार गुना अच्छी है। लेकिन वहां मरने का भी कोई साधन नहीं था उपाय नहीं था, या यूं कह दूं कि मुझमें साहस नहीं था। क्योंकि एक दिन ऐसी अनोखी घटना घटी जिससे मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि मरना भी उतना आसान नहीं जितना लोग भावावेश में बक जाते हैं। मेरी समझ में तो जीना जितना कठिन है मरना उससे भी ज्यादा कठिन है। मरने की भावना ही कितनी भंयकर और दिल दहलाने वाली होती है। इसलिए हमें जीना पड़ता है मृत्यु के भय से, मोह से, आकर्षण से और सुख की आशा से।

'वह घटना क्या थी बाबा?' विनय ने प्रश्न किया।

बाबा ने उत्तर देते हुए कहा, 'मेरी ही तरह एक व्यक्ति और था झींगा, वह सुबह से शाम तक बकता रहता, 'एक दिन सब को न फसा दूं तो मेरा नाम झींगा नहीं, यह साले जानवर से भी गया बीता समझते हैं हम लोगों को, तुम लोग सोचते क्यों नहीं, हमने तो इनसे बहुत छोटा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जुर्म किया है सिर्फ दो ही आदमी तो मारे थे, जिसकी सजा है आजीवन कारावास, और यह दो दो टके के गुलाम जो रोज एक आध हत्या करते हैं इन्हें कोई सजा नहीं, हराम का खा-खा कर दिन-रात दूने होते जाते हैं, भला यह भी कोई न्याय है, तुम सब गवाही देना झींगा ने इनके अत्याचारों से ऊब कर ही आत्मा हत्या की है।'

लेकिन किसी को उसकी बातों पर विश्वास न होता, एक दिन प्रात: आठ बजे होंगे, उस दिन जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट आने वाले थे। झींगा का एक ज़मादार से झगड़ा हो गया। उसने उसे उठा कर दे मारा और इतना मारा कि उसके मुँह से खून बहने लगा, जब तक और वार्डर दौड़े झींगा भाग खड़ा हुआ, लेकिन जाता तो कहां, जेल के बीच में एक लम्बा सा पीपल का पेड़ था, वह उसी पर दौड़ कर चढ़ गया। बहुत से वन्दी जमा हो गए, अफसर जमा हो गए, लेकिन वह चढ़ता ही गया। तब तक सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब भी आ गए। उन्होंने सहानुभूति प्रगट की, झींगा तुम उतर आओ हम तुम्हें माफ कर देगें। उसने अपने लहजे में फटकारते हुए कहा, 'तू क्या माफ करेगा, तेरे पास सजा देने या माफ करने की ताकत कहां है, जफर के बच्चे!' इसके बाद उसने सब से चिल्ला कर कहा, देखना भाइयों, यह लोग मुझे पकड़ना चाहते हैं सजा देने के लिए लेकिन मैं इनकी दी हुई उम्रकैद से भी छुटकारा पाने जा रहा हूं। जेलर के बच्चे आंखों से देख ले, जफर साहब अपनी डाक्टरी जेब में रख लो; मैं मरने जा रहा हूं, फिर न कहना खबर नहीं हुई। देखो भाइयों इन सालों के अत्याचारों से ऊब कर आत्महत्या करने जा रहा हूं, तुम सब गवाही देना। रोक लो मेरी मौत को, है किसी में दम।' इतना कहते हुए वह ऊपर ही चढ़ता गया, अब वह पेड़ की चोटी पर पहुंच चुका था, वहां खड़े हो कर उसने चारों ओर देखा और फिर बोला, 'अच्छा भाइयो अब मैं चलता हूं, सब से मेरी राम-राम'''जफर साहब, जेलर साहब और टुकड़ खोर गुलामो तुम सब को भी राम-राम!' इतना कहते हुए उसने एक जोर की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

छलांग मारी, सब देखते ही रह गए, मिनट भर में उसके कंचन से शरीर के छिछड़े-छिछड़े बन गए, वह सारी भीड़ को पार करता हुआ, पेड़ से लगभग पन्द्रह फीट दूर गिरा।

फिर क्या था छोटे बड़े सभी कर्मचारियों की आफत आ गई। जफर साहब बड़े ही कठोर हृदय के व्यक्ति थे, बन्दी उनकी दृष्टि में एक पशु से भी गया बीता जीव था लेकिन इस घटना ने उनकी आंखों से पर्दा खींच लिया। उन्होंने अनुभव किया बन्दी भी इन्सान है, उसके पास भी हम जैसी विचार शक्ति है, बन्दी हो जाना तो परिस्थिति का कुचक्र मात्र है। मैं भी गुनाह कर सकता हूं।

लेकिन वह अपने मनोभावों को किसी से व्यक्त नहीं कर सके; उनका उतरा हुआ चेहरा, झुकी हुई आंखें और मूकता मेरे विचार से इसी का प्रमाण थी।

एक दिन मेरा भी सामना हो गया। मुझे एकान्त दिया गया था, यह सूचना उन तक पहुंची कि मैं भी हठी हूं। वह मुझे देखने आए और कड़े शब्दों में पूछा, 'अभी गर्मी-ठण्डी नहीं पड़ी ?'

मैंने सहज भाव तथा संयत स्वर में उत्तर देते हुए कहा, 'मेरी क्या वह तो एक दिन सब की ठण्डी पड़ जाती है।'

'बड़े गुस्ताख मालूम देते हो' उनका स्वर पूर्ववत कुछ गिर गया।

'अगर सच बोलना भी गुस्ताखी है तो इसके लिए शुक्रिया !'

इतना सुनते ही उन्होंने मेरे ऊपर आँखें गड़ा दीं, जैसे कि मेरी बात उनके दिल की किसी नर्म जगह पर चुभ सी गई हो। वह कुछ न बोले और चले गए। उनके जाने पर वार्डर ने कहा, 'अब तुम्हारी खैर नहीं'।

मैंने हंस कर उससे कह दिया, 'खैर ही होती तो यहां आने की नौबत ही क्यों आती।'

लेकिन दूसरे दिन मुझे अस्पताल भेज दिया गया। तब मैं समझा कि उनसे कुछ हमदर्दी मिल गई। उन दिनों जेल का बड़ा डाक्टर ही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुपरिन्टेन्डेन्ट होता था। अस्पताल पहुंचने पर मैं उनके कमरे में पेश किया गया, तब उन्होंने पूछा, क्या तुम मुझे अपना सही-सही परिचय दोगे ?'

'वह तो आपके रजिस्टर में दर्ज होगा' मेरा उत्तर था ।

'अजीब इन्सान हो तुम्हें जरा भी खौफ नहीं ?'

'मैं आपका मकसद समझ रहा हूं साहब: दरअसल बात यह है कि जुर्म मैंने किया है सजा भी मैं भोग रहा हूं, इसलिए मेरा जो परिचय आपके रजिस्टर में दर्ज है वही काफी है। आगे मैं खामोश रहना चाहता हूं।' मैंने संयत स्वर में गम्भीरता के साथ उत्तर दे दिया।

गम्भीर स्वर में उन्होंने कहा 'तुम जा सकते हो।'

जब मैं चलने लगा तब वह फिर बोले, 'देखो ख्याल रहे, तुम अस्पताल में हो, बीमार हो, इसलिए कोई नई हिमाकत न कर बैठना।'

'मैंने अपनी खुदाई मेहरबानी महसूस कर ली है साहब; यकीन कीजिए शिकायत का मौका न मिलेगा' मैंने कुछ नम्रता के साथ उत्तर दिया। मानो वह मेरी बात सुन कर मन ही मन खुश हो गए हों।

मैं चला आया। जफर साहब की हमदर्दी और मेहरबानी ने मेरे जीवन में एक परिवर्तन ला दिया। वह ज्यादातर मुझे अस्पताल में ही रखने लगे। पता नहीं मुझे रोग क्या था, लेकिन जब कोई पूछता तो कहना ही पड़ता, कुछ तबियत भारी रहती है, बुखार सा मालूम पड़ता है।

इन सब बातों के अतिरिक्त वह सप्ताह में एक बार मुझसे अवश्य मिलते। उनके स्वर का रुखापन, कहां खो गया था कह नहीं सकता, किन्तु गम्भीरता पूर्ववत् वैसी ही थी। उनके प्रश्न भी बड़े गम्भीर तथा वास्तविकता से सने होते। एक दिन उन्होंने पूछा, 'आदमी गुनाह क्यों करता है ?'

मैंने उत्तर दिया, 'इस बात को आदमी महसूस नहीं कर पाता; और अगर महसूस कर सके तो गुनाह न कर पाये, और फिर हुजूर तो जानते ही हैं।' वह कुछ चिढ़ कर बोले, 'देखो आयन्दा यह लफ्ज अपनी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जबान पर मत लाना, फिर कुछ रुक कर बोले, 'मैं तुम्हें अपना छोटा भाई समझता हूं ।'

यह सुनते ही मैं स्तब्ध रह गया। मेरे नेत्र आर्द्र हो गए और कुछ क्षणों को मैंने अनुभव किया जैसे बड़े भाई साहब ही मेरे सामने बैठे हों मेरा कण्ठ कुछ भर आया, 'इस काबिल आप मुझ जेसे एक अदना इन्सान को कैसे समझ बैठे ।'

वह बोले, 'तुम्हें सजा किसी गलती की मिली है, अब मुझे यकीन हो गया कि तुम वैसी गलती नहीं दोहराओगे। मैंने यह भी समझ लिया है कि तुम्हारा ताल्लुक किसी अच्छे खानदान से है। जिसे तुम बताना नहीं चाहते और एक खास बात यह भी है तुमने अपनी गलती भी महसूस कर ली है, भटके जरूर हो लेकिन सही इन्सान हो, भटक जाना मैं बड़ा गुनाह नहीं मानता, क्यों कि जिन्दगी में तमाम ऐसे वाकियात या मौके आ ही जाते हैं जहां इन्सान भटक जाया करता है, हाँ बार-बार एक ही बात को दोहराने को मैं दिमागी कमजोरी कह सकता हूं यह वह हालत है, जब इन्सान अपने आपको, अपनी अहमियत को भूल जाता है, मैं उसे गुनहगार समझ सकता हूं, क्या तुम इस सजा से छुटकारा पाने के बाद, अपना पिछला इरादा ही रखते हो ।'

मैंने उत्तर दिया, 'इरादा तो पहले भी ऐसा नहीं था, सिर्फ पेट की जरूरत थी और यह महसूस कर लेने के बाद जमाना आदमी को ताकत से जिन्दा रहने देना चाहता है, मैंने भी अपनी ताकत का इस्तेमाल किया इस लिए मैं आपको यकीन तो नहीं दे सकता, संभव है मुझे फिर वही करना पड़े ।'

उन्होंने कुछ गुस्से के रुख में ताड़ना देते हुए कहा, 'अगर ताकत को सही मानते हो तो इसका सही इस्तेमाल करना भी सीखो, ऐसी ताकत जो तुम्हें इत्सान की तरह जिन्दा रख सके, लेकिन तुम इसका जैसा इस्तेमाल करते हो या इरादा रखते हो, इसमें जिन्दगी एक भेड़िए के मानिन्द है और मौत किसी खाज से पीड़ित कुत्ते जैसी, एक ओर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चोरी का शिकार दूसरी ओर तड़प-तड़प कर मौत।'

मैं चुप था, कुछ देर रुक कर वह फिर बोले, 'मैं अपना इन्सानी फर्ज पूरा किए देता हूं, आगे तुम्हारी मर्जी। लेकिन एक भाई के नाते उम्मीद करूंगा कि तुम दोबारा यहां न आओगे।'

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। मेरे मस्तिष्क में जो कोहरा छाया हुआ था जफर साहब की बातें प्रातःकालीन सूर्य की आग-सी उभर कर उसे नष्ट करने सी लगी। मैं बीमार था नहीं, पर धीरे-धीरे बीमारों से भी गया बीता हो गया। सचमुच कभी-कभी शक्ति से सहानुभूति ज्यादा ताकतवर सावित हो जाती है।

क्या यह सच नहीं, कि आदमी के वह विचार जो सत्य पर आधारित होते हैं, उनका प्रभाव भी उतना ही गहरा पड़ता है, जो अपने आप किसी तीक्षण तीर से अन्तस्थल में पैठ जाते हैं। मेरे नौ वर्ष धीरे-धीरे पूरे हो चले थे। जफर साहब ने मुझे टी बी का मरीज बना दिया था, अतः मैं साढ़े नौ वर्ष पूरे होते-होते जेल से निकाल दिया गया।

यह चित्रण मैंने संक्षेप में ही किया है, वैसे वहां के कर्मचारियों के बर्ताव से, तथा अत्याचारों से, वहां की दीवालें भी कांपती हैं, फिर आदमी की क्या बात है। वह आदमी की सजा का वह स्वरूप सामने ला देते हैं, जिससे उसका हृदय तथा मस्तिष्क मनुष्यता से शून्य हो जाता है। वह अत्याचार अनाचार, बर्बरता से सीखता भी वही है, और स्वतन्त्र होने पर उसी की प्रतिक्रिया उसके पास शेष रह जाती है। यही कारण है जेल इन प्रतिक्रियाओं को सुदृढ़ करने में एक अच्छी पाठशाला बन जाती है।

'हां एक बात और कहना चाहता हूं, तीन चार दिन से तबियत बहुत खराब चल रही है।'

'कष्ट क्या रहता है?' विनय ने पूछा।

'जिस कष्ट ने जेल से छुटकारा दिलाया था, वही खांसी और बुखार,' कहते हुए बाबा को जोर की खांसी आ गई, जैसे उन्होंने बड़ी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देर से उसे रोक रखा हो, और थूकने पर रक्त के छींटे चमक उठे।

'आपको तो अस्पताल में भर्ती होना चाहिए।' विनय ने सलाह दी।

बाबा ने जरा दम लेते हुए कहा, 'जैसा तुम ठीक समझो, मरने से नहीं डरता, हां, कष्ट अगर कम हो सके तो ठीक रहेगा।'

'अच्छा मैं दो एक दिन में प्रबन्ध किए देता हूं' कहते हुए विनय उठ खड़ा हुआ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२७

***

जो व्यक्ति उपार्जन नहीं कर पाते, वे समाज में, परिवार में, उपेक्षित दृष्टि से देखे जाते हैं। लोगों का अभिप्राय केवल उपार्जन से ही होता है, उसके लिए कितना भी परिश्रम अथवा अध्यवसाय किया जाय, जब तक सफलता नहीं मिलती, लोग उसकी परिस्थितियों को महत्व न देते हुए, उसे निकम्मा समझ बैठते हैं।

विनय को कहीं नौकरी नहीं मिल रही थी। दिन प्रतिदिन परिस्थितियों का कुचक्र उसके मानसिक सन्तुलन पर आघात करता जाता। यद्यपि उसने धैर्य नहीं खोया था, न जीवन की जटिल से जटिल प्रतिकूल परिस्थितियों से भयभीत ही था, लेकिन उसके सहयोगी बहुत कम थे, कम क्यों, थे ही नहीं, और जो थे भी उनके पास काल्पनिक सहानुभूति के सिवा कुछ न था।

यहां तक कि पत्नी के हृदय में भी निराशा की लकीर गहरी पड़ती जा रही थी। वह धनी परिवार की, लाड़ प्यार में पली एक कर्कशा स्त्री थी अतः यदाकदा वह कठोर से कठोर शब्दों का प्रयोग बिना सोचे समझे या शील संकोच के कर बैठती। भीतर से विनय तड़प उठता, लेकिन उसे चुप ही रहना पड़ता। सहअस्तित्व और सहानुभूति का जो सत्य तथा प्रभावपूर्ण सदव्यवहार पुरुष को अपनी पत्नी दे सकती है और कोई नहीं दे सकता, लेकिन इतनी समझ उसमें थी कहां? राजेश के साथ भी गांठ पड़ चुकी थी। बाबा अस्पताल में पड़े थे, उनकी दशा सुधर नहीं रही थी। जिस चिकित्सालय में वह भर्ती थे, वहां से टी. बी. घोषित कर उन्हें डिसचार्ज कर दिया गया। बड़ी दौड़ धूप के बाद विनय चौबीस घन्टे की मोहलत ले पाया ताकि उन्हें टी. बी.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अस्पताल में भर्ती करा सके।

बाबा के एक भतीजे चिकित्सा विभाग के मुख्य कार्यालय में काम करते थे, वह उनके पास गया, क्यों कि वह आकर यह कार्य बड़ी सुविधा के साथ कर सकते थे। लेकिन विनय को उन्होंने टका सा जवाब देते हुए कहा, 'मेरे पास न इतना समय है न पैसा, जो मैं सब के लिए दौड़ा फिरूं' लेकिन फिर कुछ सोच कर बोले 'एक पत्र दिलाये देता हूं तुम लेकर बड़े डाक्टर के पास चले जाना भर्ती हो जायेंगे।'

वह पत्र लेकर चला आया।

बाबा को टी. बी. अस्पताल में इस शर्त पर जगह मिल गई कि पन्द्रवें दिन वहां से अवश्य चले जायेंगे। विनय को यह शर्त माननी पड़ी, क्योंकि दूसरा कोई चारा न था। टी. बी. अस्पताल घर से लगभग छः मील दूर था। बाबा भली भांति जानते थे कि विनय के लिए, प्रतिदिन इतनी दूर पहुंचना कठिन है इसलिए उन्होंने कहा, 'बस बीड़ी माचिस का प्रबन्ध कर देना, और दूसरे चौथे जब समय मिल सके आते रहना : मैं अब सुख पूर्वक मृत्यु को गले लगा सकूंगा।'

विनय ने सान्त्वना दी, 'ऐसी तो अभी कोई बात नहीं है, आप निराश न हों कोई साथ दे या न दे, मुझ से जो भी और जहां तक हो सकेगा, मैं पीछे न हटूंगा।'

'तुमने अब तक जो किया वही क्या कम है, तुमसे आशा अवश्य थी लेकिन विश्वास नहीं था, मैं समझता हूं तुमने अपनत्व के साथ मनुष्यता की रक्षा की है, क्यों कि तुम्हारे लिए तो मैं अपना होते हुए भी पराया था।' कहते हुए बाबा के नेत्र सजग हो गए।

विनय ने ढाडस देते कहा, 'ऐसा क्यों सोचते हैं, आप दुःख न कीजिए, आदमी के लिए आदमी कभी पराया नहीं होता, फिर आप तो हमारे अपने ही हैं!'

गम्भीर होते हुए बाबा ने उत्तर दिया, 'हां, बेटा, आदमी के लिए आदमी वास्तव में पराया नहीं होता, लेकिन हम इतने स्वार्थी हो गए

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हैं पतित हो गए हैं कि हर समय हमारे मस्तिष्क में अपने पराए का प्रश्न बना ही रहता है। फिर मैं तो कानून की दृष्टि में अपने भाई भतीजों के लिए कब का मर चुका हूं, मैंने उनके लिए किया भी क्या है। हां मुंह देखा अपनत्व अभी शेष है वह भी मेरे अधिकारों की मांग के भय से, लेकिन मेरे पास अब शक्ति ही कहां जो लड़ सकूं।'

साश्चर्य विनय ने पूछा, 'कानून की दृष्टि में कैसे बाबा?

एक निःश्वास छोड़ते हुए बाबा ने कहा, 'जब मैं जेज में था, मैंने घर को न तो पत्र ही दिया, न अपना सही पता ठिकाना ही वहां लिखाया था। फिर भी मेरे जीवित होने का समाचार मझले भाई साहब को मिल चुका था, जो मैंने एक कैदी से जबानी भेज दिया था। लेकिन मेरा समाचार भाई साहब को वरदान साबित हुआ और जायदाद बेचते समय उन्होंने तथा तुम्हारे पिता ने, हलफनामा दाखिल कर मुझे मरा साबित कर दिया। मुझे मालूम तो हो गया लेकिन मैं चुप रहा।

'चुप क्यों रहे आप?'

केवल इसलिए कि मैं वास्तव में अपने परिवार के लिए मर ही चुका था। मैं गिरा, पतित हुआ, लेकिन समाज की दृष्टि में अपने को गिरा हुआ तथा पतित साबित नहीं करना चाहता था, मैं अपनी बुराई को अपने साथ सीमित रखना चाहता था; मेरा नाम पता जेल के रजिस्टरों में गलत दर्ज था अतः मैं कुछ भी आपत्ति नहीं प्रगटा सका: लेकिन अब यदि शक्ति आई तो अवश्य लड़ूंगा।'

'अब ऐसा आप क्यों सोचते हैं?' विनय ने फिर प्रश्न किया।

'इसलिए कि मैंने सदा यह ध्यान रक्खा कि मैं आदमी हूं, और उसे, अपने अस्तित्व को, महत्व को बनाए रखना चाहिए! लेकिन जब उसके महत्व पर, अस्तित्व पर, अधिकारों पर आघात हो तो उसे कभी चुप नहीं रहना चाहिए; उस समय लड़ना, प्रति आघात करना ही उसका कर्तव्य हो जाता है। अपने सिद्धान्तों के लिए लड़ना ही, अपने महत्व और स्वाभिमान की रक्षा करना है। लेकिन यह सब शक्ति के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बिना संम्भव नहीं। ऐसे अवसरों के लिए शक्ति संजोना भी एक बड़ी बुद्धिमानी है। लेकिन तुम यह बात अपने तक ही सीमित रखना।'

विनय चुप था! पतित व्यक्ति भी अपने में कुछ ऐसे गुण रख सकता है, जो हजारों दुर्गुणों के बाद भी उसे मनुष्य होने का पूरा अधिकार देते हैं। बाबा ने आगे कहा, 'कुछ दिनों की और बात है, फिर तो मर ही जाऊँगा।'

'आप इतना अधीर क्यों होते हैं? मैंने कहा न अभी तो ऐसी कोई बात नहीं है!' विनय ने पुनः ढाडस बंधाया।

'मैं अधीर नहीं होता विनय!' कहते हुए बाबा आगे बोले, 'जिसमें जितना धैर्य होगा, विपरीत परिस्थितियों में लड़ने का साहस भी उतना ही होगा। तुम मेरी ओर से निश्चिन्त रहना; मैं सदा आग से खेलता रहा हूं; कांटों पर ही चलता रहा हूं; यह कष्ट और मृत्यु लेशमात्र भी विचलित नहीं कर सकते, यदि वह निश्चित है तो मैं निश्चिन्त हूं। अच्छा अब तुम जाओ, देर हो रही है।' कहते हुए बाबा की मुखाकृति पर आत्मविश्वास के भाव उभर आए।

विनय चल दिया। बाबा के अतीत की गतिविधियां उसके मस्तिष्क में आदि से अब तक चक्कर काटने लगीं। यह वही व्यक्ति है, जिसने स्वयं मृत्यु की चौखट खटखटाई है, अभी नहीं पहले भी कई बार, लेकिन मृत्यु सदा दूर रही, किन्तु आज मृत्यु उसके चौखट पर खड़ी है। वह सोचती होगी कदाचित यह उससे सशंकित होगा, भयभीत होगा, जीवन के मोह में फंसा होगा। संसार के आकर्षण में भ्रमित होगा। लेकिन नहीं वह आज भी उसी तरह ललकार रहा है: चुनौती दे रहा है जैसे कोई वीर सेनानी अपने शत्रु को ललकारता हो, मानो वह मौत से कह रहा हो, आओ मेरे पास आओ, मैं आज भी तुम्हारा स्वागत करूंगा, तुम्हें गले से लगाऊंगा, और तुमसे रो रोकर कहूंगा, मैं जीवन में सदा अकेला ही रहा, जब भी तुम्हारे प्रांगण में गया तुमने भी दुतकार ही दिया; क्योंकि तब मेरे पास शक्ति थी, उत्साह था, साहस था। संम्भव है तुम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भी शक्ति की उपासक हो, उत्साह की अनुगामिनी हो, साहस की चेरी हो। आज मैं अशक्त हूं, बलहीन, धनहीन, जनहीन, अब मुझे अपनाने में तुम्हें कोई भय न होगा, कष्ट न होगा, उलझन न होगी, कोई संकोच भी न होगा, क्योंकि मैं स्वयं तुम्हारे पास आना चाहता हूं, ऐसे समय में आदनी की तुम्हीं एक अपनी हो, प्रिय हो, क्या तुम इतना उपकार भी न कर सकोगी। तभी किसी की पुकार सुनाई दी, 'विनय ?'

'सोचा था कदाचित अब तुमसे कभी मुलाकात न होगी।' विनय ने राजेश को देखते हुए कहा।

राजेश ने किंचित व्यंगात्मक मुस्कान के साथ कहा, 'दुनिया गोल है न; हम ऐसे ही लुढ़कते और टकराते रहेगें।'

'और कहो कैसी कट रही है ?' विनय ने पूछा।

'अपनी सुनाओ, मेरी तो वही रफ्तार बढेंगी जो पहले थी वह अब भी है। आओ चलें, एक एक कम चाय उड़ जाय, वहीं दो दो बातें भी हो जायेंगी।'

दोनों सामने के एक रेस्ट्रां में प्रवेश कर गए। चाय का आर्डर देने के बाद विनय ने पूछा, 'कहो पुरानी प्रेम कहानियों के क्या हाल हैं ?'

'प्रेम तो एक माध्यम है फिर उसकी कहानी क्या ?'

'अच्छा सच सच कहना आज तक तुमने किसी से प्रेम नहीं किया।'

'किया तो बहुतों से होगा, लेकिन हुआ नहीं। और आज तुम प्रेम के पीछे क्यों पड़ गए, कोई और बात करो न।' राजेश के उत्तर को अनसुना करते हुए विनय ने पुनः पूछा, 'आखिर किसी स्त्री से तो हुआ ही होगा ?'

'स्त्री भी कोई प्रेम करने की चीज है।'

'तो फिर दुनिया में प्रेम करने वाली कौन सी चीज है।'

'मेरे विचार से तो अपनी ही जिन्दगी।'

इतने में चाय के कप सामने आ गए। विनय ने चाय का कप

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पकड़ते हुए कहा, 'फिर तो तुम पक्के स्वार्थी हो।'

राजेश हंस पड़ा। 'क्या तुम समझते हो स्त्री आदमी से प्रेम करती है। ग़लत है बिल्कुल ग़लत, वह बे सहारा होती है, और आदमी के सर का बोझ बन कर अपने जीवन का आनन्द उठाना चाहती है। सुख भोगना चाहती है। शासन करना चाहती है, वह आदमी के लिए एक बन्धन है, और मैं यह बन्धन हर्गिज पसन्द नहीं कर सकता। जान बूझ कर आग में कूदना कहाँ की बुद्धिमानी है।'

विनय ने चाय की चुस्की लेते हुए व्यंग किया, 'तो बुद्धि का जहां तक प्रश्न है, तुम्हारे ही पास है, लेकिन आदमी का जहां तक प्रश्न है यही बन्धन सुखदायी है। आदमी की पुश्तें इसी से फलती फूलती आई हैं।'

राजेश ने भी चाय की चुस्की लेकर उत्तर दिया, 'जी नहीं, यह सब एक दूसरे की आवश्यकताओं का फल है, प्रकृति का अपना सृजन ढंग है, उसने कोई बन्धन नहीं बनाया, यह सब बाद की स्वार्थ-नीतियां हैं, वह भी आदमी की; समझे।' राजेश किंचित आवेश में था किन्तु बड़े ही नियन्त्रित स्वर में उसने कहा।

विनय ने चाय की एक और चुस्की लेते हुए गम्भीर हो कर कहा 'संसार के, समाज के, प्रकृति के, सारे कर्म किसी व्यक्तिगत स्वार्थ या विचारों पर निर्भर नहीं करते। जो तुम्हारे विचार से सही हैं वह दूसरों के विचार से ग़लत भी हो सकते हैं। तुम जिन्हें बन्धन, सर का बोझ समझते हो, मेरे विचार से वह बन्धन नहीं, नैतिक संबन्ध हैं, स्त्री और पुरुष दोनों ही के लिए हमारी संस्कृति का वरदान हैं एक सही ढंग से सृजन का विधान!' कहते हुए विनय किंचित आवेश में आ गया।

राजेश ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, 'ठीक है तुम वैधानिक सही और मैं अवैधानिक, लेकिन यदि तुम से पूछूं कि तुम अतृप्त क्यों हो, संतप्त क्यों हो, तुम्हारा मानसिक स्तर वासना से गीला क्यों रहता है तो!'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चाय समाप्त करते हुए विनय ने कहा, 'केवल शारीरिक तुष्टि से मन को शान्ति नहीं मिलती और न मानसिक सन्तुष्टि ! वासना केवल शारीरिक ही नहीं, मानसिक भी है, मेरा सहयोगी जीवन को समझने में अधूरा है, मुझे समझने में अधूरा, व्यावहारिक जीवन से ना समझ है, बस यही कारण है, जो तुम मेरे अन्तर की मेरे मानसिक स्तर की वासना को गीला पाते हो।'

'झूठ विल्कुल झूठ; तुम्हें रूप चाहिए था जो नहीं मिल सका, लेकिन तुम उसे कहना नहीं चाहते, प्रत्येक विवाहित हम जैसों से जलता है।'

विनय हंस पड़ा, 'बहुत बढ़ते जा रहे हो ! हर बात अपने ही ढंग से सोचते जा रहे हो, रूप ही सब कुछ नहीं होता, यदि केवल रूप है तो वह अपूर्ण है, नीरज है, प्राणहीन है।'

'मेरे लिए वही ठीक है, जिसे मैं ठीक समझता हूं और अपने लिए सोचने का तुम्हें अधिकार है।'

'धन्यवाद।' कहते हुए विनय उठ खड़ा हुआ। बाहर की ओर बढ़ते हुए उसने राजेश को याद दिलाते हुए पूछा, 'मेरा प्रबन्ध तो हो गया होगा ?'

'कैसा प्रबन्ध ?' राजेश ने आश्चर्य प्रकट किया।

'आज कल कुछ रुपयों की आवश्यकता थी, बाबा अस्पताल में हैं।'

यद्यपि राजेश को स्मरण हो आया कि विनय का रुपया उसे देना है फिर भी उसने कहा 'तुम तो जानते ही हो, घर से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं रहा, मेरे पास भी कोई काम नहीं है, इसलिए मैं तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता।'

विनय ने स्पष्ट करते हुए कहा, 'मैं सहायता की भीख नहीं मांगता, मैंने तो उन पांच सौ की बात की थी ?'

'तुम्हारा रुपया भी मेरे पास है, वह मुझे याद नहीं।'

'बहुत ठीक' विनय ने चाय का बिल भी भुगतान करते हुए कहा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'यदि याद भी आ जाय तो भूलने की कोशिश करना।'

बाहर आते हुए राजेश ने उत्तर दिया, 'मेरे ऊपर कोई कर्ज नहीं अच्छा नमस्ते।'

इतना कहते हुए वह एक ओर मुड़ गया। विनय देखता रह गया। फिर एक दीर्घ निःश्वास के साथ वह बुदबुदाया, ठीक कहते हो, तुम तो खुद को भूल चुके हो, फिर भला रुपया वह भी जो देना हो कैसे याद रह सकता है।'

वह भी घर की ओर चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२८

***

विनय घोर आर्थिक संकट में आ गया था । संचित धन समाप्त हो चुका था और उपार्जन का कोई माध्यम नहीं मिल पा रहा था। बाबा अपनी मंजिल की ओर प्रतिदिन बढ़ते ही जा रहे थे । पत्नी को अधिकतर गांव में ही रखना पड़ता। उसकी मानसिक स्थिति भी बड़ी संकटापन्न थी जरा-जरा सी बात भी भूल जाया करता, किसी बात पर ध्यानपूर्वक विचार करना भी कठिन हो गया था । वह पागल नहीं था लेकिन परिस्थितियों की इतनी विषमताओं ने घेर लिया था कि ऐसी स्थिति में धैर्य धारण करना आसान नहीं था।

कभी-कभी बाबा के विषय में सोचता, वह भी एक प्राणी हैं, जीव हैं इस संसार में फूल और कांटों से लिपटी हुई बाबा की जिन्दगी, अपनी अन्तिम घड़ियों का अभिवादन करने की बाट जोह रही थी, धूमिल अस्पष्ट सी झांकती हुई राजेश की जिन्दगी भी वर्तमान की चादर ओढ़े करवटें बदलती हुई देख पड़ती, और अपनी जिन्दगी को चारों ओर से परिस्थितियों से घिरा पाता, चारों ओर से घोर अँधकार, कोहरा किसी ओर से प्रकाश की आभा तक दृष्टिगत न होती। फिर सोचता उसे इन सबसे टकरा कर बढ़ना ही है ।

सप्ताह में एक बार गांव जा कर उसे पत्नी को भी सारे समाचार देने ही पड़ते। इस बार जब वह गांव पहुंचा तो पत्नी ने सीधे मुंह बात भी नहीं की, कुछ ऐंठती सी बोली,' इस बार मैं भी चलूंगी, मुझे अपने लिए ब्याह कर लाये थे या घर वालों की सेवा टहल के लिए नौकरानी !' विनय जो बहुधा हंस कर एक बात कह उनका ताव ठंडा कर दिया करता था, फिर उस ने वही कहा,' धीरज-धर्म-मित्र अरू नारी, आपत्ति

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

काल परखिए चारी', रामायण तो घर से साथ ही बांध कर लाई थी, पढ़ती भी बराबर रहती हो, पर समझती एक अक्षर भी नहीं !'

जले पर नमक पड़ गया, एक दम उबल पड़ी, 'खूब समझतीं हूं, मुझे रामायण पढ़ा-पढ़ा कर गांव में ही डाले रहो, और खुद रोज़ सिनेमा देखो, यार दोस्तों के साथ घूमों, गुलछर्रे उड़ाओ, चाय पियो, और मैं यहां लौंडी की तरह दिन भर जी तोड़ कर काम करूं, ऊपर से डांट फटकार ब्याज में मिलती रहे, मुझे ऐसा धीरज नहीं चाहिए !'

श्रीमती जी अपने हृदय की दबी आग कुरेदती गईं और विनय स्तब्ध रह गया। यह अनुगामिनी है, सहयोगिनी है या मेरे लिए कोई अभिशाप। फिर सन्त्वना के स्वरों में उसने अपना मत प्रगट किया, 'तो कुछ दिनों के लिए अपने मायके घूम आओ न।' सिसकती हुई वह बोली, 'क्यों जाऊं, कौन मेरी मां बैठी है जो प्यार करेगी, जो हैं भी वह हंसी उड़ाने वाले, एक ही जिन्दगी की तो बात है, ऐसे ही रो-रो कर काट लूंगी।'

विनय ने समझाया, 'संघर्ष तो बना ही रहेगा, कभी कम कभी ज्यादा, हम इसे रोकर काट या हंस कर जीवन तो काटना ही है और कटेगा भी। समय पर हमारा कोई अधिकार नहीं है, वह गतिशील है और रहेगा, फिर इतना अधीर होने की, परेशान होने की क्या बात है, इन सब बातों से एक उलझन बढ़ा लेने के अलावा और क्या।'

'मेरी समझ में तुम्हारी यह उल्टी सीधी बातें नहीं आतीं, मुझे अपने साथ ले चलो, बस मैं और कुछ नहीं जानती।'

अब विनय को क्रोध आ गया, 'धीरज टूट गया है तो धर्म भी तोड़ दो ! हमारा तुम्हारा कोई विवाह तो हुआ नहीं है, जो भी हुआ है वह हमारे और तुम्हारे पिता का क्रय-विक्रय है। एक को धन का लोभ था दूसरे को अपने सर का बोझ उतारना था, अब वह दोनों हम दोनों से निश्चिन्त हैं। सामाजिक कर्तव्यों के लिए मैं भी उत्तरदायी हूं और मनुष्यता के नाते मुझे अपना कर्त्तव्य निभाना ही है, वह निभाऊंगा;

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मेरी ओर तुम्हारी तरह सैकड़ों शिकार इस समाज ने कर डाले हैं; उनका तो कोई जीवन नहीं; वह जीवित हैं किन्तु पशु की भांति, भावना हीन या कर्त्तव्यहीन होकर भटक गए हैं। लेकिन तुम क्या समझोगी इन उल्टी सीधी बातों को, तुम तो इतना समझ लो कि तुम्हारी जिम्मेदारी मुझ पर है और परिस्थितियों के अनुकूल मैं उसे पूरी करता जा रहा हूं। विश्वास रखो तुम्हीं मेरी धर्मपत्नी हो और तुम्हारे सारे अधिकारों को मैं जीवित रखूंगा, बस!'

लेकिन श्रीमती जी ऐसे खड़ी रहीं मानो कोरे घड़े पर दो चार बूंदें पानी की पड़कर लुढ़क गई हों बोली, 'तुम जाओ, यह उल्टी सीधी बातें मेरी समझ में तो कुछ नहीं आती।' इतना कहते हुए वह वहां से खिसक गईं।

'अगर समझ में ही आ जाता तो रोना कैसा, उलझन कैसी, दुःख कैसा यह भी हमारी एक कमजोरी है! जो बातें हमारी समझ में नहीं आतीं; जिन बातों से हमारा ज्ञान अधूरा है, हम उन्हें समझने का प्रयास भी नहीं करते, और इससे भी बढ़ कर हम समझाने वाले हितैषियों को स्वार्थी समझ कर अपने ज्ञान-चक्षुओं को बन्द कर लेते हैं। यह सब है हमारे संकीर्ण, स्वार्थी-मनोभावों का प्रभाव, जो हमारे समाज में रूढ़िवादिता का अपना राग अलापते रहते हैं।'

विनय यह सब सोच कर रह गया। तथा सन्ध्या की गाड़ी से शहर वापस आ गया। घर पहुंचने पर उस दिन की डाक से आया हुआ उसे एक पत्र प्राप्त हुआ, जो किशोर का था, वह चटपट आशान्वित हो पढ़ने लगा।

बनारस

प्रिय विनय!

साथ में नियुक्ति पत्र संलग्न है। आशा है तुम शीघ्र आने का प्रयत्न करोगे। खूब गुजरेगी जो मिल बैठे ये दीवाने दो।'

तुम्हारा—किशोर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रसन्नता की एक लहर से उसका मन नाच उठा। थोड़ी सी देर को उसने अनुभव किया कि मस्तिष्क का बोझ एका-एक गिर पड़ा हो और वह बिल्कुल हल्का हो गया हो। दूसरे दिन प्रातः उसे डाक्टर से मिलना आवश्यक था, बाबा के पन्द्रह दिन अस्पताल में पूरे हो रहे थे।

उस रात उसे अच्छी नींद आई, मानो वह वर्षों का जागा हुआ हो।

प्रातः वह ठीक आठ बजे अस्पताल पहुंच गया। पता चला डाक्टर साहब छुट्टी पर हैं। विनय ने सोचा यह तो अच्छा हुआ, बाबा को कुछ दिनों और आराम मिल जायेगा लेकिन विनय को देखते ही नर्स ने सन्देश दिया, 'आपको डाक्टर ने याद किया है।'

वह डाक्टर के कमरे में पहुंच गया; डाक्टर ने उसे याद दिलाते हुए कहा, 'आपके पन्द्रह दिन पूरे हो गए, डाक्टर मित्तल ने आपसे कुछ कहा था, मैं उसकी याद दिलाना चाहता हूं।'

'मुझे याद है डाक्टर साहब, लेकिन.........'

डाक्टर ने बीच में ही टोकते हुए कहा, 'लेकिन-वेकिन कुछ नहीं, आपको मरीज़ ले जाना है, क्योंकि उन्होंने जिस मरीज़ से वायदा किया था वह आ गया है, और आपका काम भी हो गया, आपके मरीज़ की हालत भी अच्छी हो गई है, कुछ दिनों को किसी गांव में भेज देना, दवा मैं लिखे देता हूं, और फिर भी टी. बी. के मरीज़ को तो जिन्दगी भर यहां रखा नहीं जा सकता, सोचिए न हमारी भी तो कुछ जिम्मेदारियां हैं।'

निराशा के साथ विनय ने कहा,' ठीक है डाक्टर साहब, मैं अभी ले जाने का प्रबन्ध किए लेता हूं।'

डाक्टर ने सहृदयता प्रगटाई, 'हां यदि हालत बिगड़ जाय तो कुछ दिनों के लिए फिर यहाँ ला सकते हो।'

'धन्यवाद।' विनय चुप चाप वापस चल दिया।

वह बाबा की दयनीय स्थिति और अपनी उलझी हुई परिस्थिति का एक मानसिक द्वन्द्व लिए बाबा के समीप पहुंचा। बाबा उसे देखते ही बोले, 'डाक्टर ने घर ले जाने को कहा होगा। आज पन्द्रह दिन पूरे हो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गए न !'

उनकी वाणी में भावी दुःख और कष्ट करवटें ले गया, किन्तु उन्होंने बड़े साहस के साथ अपने मनोभावों को छिपाते हुए हंस कर कह दिया। विनय चुप था। उन्होंने पुनः साहस बटोर कर उत्साह प्रगटाते हुए कहा.' यदि रुकने की कोई आशा न हो, तो चलो मैं तैयार हूं' इतना कहते हुए वह उठ कर बैठ गए।

'अरे आप चल सकते हैं' विनय साहस को देख कर आश्चर्य चकित रह गया।

'हां। अभी तो चल सकता हूं; मगर कितने दिन यह नहीं जानता।' बाबा ने अपने अन्तरद्वन्द्व को सम्भालते हुए उत्तर दिया।

'अच्छा तो मैं रिक्शा लिए आता हूं' कहते हुए विनय चल दिया और बाबा अस्पताल के कपड़े बदलने लगे।

रिक्शे पर बैठते हुए विनय ने बाबा से बतलाया, 'कल किशोर का पत्र आया था, नौकरी लग गई है, लेकिन बनारस जाना है।'

'जितनी जल्दी हो सके तुम पहुंच जाओ, अवसर कभी प्रतीक्षा नहीं करता। 'हाथ आए अवसर से पूरा-पूरा लाभ उठाने में ही बुद्धिमानी है। रहा मैं, उसकी तुम चिन्ता न करो। कुछ तो ठीक हो ही गया हूं, दो चार महीने आराम से कट जायेंगे, फिर देखा जाएगा।' अन्तिम शब्द कहते-कहते बाबा का स्वर शिथिल पड़ गया।

विनय ने चिन्ता प्रगटाई, 'लेकिन आपकी देखभाल तो आवश्यक है ही, क्यों न आप गांव अपने भाई के यहां चले जायं !'

ना-ना अभी मैं कहीं न जाऊंगा; रही भाई साहब की बात, उस विषय में मैं कुछ नहीं कहना चाहता। फिर भी स्पष्ट है ही, कि शक्ति हीन व्यक्ति की कोई आवाज़ नहीं होती, उसे अपने अधिकारों के लिए भी चुप रहना पड़ता है। मनुष्य ने उन्नति अवश्य की है लेकिन उसकी स्वार्थ नीतियां अभी शक्ति की समर्थक हैं। अशक्त की नहीं, और जब तक व्यक्तिगत स्वार्थ, शक्तिगत स्वार्थ मानव के प्रति जागरूक नहीं होता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जीवन का कल्याण नहीं !'

लेकिन........ विनय ने कुछ कहना चाहा तो बाबा ने टोकते हुए कहा, 'बस बरामदे में ही तख्त पर पड़ा रहूंगा, जब तुम वापस आ जाओगे, तब जैसी स्थिति होगी विचार करूंगा।'

'संभव है मेरा आना होली तक हो सके !'

'तो बस मैं तब तक यहीं पड़ा रहूंगा।'

विनय चुप हो गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

२६

***

बनारस जाते समय विनय गाँव नहीं जा सका ।

लखनऊ में कुछ आवश्यक कार्य होने के कारण उसने लखनऊ होकर ही बनारस जाना ठीक समझा ।

शहर के काम से निवृत्त हो कर वह स्टेशन वापस आ गया । गाड़ी में अभी लगभग एक घन्टे की देर थी, उसने सोचा मार्ग में लगभग पांच छह घन्टे व्यतीत करने पड़ेंगे, अच्छा है कि चाय-पान यहीं कर लिया जाय अतः वह स्टेशन कैण्टीन की ओर चल दिया ।

अनायास ही उसके मस्तिष्क में राजेश के वे शब्द उभर आए, 'सिर्फ अपनी ही जिन्दगी से वह प्यार करता है !' वास्तव में यह सत्य है कि जैसा उसने उत्तर दिया था, 'यह तो स्वार्थ हुआ । लेकिन स्वार्थ और सत्य का कोई सम्बन्ध नहीं ! क्यों नहीं । गोस्वामी तुलसीदास ने भी तो यही कहा है 'स्वारथलागि करहि सब प्रीती; सुर, मुनि, नर सब की यह रीति' तो क्या अपनी ही जिन्दगी के स्वार्थ से लोग दूसरों को प्यार करते हैं । इसमें तो सन्देह नहीं । अपने घर में लगी आग को देख कर, दूसरों के घर की आग बुझाने कोई नहीं दौड़ता, और जो दोनों घरों के लिए दौड़े वह धन्य है, महान है, लेकिन… …

'आइए विनय जी, चाय पीजिए ?' एक मधुर स्वर सुन पड़ा, देखा तो सामने कामिनी देवी बैठी चाय की प्रतीक्षा कर रही थीं ।

साश्चर्य विनय ने कहा, 'आप, यहां कैसे ?'

'यही तो मैं भी जानना चाहती हूं' मुस्कराते हुए उन्होंने उत्तर दिया !

'मैं बनारस जा रहा हूं' कामिनी के सामने बैठते हुए विनय ने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कहा।

'क्यों ? खैर तो है !'

'जी हां, मुझे एक एपोइण्टमेन्ट मिल गया है, सुविधा भण्डार में।'

बहुत सुन्दर ! सहर्ष कामिनी ने कहते हुए पूछा, 'और सुनाइए, आपके मित्र गणों के क्या हाल हैं ?'

'वैसे तो सब सानन्द हैं, सिर्फ राजेश के विषय में नहीं कह सकता।' कहते हुए विनय ने कामिनी के ऊपर एक दृष्टि डाली।

'क्यों ? वह तो आपके परमप्रिय मित्रों में से हैं' कहते हुए कामिनी की मुखाकृति पर राजेश के विषय में कुछ जानने की लालसा उभर आई, लेकिन उसने अपने मनोभावों को छिपाते हुए सर झुका लिया और चाय बनाने लगी।

विनय ने कामिनी पर दृष्टि गड़ाते हुए उत्तर दिया, 'मित्र थे कभी अब तो एक परिचित कह सकता हूं।'

'ऐसा क्यों ?' सहज स्वभाव से कामिनी ने प्रश्न किया, लेकिन आश्चर्य और उत्सुकता उसके हृदय में करवटें लेने लगी।

'यदि आप बुरा न मानें तो एक बात पूछूँ ?'

कामिनी ने कुछ संकुचित होते हुए कहा, 'पूछिए, पूछिए, इसमें बुरा मानने की क्या बात है।'

विनय ने पुनः ध्यान से कामिनी की ओर देखते हुए कहा, 'मुझसे अधिक तो राजेश आपका था।'

'यह किसने कहा आपसे' जैसे रबड़ में पिन चुभो कर निकालने पर रबड़ पुनः सिकुड़कर छिद्र भरने का प्रयास करने लगती है, वैसे ही कामिनी इस लज्जा की चुभन को सम्भालने लगी। लेकिन विनय ने समझते हुए धीरे से कहा, 'राजेश ने।'

'और क्या क्या बताया था ?'

'सभी कुछ।'

कामिनी को ऐसा लगा, मानों इस बार पिन चुभ कर अटक गया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हो और वह उसे बाहर नहीं निकाल सकती, फिर भी अपने को सम्भालते हुए उसने धीरे से कहा, 'अच्छा यह तो बताइए, शादी वादी हो गई या नहीं ?

'मेरी ।'

वह हंस पड़ी, 'नहीं आपके राजेश की' इतना कहते हुए उसने चाय का प्याला विनय की ओर बढ़ा दिया ।

'नहीं ।'

'क्यों ?'

'शादी के दिन वह भाग गया था । अपने माता-पिता के साथ उसने हम सब लोगों का सर भी नीचा कर दिया । भगवान जाने लड़की और उसके परिवार पर क्या वीती होगी ।'

कामिनी के हृदय में एक अज्ञात अप्रत्याशित आशा की लहर दौड़ गई । उत्सुकता को नियंत्रित करते हुए उसने पूछा, 'ऐसा क्यों किया उसने ?'

विनय ने परिहासिक शब्दों में कहा, 'राम जाने या आप !'

'मुझे आप मत लपेटिये' कामिनी ने विषय बदलने की कोशिश की, 'चीनी ज्यादा या कम' और उसने अपने कप में चीनी डाल कर मिलाना आरम्भ कर दिया ।

'बस इतनी बहुत है ।' विनय ने चाय की एक चुस्की लेते हुए कह दिया और विषय पर आते हुए आगे बोला, 'यह लपेट ठीक वैसी ही है, जैसे स्वचालित घड़ी का स्प्रिंग, जो एक ओर से खुलता और दूसरी ओर से लिपटता जाता है, इस लपेट में एक बार आ जाने पर बचना मुश्किल है कामिनी देवी ।'

'लेकिन आप तो जानते ही हैं कि—' विनय बीच में ही बोल पड़ा ।

'राजेश एक आवारा, लफंगा और बदचलन आदमी है, और आप उस लपेट से बाहर रहना चाहती हैं ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'यह तो मैं नहीं कह सकती, और न चाहूंगी कि आप यह स
उपमायें दें, केवल शादी से भागने का कारण बता सकते हों तो अव
बता दीजिए।' कहते हुए कामिनी कुछ गम्भीर हो गई। विनय ने अप
दिए गए उदाहरणों से कामिनी के हृदय में पहुंचने वाली पीड़ा क
अनुमान लगा लिया और कहा, 'उसका संकल्प है आजीवन कुँआरा ह
रहेगा, लेकिन ब्रह्मचारी नहीं।'

सुनते ही कामिनी जरा हंस पड़ी, 'फिर ऐसा संकल्प ही क्यों किय
उसने ?'

विनय ने तनिक गम्भीर होते हुए कहा, 'कभी-कभी आवेश मे
मनुष्य ऐसा संकल्प कर बैठता है जो उसकी क्षमता से बाहर होता है।
वह संकल्प तो नहीं एक जिद रह जाती है, एक दम्भ रह जाता है।'

'तो क्या इस कमजोरी को उसने नहीं महसूस किया होगा।'

'सिर्फ महसूस ही करने से क्या होता है कामिनी देवी; कमजोरियां
महसूस कर लेने में मनुष्य की विशेषता नहीं है, उन्हें दूर कर देने में
है। यदि महसूस कर लेने में ही उनका निराकरण संभव होता, तो
मनुष्य के पतित होने का कभी अवसर ही न आता।'

अब कामिनी ने भी तनिक गम्भीर हो कर प्रश्न किया, 'आपका
मतलब है राजेश इतना गिर चुका है, पतित हो चुका है कि भविष्य में
सुधरने की कोई आशा नहीं ?'

'आशा तो सदा बनी रहती है, विश्वास उठ जाता है, और विश्वास
उठ जाने से, आशा केवल एक कोरी कल्पना मात्र रह जाती है।'

'लेकिन मैं आपके विचारों से सहमत नहीं हूं। मैं समझती हूं
संसार का प्रत्येक जीव दोषी है, यदि दोष न हो तो जीव कैसा, प्राणी
कैसा मनुष्य ने गहन चिंतन कर निष्कर्ष निकाला, अधिक और कम;
दोष जितने ही कम होंगे, प्राणी उतना ही गम्भीर और सुलझा हुआ
होगा। दोष जितने ही अधिक होंगे, प्राणी उतना ही अस्थिर होगा।
मनुष्यता भी इन्हीं दोनों बातों पर निर्भर करती है। होती सभी के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हो और वह उसे बाहर नहीं निकाल सकती, फिर भी अपने को सम्भा-लते हुए उसने धीरे से कहा, 'अच्छा यह तो बताइए, शादी वादी हो गई या नहीं ?

'मेरी।'

वह हंस पड़ी, 'नहीं आपके राजेश की' इतना कहते हुए उसने चाय का प्याला विनय की ओर बढ़ा दिया।

'नहीं।'

'क्यों ?'

'शादी के दिन वह भाग गया था। अपने माता-पिता के साथ उसने हम सब लोगों का सर भी नीचा कर दिया। भगवान जाने लड़की और उसके परिवार पर क्या बीती होगी।'

कामिनी के हृदय में एक अज्ञात अप्रत्याशित आशा की लहर दौड़ गई। उत्सुकता को नियंत्रित करते हुए उसने पूछा, 'ऐसा क्यों किया उसने ?'

विनय ने परिहासिक शब्दों में कहा, 'राम जाने या आप !'

'मुझे आप मत लपेटिये' कामिनी ने विषय बदलने की कोशिश की, 'चीनी ज्यादा या कम' और उसने अपने कप में चीनी डाल कर मिलाना आरम्भ कर दिया।

'बस इतनी बहुत है।' विनय ने चाय की एक चुस्की लेते हुए कह दिया और विषय पर आते हुए आगे बोला, 'यह लपेट ठीक वैसी ही है, जैसे स्वचालित घड़ी का स्प्रिंग, जो एक ओर से खुलता और दूसरी ओर से लिपटता जाता है, इस लपेट में एक बार आ जाने पर बचना मुश्किल है कामिनी देवी।'

'लेकिन आप तो जानते ही हैं कि—' विनय बीच में ही बोल पड़ा।

'राजेश एक आवारा, लफंगा और बदचलन आदमी है, और आप उस लपेट से बाहर रहना चाहती हैं।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'यह तो मैं नहीं कह सकती, और न चाहूंगी कि आप यह सब उपमायें दें, केवल शादी से भागने का कारण बता सकते हों तो अवश्य बता दीजिए।' कहते हुए कामिनी कुछ गम्भीर हो गई। विनय ने अपने दिए गए उदाहरणों से कामिनी के हृदय में पहुंचने वाली पीड़ा का अनुमान लगा लिया और कहा, 'उसका संकल्प है आजीवन कुँआरा ही रहेगा, लेकिन ब्रह्मचारी नहीं।'

सुनते ही कामिनी जरा हंस पड़ी, 'फिर ऐसा संकल्प ही क्यों किया उसने ?'

विनय ने तनिक गम्भीर होते हुए कहा, 'कभी-कभी आवेश में मनुष्य ऐसा संकल्प कर बैठता है जो उसकी क्षमता से बाहर होता है। वह संकल्प तो नहीं एक जिद रह जाती है, एक दम्भ रह जाता है।'

'तो क्या इस कमजोरी को उसने नहीं महसूस किया होगा।'

'सिर्फ महसूस ही करने से क्या होता है कामिनी देवी; कमजोरियां महसूस कर लेने में मनुष्य की विशेषता नहीं है, उन्हें दूर कर देने में है। यदि महसूस कर लेने में ही उनका निराकरण संभव होता, तो मनुष्य के पतित होने का कभी अवसर ही न आता।'

अब कामिनी ने भी तनिक गम्भीर हो कर प्रश्न किया, 'आपका मतलब है राजेश इतना गिर चुका है, पतित हो चुका है कि भविष्य में सुधरने की कोई आशा नहीं ?'

'आशा तो सदा बनी रहती है, विश्वास उठ जाता है, और विश्वास उठ जाने से, आशा केवल एक कोरी कल्पना मात्र रह जाती है।'

'लेकिन मैं आपके विचारों से सहमत नहीं हूं। मैं समझती हूं संसार का प्रत्येक जीव दोषी है, यदि दोष न हो तो जीव कैसा, प्राणी कैसा मनुष्य ने गहन चिंतन कर निष्कर्ष निकाला, अधिक और कम; दोष जितने ही कम होंगे, प्राणी उतना ही गम्भीर और सुलझा हुआ होगा। दोष जितने ही अधिक होंगे, प्राणी उतना ही अस्थिर होगा। मनुष्यता भी इन्हीं दोनों बातों पर निर्भर करती है। होती सभी के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पास है, लेकिन उसे बनाये रखना व्यक्ति विशेष के गुणों की कमी बेशी पर निर्भर है। संसार में न तो कोई मनुष्य सुर है न असुर, सुर भी कभी-कभी अपने अवगुणों वश असुरता कर बैठते हैं, और असुर सुरता, भले ही उनका सुरत्व या असुरत्व, एक ही गुण या अवगुण के कारण हो।

'अतः मनुष्य, मनुष्य ही है, न सुर न असुर, केवल एक चेतन जगत का प्राणी है, जीव है। यदि सही से गलत हो सकता है तो गलत से सही होने की आशा ही नहीं वरन मुझे तो पूर्ण विश्वास है।'

गम्भीर होते हुए विनय बोला, 'मैं समझता हूं कामिनी देवी, शादी से भाग जाने के समाचार ने आपकी टिपटिमाती हुई आशादीप की बाती का बढ़ा हुआ गुल तोड़ उसे कुछ प्रकाशवान कर दिया है, लेकिन दीपक में तेल समाप्त हो चुका है, इस पर आपने ध्यान नहीं दिया। यह दीपक कब तक जल सकेगा क्या आप कल्पना कर सकती हैं?'

भीतर से कामिनी सिहर उठी, फिर भी बोली; 'मैं उसके आगे कोई कल्पना नहीं करना चाहती।'

विनय किंचित मुस्कराया, 'फिर तो ठीक है। लेकिन प्रत्येक वस्तु के दो स्वरूप होते हैं, कामिनी देवी, भीतरी तथा बाहरी, आपकी ज्योति कौन सा प्रकाश दे रही है।'

कामिनी ने चाय समाप्त की फिर बोली, 'एक और दो के बीच, भीतर और बाहर के बीच, एक अन्तर है, भेद है, मेरे विचार से प्रकाश का बाहरी रूप प्रभावहीन है, अस्तित्वहीन है, किन्तु भीतरी रूप चिर-सुखदायी है। शतत प्रकाशवान है।'

'ठीक है' विनय ने समर्थन करते हुए आगे कहा, 'मेरे विचार से राजेश जो भी है बाहर से है, भीतर से खाली, अस्तित्वहीन, उसमें और ढोल में कोई अन्तर नहीं।'

'मानती हूं, वह भीतर से खाली हो सकता है, लेकिन भीतर से खाली या भरा होना हम बाहर से नहीं देख सकते, और आदमी की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुलना ढोल से देना आदमी का अपमान है, उनका नहीं आपका भी।'

'मेरे ऊपर आप आक्षेप अवश्य कर सकती हैं, लेकिन पत्थर पर दूब उग आने की सम्भावना पर आपका विश्वास रखना मेरे विचार से ठीक नहीं।'

'लोग पत्थर में भगवान होने का विश्वास क्यों रखते हैं?' कामिनी ने प्रश्न किया।

'केवल अपने विचारों को एक ओर केन्द्रित करने के लिए, ताकि उनके विचार नियंत्रण के बाहर न जा सकें, इसमें पत्थर में भगवान होने की बात तो अशिक्षित वर्ग का विश्वास है, शिक्षित वर्ग तो उसे केवल विचारों को एकाग्र, तथा केन्द्रित करने का ही आधार मानता है, लेकिन इससे भगवान तो नहीं मिलते।'

'फिर भी वह अपने विचारों पर नियंत्रण कर, अपने जीवन को भटकने से तो बचा ही लेते हैं; और अशिक्षित वर्ग तो तमाम दोषों से भगवान के भय से अपने को बचा लेने में अधिक सफल होता है। पत्थर में भगवान होने की सूझ किसी अशिक्षित की नहीं वरन गूढ़ दार्शनिक की रही होगी। मनुष्य के नैतिक कल्याण की यह भावना तथा विश्वास सब से बड़ा सन्तरी है।'

'मानता हूं कामिनी देवी, आपने एक बहुत बड़ी बात कह डाली है। आपकी सराहना मैं किन शब्दों में करूं यही तो नहीं समझ पा रहा हूं। फिर भी आपमें एक सच्ची भारतीय नारी की आत्मा झांक रही है। हमारे देश का नारी समाज वास्तव में आप जैसों के गुणों पर ही जीवित है।' विनय ने कामिनी के गहन, आदर्शपूर्ण विचारों का समर्थन करते हुए कह डाला। कामिनी ने कुछ लजाते हुए उत्तर दिया :

'छोड़िए भी, आप तो मेरी प्रसंसा करने बैठ गए!'

'आपने बात वास्तव में प्रशंशा के योग्य कह दी; विचार आपके बहुत ही सुलझे हुए हैं, मेरे विचार से तो राजेश सर्वथा आपके अयोग्य है; लेकिन आप यदि उसे मिल जायं तो उसके लिए यह बड़े ही भाग्य

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की बात होगी।'

'लेकिन आपकी बातों से तो यह स्पष्ट है कि वह मेरे भाग्य में नहीं' कामिनी ने किंचित लजाते हुए कहा।

'मेरे विचार से तो आपके भाग्य में ऐसे व्यक्ति का न होना ही अच्छा है; फिर भी मैं आपके प्रेम की, संकल्प की और आशाओं के अटूट विश्वास की अवहेलना नहीं कर सकता। यदि मैंने कोई ऐसी बात भावावेश में कह डाली हो, तो उसके लिए क्षमा चाहूंगा।'

संकोच से सिकुड़ते हुए कामिनी ने कहा, 'कुछ भी तो नहीं कहा आपने; सत्य अपने आप बोलता है, कभी जल्दी, कभी देर से।'

'यदि आप सत्य मानती हैं तो आपके हृदय पर राजेश का सही चित्र अंकित हो गया होगा, 'फिर आपने क्या निष्कर्ष निकाला।' कामिनी पर दृष्टि गड़ाते हुए, विनय ने एक और प्रश्न किया।

सर झुका कर लज्जा भरे स्वर में कामिनी ने उत्तर दिया, 'राजेश जैसा हो बना रहे, लेकिन उसका जो अधिकार मेरे पर है वह दूसरे को नहीं मिल सकता, यही मेरा निश्चय है, संकल्प है, फिर आप जो चाहें समझ लें।'

विनय चुप हो गया। यह भारतीय नारी का आदर्श है या कमजोरी जो अपना सर्वस्व एक ही बार सर्मपित करती है, सही हो या गलत। पुरुष कैसा भी हो उसके लिए देवता है।

इसी समय गाड़ी आने की घन्टी वज उठी, कामिनी ने कहा, 'चलिए समय हो गया!'

विनय ने उठते हुए कहा, 'मेरे योग्य कोई सेवा हो तो याद करना न भूलिएगा।'

कामिनी ने तनिक मुस्करा कर कहा, 'हो सके तो अपने इष्ट मित्रों की सूचना देते रहिएगा। अव तो आप बनारस में ही हैं, फिर भेंट होगी।'

'अवश्य, यह मेरे सौभाग्य की बात है' इतना कहते हुए विनय बाहर की ओर चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

३०

***

बनारस विनय के लिए नया नहीं था; अतः सुविधा भण्डार खोजने में उसे समय नष्ट नहीं करना पड़ा। सुविधा भण्डार, बनारसी साड़ियों तथा रेशमी वस्तुओं का मुख्य केन्द्र था। शहर के प्रख्यात शौकीन व्यक्तियों की या दर्शनार्थ आने वाले यात्रियों की रेशम सम्बन्धी लगभग सारी आवश्यकताएँ पूरी हो जातीं। दिन भर भीड़ सी लगी रहती।

विनय को एक दिन भी प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी, वरन किशोर स्वयं उसकी प्रतीक्षा में था। तीन चार दिन में ही वह दक्ष हो गया। जब अवकाश मिलता, किशोर अपनी आदत से बाज न आता, पूछता, 'कहो भाई बनारसी माल तो पसन्द आता होगा।'

मुस्करा कर विनय कहता, 'जिन्दगी में प्रत्येक आकर्षण एक भ्रम ही तो है।' लेकिन किशोर के पास दार्शनिकता न थी अतः वह कह देता; 'कल्पना और सत्य में बड़ा अन्तर है बड़े भाई, यहां तो नौ नकद का ध्यान रक्खो, ग्यारह उधार के नहीं, कहीं किशोर की उधेड़ बुन में एक साड़ी ज्यादा बंध गई तो बस समझ लो।'

'कि खुद अपनी जेब काट बैठे यही न।' बात काटते हुए विनय बोल पड़ता। 'अरे मैं साड़ी पर ध्यान रखता हूं साड़ी पसन्द करने वालों पर नहीं।'

'क्यों नहीं, सारा कमाल तो साड़ियों का ही है, प्यारे शेष तो आप

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की दार्शनिकता से सत्य ही सत्य समान है।'

और विनय मुस्करा पड़ता।

विनय यह तो जानता ही था कि किशोर के साथ दिन आनन्द से बीतेंगे, लेकिन किशोर इतना प्रेम और घनिष्ठता मानता रहेगा, यह स्वप्न में भी उसने न सोचा था; उसे विश्वास था कि समय और पद के प्रभाव में मनुष्य अपनी वास्तविक स्थिति बहुधा भूल कर स्वाभिमानी हो जाता है। किन्तु किशोर में कोई परिवर्तन नहीं था, विनय को स्वयं यह अनुभव होने लगा कि उसमें परिवर्तन आता जा रहा है। और वह पहले से गम्भीर होता जा रहा है। किशोर के हलके मनोरंजन का उस पर कोई प्रभाव न पड़ता। किशोर भी विनय के स्वभाव से भली-भांति परिचित था किसी न किसी मनोरंजक वातावरण में विनय को उलझाए रखने में उसे विशेष आनन्द आता। क्यों कि वह विनय को गत जीवन की ओर विचार करने का अवसर नहीं देना चाहता था। कभी-कभी वह कह बैठता, बीती ताहि बिसारि दे, जो बात मुँह से निकल गई, जो तीर कमान से छूट गया, जो दिन बीत गया उस पर विचार करने से वर्तमान और भविष्य, दोनों ही खतरे में रहते हैं। कल के लिए सोचो कल को भूलकर।

विनय मुस्कराकर चुप रह जाता।

एक दिन की बात है लगभग संध्या को आठ बज रहे थे, धीरे-धीरे दूकान के फैलाव को चपरासियों ने समेटना आरम्भ कर दिया था। विनय की दृष्टि दूकान की ओर बढ़ते हुए एक युगल पर पड़ गई। वह किशोर के समीप जा कर बोला, 'मैं जरा सी देर को भीतर बैठता हूं।'

'क्यों ?'

'यह फिर बताऊंगा' इतना कहते हुए वह भीतर की ओर स्टोर रूम में चला गया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इसी समय युगल ने दूकान में प्रवेश किया।

किशोर ने स्वागत करते हुए कहा, 'आईए मिस वरजीनिया, बहुत दिनों बाद याद किया मुझे।'

मुस्कराहट के साथ आगे बढ़ते हुए मिस वरजीनिया ने कहा, 'कहिए मैनेजर साहब, कुछ नया माल-वाल आया कि नहीं।'

'क्यों नहीं, आपके लिए स्पेशली (विशेषतया) छिपा कर रक्खा है' तपाक से उत्तर देते हुए किशोर ने चपरासी से कहा, 'अरे रामदयाल ज़रा भीतर से नई वाली साड़ियों को वण्डल तो उठा लाना।'

'अभी लाया।' कहता हुआ रामदयाल स्टोर रूम की ओर चल पड़ा, तब किशोर ने साथ वाले महाशय की ओर संकेत करते हुए पूछा,

'आपकी तारीफ।'

वरजीनिया ने मुस्कराते हुए परिचय दिया 'आप मेरे बड़े पुराने मित्र हैं; इलाहाबाद के मिस्टर... वह कुछ रुकी तो साथ वाले सज्जन ने अपना नाम बताते हुए हाथ आगे बढ़ाया, 'केशव!'

किशोर ने हाथ मिलाते हुए कहा, 'बड़ी खुशी हुई साहब आप से मिल कर। लेकिन बनारस शायद आप पहली ही बार आये हैं।'

'जी हाँ, केशव ने उत्तर दिया।

इसी समय रामदयाल ने साड़ियों का वण्डल ला कर सामने रखते हुए खोलना आरम्भ कर दिया।

एक साड़ी खोल कर फैलाते हुए किशोर ने कहा, 'यह देखिए कितनी सुन्दर है, बिल्कुल नया प्रिन्ट, शादी के शुभ अवसर पर पहनने लायक।'

'वेरी गुड, बहुत अच्छी है' वरनीनिया ने सराहना करते हुए मिस्टर केशव की ओर देखते हुए पूछा, 'कैसी रहेगी।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मिस्टर केशव ने तनिक उपेक्षित ढंग से कहा, 'ठीक हैं, यह सब आप की अपनी पसन्द है।'

'अजी साहब आप भी देखिए' इतना कहते हुए किशोर ने साड़ी का पल्लू मिस वरजीनिया के कंधे पर डाल दिया, कितनी सुन्दर, तथा आकर्षक है।

मिस्टर केशव ने किशोर की ओर देखते हुए मुस्करा कर कहा, 'तो आप को भी पसन्द है।'

'अजी साहब यह माल और भला पसन्द न आए, यह तो आल अकेजन्स (सभी अवसरों) पर इस्तेमाल की एक ही चीज है।'

'बहुत सुन्दर, कितने की है।' मिस वरजीनिया बीच में बोल पड़ी केशव मुस्करा कर चुप हो गया।

'सिर्फ अट्ठाइस रुपया पच्छत्तर नए पैसे' किशोर ने उत्तर दिया।

'बाँध दीजिए।'

साड़ी एक ओर फेंकते हुए किशोर ने पूछा, 'और बोलिए ब्लाउजपीस'

'श्योर (अवश्य)' मिस वरजीनियां ने उत्सुकता के साथ कहा। तीन चार आकर्षक डिजाइन के कपड़े दिखाते हुए किशोर ने कहा, 'यह देखिए।'

'यह तो सभी अच्छे हैं।'

'तो एक-एक पीस बँधवा दूँ।'

'क्यों जी, आपकी क्या राय है' मिस वरजीनिया ने केशव की ओर उन्मुख होते हुए पूछा।

'जो-जो पसन्द हो लीजिए, चीज आपकी पसन्द आपकी' मिस्टर केशव ने दिलचस्पी लेते हुए कहा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किशोर ने परिहास करते हुए कहा 'यह कैसे साहब, चीज इनकी और पसन्द आपकी' इतना कहते हुए किशोर ने तीन चार साड़ियां और खोल कर काउण्टर पर बिछा दीं।

ललचाई दृष्टि से देखते हुए मिस वरजीनिया बोली, 'पहले आपने यह साड़ियां क्यों नहीं दिखलाई।'

अजी अभी तो सब माल आपके सामने ही है, जी भर देखिए, सभी नए प्रिन्ट हैं, एक एक पीस और सही ।' किशोर ने दो-तीन साड़ियां और खोल कर सामने करते हुए कहा ।

'लेकिन यह दोनों तो सब से अच्छी हैं।' साड़ियों के देखते हुए मिस वरजीनिया बोली।

'तो तीनों बंधवाये देता हूं।'

'क्यों जी आप चुप क्यों खड़े हैं ? कुछ बोलिए न !' मिस वरजीनिया ने केशव की ओर देखते हुए कहा।

'हाँ हाँ तीनों बंधवा दीजिए न, और सब के साथ साथ एक एक मैचिंग ब्लाउज पीस भी।' मिस्टर केशव ने अपनी अनुमति प्रगट की।

'लो रामदयाल यह सब भी उसी के साथ बांध दो' साड़ियों को रामदयाल की ओर बढ़ाते हुए मिस्टर किशोर ने कहा, और कैशमेमो बुक अपनी ओर खींच कर लिखना शुरू कर दिया।

मिस्टर केशव ने अपना पर्स निकालते हुए पूछा, 'हाऊ मच' (कितना)

'सत्तानवे रुपए, बीस पैसे सिर्फ' इतना कहते हुए किशोर ने कैशमेमो फाड़ दिया।

मिस वरजीनिया ने कैश मेमो ले लिया, और मिस्टर केशव ने सौ का नोट किशोर की ओर बढ़ाते हुए कहा, 'यह लीजिए।'

शेष पैसे लौटाते हुए किशोर ने कहा, 'धन्यवाद'

तब तक रामदयाल ने बण्डल ला कर सामने रख दिया। मिस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वरजीनिया ने बण्डल उठाते हुए मुस्करा कर कहा, 'अच्छा नमस्ते।' मिस्टर केशव ने भी नमस्ते किया और दोनों वापस चल दिए।

दोनों के दूकान से बाहर होते ही किशोर ने विनय को संम्बोधित करते हुए कहा, 'आजा-आजा प्यारे वह दोनों गए।'

विनय ने बाहर आते हुए पूछा, 'कौन थी मिस वरजीनिया, मालम होता है, आपकी पुरानी जान पहचान है।'

जी हां, यह तो बनारसी बुलबुल है, अभी तीन महीने पहले ही तो इलाहाबाद से ट्रान्सफर पर आई है और अब यह भी बताऊं क्या करती है, कहां रहती है और···

'हां-हां क्यों नहीं और भेंट भी हो सके तो और अच्छा है।' विनय ने बात काटते हुए कह दिया।

'अजी भेंट क्या सब कुछ हो जायेगा, लेकिन यह हजरत कौन थे जिन्हें देख कर तुम छिप गए।' कहते हुए किशोर ने पूछा। विनय ने परिहासिक रूप से उत्तर देते हुए कहा, 'यह थे कानपुरी बाज, जो बुल-बुल पकड़ने में उस्ताद हैं। सदा नए नाम तथा नए ढंग से मिलते हैं, और नए तरीकों से प्यार करते हैं; वैसे अभी क्वारे हैं और सदा क्वारे रहने का संकल्प है।'

'लेकिन मालूम देता है, बाप को मरे ज्यादा दिन नहीं बीते' किशोर ने व्यंग कसा।

विनय हंस पड़ा। किशोर ने फिर कहा, 'चलो अच्छे फंसे'

'क्यों ?'

'मिस वरजीनिया भी यही कहती हैं, कि सदा क्वारी रहने का संकल्प है। जानते हो क्यों ?'

'नहीं।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'उनकी दृष्टि में ऐसा आदमी एक टकसाल है जो पराई स्त्री पर धन लुटाना जानता है, और पति एक जल्लाद जो कमाऊ स्त्री के धन पर ऐश करना चाहता है, उसे चूसना चाहता है।' कहते हुए किशोर ने रामदयाल को आदेश दिया, रामदयाल जरा जल्दी जल्दी बन्द करना, समय हो गया।'

'और ऐसी स्त्रियां तुम्हारी दृष्टि में कैसी होती हैं जो पराये पुरुषों पर दृष्टि रखती हैं।' विनय ने मुस्कराते हुए पूछा।

'ऐसी स्त्रियाँ मेरे विचार से ऐसा जहर हैं जिसका स्वाद मिलने से पहले मृत्यु मिलती है, जैसे———'

'पोटेशियम साइनाइड' बात पूरी करते हुए विनय ने आगे कहा, 'यही अब तक का बिना स्वाद का जहर है। तो और क्या क्या कहती हैं मिस वरजीनिया ?' विनय ने अपनी बात समाप्त करते हुए प्रश्न किया। किशोर किंचित मुस्करा कर बोला, 'ज्यादा दिलचस्पी बढ़ गई क्या ?'

'नहीं भाई : किसी और वजह से पूछ रहा था।'

'ज्यादा उसके विषय में न पूछो तो अच्छा है।'

विनय चुप हो गया। दोनों दूकान के बाहर की ओर चल दिए। रामदयाल चाभियों का गुच्छा लिए पीछे पीछे था।

जीवन में कभी-कभी ऐसी घटनाएं घटित हो जाती हैं, उनके विषय में हम कल्पना भी नहीं कर पाते; लेकिन ऐसा होता क्यों है, किसी अप्रत्याशित भावना के आजाने से, या समय की परिवर्तनशीलता से, जो भी हो, आज विनय की समझ में आ रहा था कि उसके पांच सौ भी इलाहबाद के इसी गर्त में गए होंगे, जिन्हें राजेश वापस नहीं कर सका। क्या वह इस घटना से कामिनी को अवगत कराये; नहीं इससे लाभ क्या ? जिसे लाभ नहीं पहुंचाया जा सकता उसे अकारण ही आघात पहुंचाने में क्या लाभ। लोग तो दुख सह कर, हानि उठाकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दूसरों का भला करते हैं, फिर मैं उसे अकारण ही यह मानसिक क्लेष क्यों पहुंचाऊं।

अब तक किशोर को फुर्सत मिल चुकी थी बोला, 'अजी चलिए फिलासफर साहब।'

विनय मुस्कराते हुए बोला, 'सील लग गई क्या ?'

'ओ हो : आप कहीं और थे' किशोर ने विनय की ओर देख कर व्यंगभरी मुस्कान छोड़ी। अब विनय की समझ में आया कि वह दूकान से बाहर खड़ा हुआ है, वह कुछ झेंपते हुए बोला, 'कल तो बन्द है।'

'जी हां; कल आपकी भेंट मिस वरजीनिया से करवा दूंगा' कहता हुआ किशोर चल दिया, विनय चुपचाप तनिक मुस्करा कर पीछे हो लिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

३१
***

तीन दिन होली के शेष रह गए थे । घर का कोई समाचार नहीं मिला था, आज जब विनय दुकान पर पहुंचा तो उसे एक पत्र मिला जो उसी के एक पड़ोसी मित्र मंगल ने लिखा था। वह पत्र पढ़ने लगा—

प्रिय विनय,

जब से बनारस गए हो कानपुर जैसे तुम्हारे मस्तिष्क से बिल्कुल निकल गया हो, हम लोगों की तो खैर कोई बात नहीं, जब मिले तभी ठीक है, लेकिन अपने बाबा का तो कुछ ध्यान रखते, उनकी दशा दिन प्रति दिन खराब होती जा रही है, तख्त पर ही भूखे प्यासे पड़े रहते हैं, किसी को भी उन पर दया नहीं आती, तुम्हारी चाची भी उन पर कोई ध्यान नहीं देती, मैं कल उनकी करुण पुकार सुन अचानक जा खड़ा हुआ, तो उनकी दशा देखते ही महान दुख हुआ क्या आदमी की इतनी दुर्गति भी हो सकती है । क्या स्वार्थ मनुष्यता से सदा ही प्रचन्ड रहता है । जो व्यक्ति जीवन में दूसरों का स्वार्थ पूरा नहीं कर पाते क्या उनकी यही दशा होती है ।

वह मलमूत्र में सने पड़े थे, बोला भी नहीं जाता था, मैंने जब तुम्हारी चाची से उनके विषय में कहा तो वह क्रोध में मेरे ऊपर बरस पड़ी, 'मेरे साथ क्या कर दिया है जो मैं नरक में हाथ सानूं, बुलायें न अपने बड़े भाई और भतीजे को जो सारी की सारी जायदाद हज़म किए

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बैठे हैं।' मैं चुप रह गया सारा वातावरण नारकीय दुर्गन्ध से भर गया था, मैं ज्यादा देर तक ठहर नहीं सका, सोचा तुम्हें पत्र देकर सूचित कर दूं। सफाई किसी प्रकार करवा दी थी तब से एक बार देखने भी चला जाता हूं। पानी का प्रबन्ध भी कर दिया, और खाने को भी थोड़ा बहुत पहुंचा देता था। लेकिन गत तीन दिना से उन्होंने कुछ खाया नहीं है, मेरे विचार से वह दो चार दिन से ज्यादा के मेहमान नहीं रह गए !

अच्छा हो कि तुम दो चार दिन की छुट्टी लेकर आ जाओ, उनकी ज़बान पर बस तुम्हारा ही नाम रहता है। आंखें तुम्हारी ही बाट जोह रही हैं, अगर कोई पास से निकल जाता है तो तुरन्त क्षीण स्वर से पुकार उठते हैं, 'विनय-विनय आया।' अधिक क्या लिखूं।

तुम्हारा ही—मंगल

विनय के विचारों का एक क्रम वध गया, क्या यही अन्त है जीवन का, जिसका जीवन इतने संघर्षों में बीता हो, जिसने अपनी शक्ति का पूरा-पूरा लाभ उठाया हो, जीवन से कभी हार न मानी हो, आज उसकी यह दशा, संसार इतना स्वार्थ में डूबा हुआ है, कि सदा अपनी ही छाया निहारे, अन्धा है जिसे केवल इतना अनुभव हो कि वह है, और कुछ नहीं, यह सब देखते हुए भी लोग नहीं सोच पाते, कि एक दिन सबका अन्त है। और किसका कैसा अन्त है कोई नहीं सोचता। उसकी आँखें डबडबा आईं, किशोर ने पत्र उसके हाथ से लेकर पढ़ डाला और बोला, 'यह वही फिलासफर बाबा हैं जो बाहर तख्त पर पड़े बीड़ी सुलगाया करते थे।'

'हाँ' एक दीर्घ निःश्वास के साथ उसने धीरे से उत्तर दिया।' यह वही आदमी है, जिसका जीवन सदा कांटों पर खेलता रहा, तब शक्ति थी वह लड़ता गया, अब वह शक्ति हीन है, विपरीत शक्तियों की बारी है, वह मरने से पूर्व प्रति-शोध ले रही हैं।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तो क्या हुआ, बुढ़ापा ऐसा ही होता है, जवानी अन्धी होती है तब हम यह कुछ नहीं देख पाते, यह कष्ट तो सदा अकेले ही झेलने पड़ते हैं, कोई साथ भी नहीं दे पाता। तुम जाना चाहो तो जा सकते हो, आज ही रात की गाड़ी से चले जाओ, दुकान भी कल से तीन दिन के लिए बन्द रहेगी।'

'मैं कल शाम की गाड़ी से जाऊंगा।'

'लेकिन वह इतनी प्रतीक्षा न कर सके तो ?'

'तो क्या हुआ, उनके बड़े भाई हैं, बहुयें हैं, भतीजे हैं सब तो हैं.' कहते हुए विनय कुछ झुंझला उठा !

'लेकिन उनके लिए तो सिर्फ तुम हो, मेरी समझ में तो ऐसा ही आता है।'

'ठीक है, लेकिन मेरे सामने भी तो कुछ परिस्थितियाँ हैं, मैं करूंगा भी तो क्या ?'

'मेरे विचार से तो तुम्हारा पहुंचना ही बहुत है।'

एक दीर्घ निःश्वास छोड़ते बुए विनय ने कहा, 'जाऊंगा, किशोर मैं अवश्य जाऊंगा, लेकिन कल, ताकि मैं भी देखूं वह लोग अपने-अपने स्वार्थों के लिए, सदा अपना सगा होने का ढोल पीटते हैं वह हैं कितने गहरे पानी में, उनका सत्य स्वरूप क्या है, उनका अस्तित्व क्या है। मैंने जो भी किया वह बाबा समझकर नहीं, एक आदमी समझकर, मैं भी देखूं यह भाई भतीजे क्या समझते हैं।'

'यह संसार ऐसा ही है विनय, सच तो यहां कुछ भी नहीं, केवल अपना-अपना स्वार्थ है, जो सिद्ध होने के किए अपनत्व का ढोंग रचता है, मेरे विचार से तो मनुष्य का अपना पुरुषार्थ, अपनी शक्ति भी अपनी नहीं, केवल हमारे जीवन की एक कला है जो उस कला में दक्ष हैं वह संसार में सभी का पूरा-पूरा लाभ उठा लेते हैं, जो अनभिज्ञ हैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उनकी यही दशा होती है। जो लोग यह सोचते हैं कि वह यह उपकार या काम दूसरों के लिए करते हैं, वह मूर्ख हैं, यहाँ हम सब कुछ अपने ही लिए करते हैं, जब नहीं कर पाते या करने का ढंग नहीं आता तो उसका प्रति उत्तर भी सहना ही पड़ता है। जो लोग केवल अपने तक सीमित रह जाते हैं, उन्हें यदि संसार से कुछ मिल सके तो संसार कैसा, स रहेगा सार नहीं। फिर तुम जो सोचो वही ठीक है, मैं तुम्हारी स्थिति को भली भांति नहीं समझ सकता।'

विनय चुप रहा।

वह दिन भर उदास तथा खिन्न बना रहा। रात में भी उसे नींद न आई, वह बड़ी देर तक पड़े-पड़े बाबा के गत जीवन पर विचार करता रहा, कितने उतार चढ़ाव में यह जीवन बीता, कितने संघर्षों में वह इतना लम्बा रास्ता पूरा कर सके। देने वाले ने मनुष्य को, जीवन समय, शक्ति और बुद्धि देकर उसे पूरा किया, लेकिन यहां कितने मनुष्य हैं जो इन सब का पूरा-पूरा लाभ उठा पाते हों, बस कुछ थोड़े से जो अपनी शक्ति, समय और बुद्धि का सही-सही प्रयोग कर पाते हैं, शेष यूं ही भटक जाते हैं। मन्जिल पर मौत तो हर रास्ते है, लेकिन कहीं कुत्ते की तरह और कहीं सिंह की तरह।

मरना तो सबको पड़ेगा, लेकिम किस दशा में, किस परिस्थिति में आदमी होकर आदमी की तरह या पशु की तरह, जो मृत्यु को पास आते देख सकता है, अनुभव कर सकता है, किन्तु व्यक्त नहीं कर सकता। कितना बड़ा अभिशाप है आदमी के लिए। लेकिन जीवन में कुछ क्षण ऐसे भी आते होंगे जब आदमी यह भूल जाया करता होगा कि मृत्यु की भी कोई घड़ी है जो जीवन की सम्पूर्ण क्रियाओं को शान्त कर देती है।

उनसे गलतियाँ भी हुईं, एक दो नहीं सैकड़ों, कुछ छोटी-छोटी कुछ बड़ी-बड़ी, सारा जीवन गलतियों का एक पिटारा बन गया, लेकिन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सबसे बड़ी गलती तो यह हुई कि वह कभी पश्चाताप नहीं कर सके। पश्चाताप न करने वाले लोग, कभी अपनी गलती नहीं महसूस कर पाते और गलतियां इस प्रति क्रिया से बढ़ती ही जाती हैं कि जो हुआ सो हुआ! संभव है उन्हें जीवन में कभी महसूस करने का अवसर ही न मिला हो कि उनकी आत्मा सजग हो पाती या अवसर आने पर वह उसका लाभ उठाने से वंचित रह गए हों।

रात कैसे बीत गई यह विनय नहीं जान सका। प्रातः समीरण के साथ-साथ जब उसने करवट बदली तो पूर्व की अरुणिमा खिड़कियों से झांक रही थी! वह उठ बैठा।

गाड़ी रात को साढ़े दस बजे छूटती थी। दिन भर वह दुकान में व्यस्त रहा और सन्ध्या की गाड़ी से जाने का कार्यक्रम बना लिया! महीना पूरा होने में अभी एक सप्ताह शेष था, फिर भी किशोर ने उसे पूरे माह का अग्रिम वेतन दे दिया। रिक्शे पर बैठते हुए विनय ने कहा, 'जरा ज्यादा दिन भी लग सकते हैं।'

'कोई चिन्ता न करना, यदि रुपए कम पड़े तो लिख भेजना, और प्रबन्ध कर दूंगा और सकुशल पहुंचने का समाचार भी पहुंचते ही देना।' किशोर ने सहानुभूति प्रगट करते हुए कहा!

'अवश्य, अच्छा नमस्ते!'

रिक्शा चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

३२

***

गाड़ी में भीड़ ज्यादा थी। विनय किसी प्रकार सरवेण्ट क्लास में घुस गया। बीच में फंस जाने के कारण उसे सांस लेना भी दूभर हो रहा था, वह किसी प्रकार खिड़की तक पहुंचना चाहता था, ताकि शुद्ध वायु मिल सके। लेकिन उसके सभी प्रयास विफल रहे।

गाड़ी चल दी ! धीरे-धीरे बनारस के जगमगाते दीपों की ग्राभा भी विलीन हो गई। छह यात्रियों के बैठने के स्थान पर लगभग सोलह यात्री ठस कर ग्रा गए थे जो सभी एक दूसरे के सहारे नक्षत्रों की भांति ग्रपनी यात्रा करने लगे, कोई यदि ग्रौंघ जाता तो दूसरा उसे ठेलता हुग्रा कह उठता, 'जरा ग्रपने सहारे खड़े हो जी, घर नहीं, सफर है दूसरे का भी ध्यान रक्खो।' किन्तु विनय दूसरी दुनिया में था।

राजेश ने ग्रपना नाम केशव बतलाया था, संभव है यही नाम उसने मिस वरजीनिया को भी बता रक्खा होगा। यह सम्बन्ध तो पुराना है, उन दिनों तो मुझसे खूब पटती थी ग्रौर मुझसे रुपए ले जाते समय उसने कहा भी था कि वापस ग्राने पर सब घटनाएं सुनायेगा, लेकिन इस घटना को उसने सदा गोपनीय ही रक्खा। कुछ भी हो, वरजीनिया वास्तव में सुन्दर है, ग्रति सुन्दर ग्रौर कदाचित यही ग्राकर्षण उसे कानपुर से इलाहाबाद तक खींच लाता रहा होगा। फिर भी एक ग्राश्चर्य की बात है, ग्राकर्षण ग्रभी तक खत्म नहीं हुग्रा जो उसे बनारस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तक दौड़ना पड़ता है। आकर्षण बने रहने का कारण संभवत: वरजीनिया का संकल्प होगा, जैसा कि किशोर ने कहा था वह भी शादी नहीं करना चाहती। यदि उसने भी अब तक शादी का प्रस्ताव रक्खा होता तो संभवत: यह संबन्ध टूट जाते।

तभी एक जोर का धक्का लगा और गाड़ी धीमी पड़ गई, ऊंघने वाले यात्रियों की आपसी मुठभेड़ हो गई, किसी का सर किसी के सर से टकराया किसी का दीवाल से, और सब की नींद हवा हो गई, 'विन्ध्याचल आ गया', किसी यात्री ने कहा और गाड़ी धीमी पड़ती हुई रुक गई।

कुछ भीड़ छंट गई, विनय खिड़की के किनारे पहुंच कर शुद्ध वायु सेवन की लालसा पूरी करने लगा। अब उसे कुछ राहत मिली, उसने अपना बिस्तर बन्द खींचकर जमीन पर डाल लिया और खिड़की के किनारे उसी पर बैठ गया।

रात बढ़ती जा रही थी, शुद्ध वायु के झकोरे लगते ही उसे भी आलस ने धर दबाया, खिड़की के सहारे उढ़कते हुए वह भी ऊंघने लगा। लगभग साढ़े चार के जब पुन: गाड़ी धक्के के साथ रुकी तो वह उठकर ठीक से बैठ गया, देखा इलाहाबाद था, आलस्य दूर करने के लिए वह चाय वाले को देखने के लिए खिड़की से बाहर झाँकने लगा! पास में कोई भी चाय वाला नहीं था अत: वह उतर कर प्लेट फार्म पर आ गया।

चाय वाले की तलाश में वह जरा आगे बढ़ा, सामने ही सेकण्ड क्लास कम्पार्टमेन्ट था, अचानक उसकी दृष्टि राजेश पर गई, वह चाय के लिए खिड़की से झांक रहा था। विनय से आंख मिलते ही उसकी मुखाकृति पर मलिनता उभर आई, जैसे कि पाप पकड़ जाने पर पापी की मुखाकृति निस्तेज तथा मलिन पड़ जाती है। जो लोग ऐसे अवसरों पर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अपनी बुद्धि और ज्ञान का सही प्रयोग कर लेते हैं, उनके सामने से व्यावहारिक आवरण हट कर सत्य नग्न हो जाता है। विनय ने समझ लिया कि यह बनारस का दूसरा चक्कर होगा और अपनी अनभिज्ञता साश्चर्य प्रगटाई, 'अरे तुम यहां कैसे ? कहां से आ रहे हो !'

आश्चर्य सूचक प्रथम वाक्य से तो राजेश को कुछ सन्तोष मिला किन्तु प्रश्न सूचक दूसरे वाक्य से वह निस्तेज सा पड़ता हुआ, सत्य आवरित करते हुए मुस्कराकर बोला, 'जरा पटना गया था !' और फिर तुरन्त प्रश्न किया, 'और तुम कहाँ से आ रहे हो ?'

विनय ने मीठी चुटकी ली, 'जहाँ से तुम'···और जरा मुस्कराया। एक साथ कई भावनाओं ने राजेश की मुखाकृति पर परिवर्तन ला दिए, फिर भी अपने को एक कुशल कलाकार की भांति संभालते हुए उसने, पूछा, 'तुम वहां कैसे गए थे ?'

'नौकरी के सिलसिले में' विनय ध्यान से राजेश की मुखाकृति पर परिवर्तन होने वाले भाव पढ़ने का प्रयास कर रहा था।

'बहुत अच्छा, नौकरी किस विभाग में लगी।'

'सुविधा भण्डार में' कहता हुआ विनय व्यंग भरी मुस्कान छोड़ता हुआ आगे बोला, 'सेल्समैन हो गया हूं।'

'यह तो बनारस में है' अचानक राजेश के मुख से निकल गया। 'बहुत ठीक आप कैसे जानते हैं।'

राजेश कुछ सिटपिटा गया, उसके मुख से कोई युक्ति संगत बात न निकली, बोला, 'क्या समझते हो ? मैं कभी बनारस नहीं गया !' अब विनय को अवसर मिल गया, और उसने एक चुटकी फिर लेते हुए कहा, 'कभी क्यों ? बहुधा जाते होंगे, जगह ही ऐसी है, काशी है न काशी !'

राजेश ने एक दक्ष कलाकार की भांति हंसते हुए कहा, 'बहुत ठीक, बात-बात में मजाक करना तो तुम्हारी आदत है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तब तक गाड़ी ने सीटी दे दी, चाय वाला भी पास ही आ गया था, अतः दो कुल्हड़ लेकर विनय भी सेकण्ड क्लास में ही चढ़ गया।

'मैंने सच ही तो कहा, और फिर वह भी तो आजकल वहीं हैं' राजेश के पास पहुंचते हुए विनय ने कहा।

'वह कौन ?' सन्देहात्मक स्वर में राजेश ने अपनी अनभिज्ञता प्रगटाई 'वही'''तुम्हारी कामिनी देवी।'

'तुम्हें कैसे मालूम।' एक संतोष की सांस के साथ राजेश ने पूछा। 'बनारस जाते समय, लखनऊ स्टेशन पर भेंट हो गई थी।'

'मेरे विषय में कुछ पूछा था' कुछ उत्सुकता के साथ राजेश ने पूछा।

'हां, पूछा तो बहुत कुछ था, विशेष कर तुम्हारी शादी की घटना सुनते ही उनकी आशा की कलियां एक दम खिल सी उठीं, वह समझी तुमने उन्हीं के लिए यह सब कर डाला है।'

'और तुमने क्या-क्या बताया' राजेश ने ज्यादा उत्सुकता के साथ पूछा !

मैंने कह दिया; राजेश एक, आवारा है, लफंगा, बद चलन आदमी वह आपके सर्वथा अयोग्य है, लेकिन उन्हें विश्वास ही न हुआ, और इन बातों ने उनके हृदय में तुम्हारे लिए कुछ विशिष्ट स्थान बना लिया हो !'

'फिर उसने क्या कहा।'

'तुम तो इतनी उत्सुकता प्रगटा रहे हो, जैसे सचमुच प्यार करते हो कालिदास के साक्षात यक्ष होकर मुझ मेघ से अपनी प्रिया की विरह वेदना सुनना चाहते हो।'

राजेश झेंप गया। विनय ने विषय बदला, 'अच्छा, अच्छा, अब यह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बताओ कर क्या रहे हो ?'

'हल जोत रहा हूं ।'

'फिर क्या अन्नदाता हो रहे हो, तुमसे बड़ा है कौन' विनय ने परिहास किया ।

राजेश के हृदय में तो कामिनी की बातें सुनने की उत्सुकता हिलोरें मार रही थीं इस प्रकार विषय बदल जाने से वह किंचित मलिन पड़ गया और गम्भीर होते हुए बोला, 'अपने विचार इस विषय में तुमसे भिन्न हैं, मैं आदमी को बड़ा नहीं कह सकता, हाँ गुणों के कराण यदि कोई समाज में आदर का पात्र बन जाय या अपना विशिष्ट स्थान बना ले तो और बात है। मुझमें तो वह भी नहीं बल्कि निरादर का श्रेय अपने सर उठा लिया है। बड़े तो तुम हो जिसे समाज में कुछ स्थान तो प्राप्त है !'

विनय ने भी कुछ गंभीर होते हुए उत्तर दिया, 'तो मैं किसी को छोटा नहीं मानता; मानव जीवन में बहुत सी ऐसी आकस्मिक घटनाएं हो जाती हैं, जिनकी प्रतिक्रियाओं से बड़े-बड़े भी भूल कर बैठते हैं, माना, ऐसा होता आवेश में ही होगा, क्योंकि मनुष्य की आत्मा अविकारी है, विकार तो क्रियाओं तक ही सीमित हैं, और क्रियाएं परिवर्तनशील हैं अतः कभी किसी क्षण बदल सकती हैं, किन्तु आत्मा नहीं, इसलिए संसार में दुराचारी पतित भी श्रेष्टतम आसन पर पहुंचते देखे गए हैं ।'

'लेकिन कलंक का दाग कभी नहीं मिटता' राजेश ने प्रतिवाद किया ।

'प्रत्येक शक्तिवान अशक्त को जीवित नहीं रहने देता यह विधि का विधान है, फिर यश के सामने कलंक कैसे ठहर सकता है ।'

राजेश के हृदय में कामिनी के विषय में जानने की जो उत्सुकता थी, यह उसे छिपा नहीं सका, विषय बदलते हुए बोला, 'तुम भी कहां से कहाँ पहुंच गए ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय ने स्पष्ट करते हुए कहा, 'मैं जहाँ था वहीं हूं, कामिनी का तुम्हारे प्रति ऐसा ही विश्वास है।'

राजेश यह सुनते ही विस्मय से आंख फाड़े रह गया।

विनय ने आगे कहा, 'लड़कियां तुम्हारे जीवन में कई आई होंगी, क्योंकि तुम्हारा उद्देश्य था एक नहीं अनेक, किसी के लिए तुम टकसाल हो, पैसा लुटाने वाले एक मृतक धनी बाप के एकलौते बेटे से, किसी के योवनोन्माद के क्षणिक साधन बनकर रह गए, लेकिन मेरे विचार से तुम जो कामिनी के हृदय में स्थान पा गए वह तुम्हें कहीं न मिला, न मिलेगा। मैं अन्तरजातीय सम्बन्ध को अपने जातीय सम्बन्ध से कहीं श्रेष्ठ समझता हूं।'

'अच्छा जी, तो अब वकालत पर उतर आए!' राजेश ने अपने मनोवेगों को छिपाने के लिए व्यंग किया, किन्तु उसके हृदय में एक ज्वार था, एक झंझावात था कामिनी को इसी समय अपने में डुबो देने का, लपेट लेने का, और विनय के मुख से निकला हुआ सत्य एक तीक्ष्ण कण्टक सा उसके पाषाण हृदय में ऐसे धंस गया, मानो हृदय अपनी स्वाभाविक स्थिति में लौट कर पहले से ज्यादा नर्म पड़ गया हो। उसकी पीड़ा उसे असह्य हो गई हो, ऐसी पीड़ा जिसमें गुदगुदी थी, मिठास थी एक ऐसा अनोखापन था जो उसकी कल्पना से बाहर था। उसने विषय बदलते हुए कहा, 'बाबा के हाल क्या हैं, कभी-कभी उनका जीवन मुझे विचार करने के लिए विवश कर देता है।'

विनय ने पूर्ववत गाम्भीर्य के साथ उत्तर दिया, 'उनका जीवन एक कटु सत्य है, जिससे हम अपने जीवन को सही रास्ते पर लाने का संकेत पाते हैं, लेकिन हम किसी के अनुभव से लाभ उठाना सीखे ही कब हैं बल्कि स्वयं अनुभव करना सीखे हैं।'

राजेश ने विनय से सहमत होते कहा, 'यह तो हमारी कमजोरियां हैं, जिनका सुधार भी सम्भव है, लेकिन जहाँ तक बाबा के व्यक्तिगत

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जीवन का सम्बन्ध है, वह निर्दोष हैं। हां समाजिक जीवन उनका कलंकित है। जो सामाजिक व्यवहारों की कटु प्रतिक्रियाओं का ही रूप है। समाज अपराधी से घृणा करता है, अपराध से नहीं और ऐसा होता इसलिए है कि वह अपने छिपे अपराधों की रक्षा करना चाहता है, उन्हें आवरित रखना चाहता है। जिसके अपराध आवरित रह सके वह निष्कंलकित रहा, जिसके अनावरित हो गए वह कलंकित हो गया। वह समाज के सत्य स्वरूप का ही प्रतिविम्ब हैं, एक सत्य। एक दर्पण।'

'और उस दर्पण में हम अपने अपने प्रतिविम्ब स्वयं देखते और समझते रहते हैं।' कहते हुए विनय आगे अपना विचार प्रगट करने लगा, 'लेकिन कह नहीं सकते क्योंकि कायर हैं, बुजदिल, खुले आम अपना अपराध स्वीकार करने का साहस नहीं होता। जब तक हम अपना अपराध स्वीकार नहीं करते, कभी अपराधों से अपनी रक्षा भी नहीं कर सकते, क्योंकि एक अपराध को छिपाने के लिए हम दूसरे अपराधों पर पर्दा डालते हैं।'

'बात तो ठीक है, लेकिन बाबा के हाल नहीं बताये' रजेश ने पुनः विषय बदलते हुए पूछा ! विनय ने जेबसे वह पत्र निकाल कर दे दिया जो मंगल ने उसे बनारस के पत्ते से लिखा था।

पत्र पढ़ कर एक दीर्घ निःश्वास के साथ राजेश बोला, 'समय किसी का साथ नहीं देता, कर्मों की उज्ज्वलता, पाप और पुण्य का सही स्वरूप सामने ला ही देता है, यही तो है विधि का विधान।

विनय ने तनिक व्यंग भरी मुस्कान छोड़ते हुए कहा, 'चलो कुछ अपनी संस्कृति का ज्ञान तो है, मैंने तो समझा था तुम भी क्रिस्तान हो गए।'

'क्रिस्तान' एक जोर के ठहाके के साथ राजेश हँस पड़ा, जैसे कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बात की वास्तविकता से बिल्कुल अनभिज्ञ हो, फिर बोला, 'चलो बाबा के अन्तिम दर्शन तुम्हारे ही साथ करूंगा, अभी दो घन्टें हैं, तब तक और आराम कर लें !' इतना कहते हुए राजेश ने एक तकिया विनय की ओर बढ़ा दिया।

प्राची में एक हलकी सी आभा उभरने का साहस करती हुई सी जान पड़ने लगी। गाड़ी तीव्र गति से अपने गन्तव्य की ओर भागती चली जा रही थी। दोनों मित्र खिड़की के सहारे उढ़क कर आराम करने लगे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

३३

***

मृत्यु अनिश्चित भी है और अनिवार्य भी, यह सत्य है, इसे सभी जानते और मानते हैं। किन्तु मृत्यु होगी कब, कैसे, और किस स्थिति में मरना पड़ेगा अब तक कोई न जान सका। जीवन का यह अन्तिम संघर्ष है, और हर परिस्थिति में मनुष्य या पशु को यह संघर्ष करना ही पड़ता है।

जैसे पाप दो अक्षर का है वैसे ही पुण्य भी, लेकिन दोनों एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत हैं। जिनका अन्तर क्षितिज सा असीम है सागर सा गहन है। फिर भी यह दोनों मानवीय क्रियाओं में एक साथ हैं। एक ही वस्तु के दो नाम हैं जो प्रत्येक कार्य मिल कर ही कर पाते हैं, सदा साथ रहते हैं यहाँ तक कि मनुष्य इतना अन्तर करने में भी विवेक हीन हो जाता है और पुण्य को पाप तथा पाप को पुण्य बना कर उसकी वहुत सी क्रियायें होती रहती हैं। वह उनसे संतुष्ट भी रहता है। वह भली भांति जानता है कि भविष्य का, मृत्यु का गर्भ अक्षय है, फिर उससे भय कैसा, अपने कर्मों से संकोच कैसा अपनी नीति से विरोध कैसा।

किन्तु दैनिक जीवन में हम इतना व्यस्त रहते हैं, अपने स्वार्थों के इतने वशीभूत रहते हैं कि इन सब बातों पर विचार करना हम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अनर्गल प्रलाप समझते हैं; और इसके प्रभाव में हम बहुत ऐसी छोटी छोटी सी बातों में भी भूल कर बैठते हैं, जिनका परिणाम बड़ा भयंकर हो जाता है।

भूल भी एक या दो नहीं सैकड़ों, हजारों होती जाती हैं और उन सबका परिणाम हमें भुगतना ही पड़ता है। कहीं कहीं भलाई भी एक भूल ही सिद्ध होती है, और बुराई एक भलाई बन जाती है, दुख भी कभी कभी बड़ा सुखदायी सिद्ध होता है। बाबा ने जीवन में सदा अपकार ही नहीं किए, उपकार भी किए। अपनों के साथ, समाज के साथ और मनुष्यता के साथ। लेकिन यह सब हमारी, उनके अपनों की स्वार्थ नीति के साथ दब गया, वह उसके भार को न सम्भाल सके क्योंकि उन्होंने जिन्हें अपना समझा, आदरणीय समझा, उन सबों ने उन्हें एक शूल समझा, अपने स्वार्थ के लिए, पैतृक सम्पत्ति का भाग हड़पने के लिए; चूंकि वह सामाजिक जीवन में असफल रहे, सही रास्ते से भटक गए, इसलिए दूसरों की स्वार्थ नीतियों का आखेट बन जाना एक साधारण सी बात हो गई।

प्रातः सात बजे विनय राजेश के साथ घर पहुंच गया। बाबा जिस तख्त पर पड़े रहते थे वहीं पड़े थे, उसी भांति उनकी फटी आंखों की टकटकी बंधी हुई थी, सारा का सारा वातावरण नारकीय दुर्गन्ध से सन गया था। सांस लेना भी दूभर हो रहा था। मल-मूत्र में बाबा का शरीर भी इस प्रकार सन गया था, मानों रात भर वह उसी में लोटते-पोटते रहे हों, प्यास से आतुर मुख खुला रह गया था, आंखें पथरा गई थीं उनके अंग भी अस्त व्यस्त थे, और तख्त की भांति जड़वत, चिरशान्त थे।

देखने से स्पष्ट था कि मृत्यु ने उनकी तमाम आवश्यकताओं, भावनाओं को एक साथ पीस दिया है, बस वह किसी की प्रतीक्षा में

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

द्वार की ओर ताकते रह गए हैं । विनय देखते ही कुछ क्षणों को जड़वत खड़ा रह गया उसकी आंखें पथराई सी रह गईं और एक भी आंसू नहीं झलका, एक भी शब्द उसके मुख से नहीं निकला, एक भी विचार उसके मस्तिक में नहीं आया, 'यह क्या हो गया' वह कुछ देर बाद धीरे से बुदबुदाया ।

राजेश भी उसके पीछे खड़ा था, दो चार पड़ोसी आ गए थे जो आपस में बातें कर रहे थे, एक सज्जन ने कहा, 'बड़े सुन्दर पुष्ट और सुलझे हुए विचारों का व्यक्ति था, एक बुराई न होती तो हीरा था।'

दूसरे सज्जन बोले, 'देखो तो कैसे हैं इनके घर वाले, जो रात भर सुनते रहे, बेचारा पानी-पानी की करुण पुकार करता रहा और किसी ने एक घूंट पानी भी न दिया ।'

तीसरे सज्जन ने व्यंग किया, 'तभी तो कहते हैं यहां सब स्वार्थी हैं घूर्त हैं, यदि आज को इनके पास से चार पैसे का किसी को आसरा होता तो क्या यही दशा होती ।'

'राम राम घोर कलयुग है घोर कलयुग' एक वृद्ध महोदय बोले, 'भगवान न करे दुश्मन की भी ऐसी गति हो; सब अपनी ही कमाई है, राम राम !'

एक एक शब्द-बाण विनय के हृदय में सैकड़ों छेद से करता जा रहा था, लेकिन वह चुप था, बिल्कुल चुप, इसी समय एक पड़ोसी ने विनय के पास आकर कहा, 'विनय, कुछ प्रबन्ध करो, तुम्हारे सिवा और है कौन, यह यहां ऐसे तो पड़े नहीं रहेंगे ।'

तब राजेश बोला, 'हां ठीक है, चलो विनय सामान ला कर अन्तिम संस्कार तो कर ही दिया जाय ।' विनय धीरे-धीरे उसके साथ चल दिया ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पारिवारिक सदस्यों में उस समय केवल विनय ही उपस्थित था। शेष के सभी पड़ोसी थे, दाह संस्कार की किसी ने उचित सलाह न दी अतः बाबा को गंगा में विसर्जित कर दिया गया। दोपहर तक सब लोग वापस आ गए। राजेश भी कहीं न जा सका; अतः वहीं विनय के कमरे में आराम करने लगा।

विनय अब तक चुप था, जिसने जो भी कहा सुनता गया, करता गया, उसकी सारी क्रियाएं एक कठपुतले सी होती गयीं। जब वह कमरे में पहुंचा तो राजेश ने पूछा, 'अब आज्ञा हो तो मैं चलूं' एक दीर्घ किन्तु धीरे से निःश्वास छोड़ता हुआ वह बोला, 'भोजन के बाद चले जाना।'

'अरे नहीं, घर में सब दुखी होंगे, चलो हम तुम बाजार में खा लेंगे।'

'दुख,' शान्त स्वर में विनय बोला, 'दुख तो केवल बाबा को था वह भी एक घूंट पानी का और यह दुख वह अपने साथ ही लेते गए, यहां तो सब बड़े प्रसन्न हैं जैसे घर का कूड़ा-करकट साफ हो गया हो, या कोई फालतू चीज़ थी जो बिना वज़ह जगह घेरे पड़ी थी, हट गई।'

राजेश ने गम्भीर होते हुए कहा, 'यही सत्य है हमारे जीवन का जो मृत्यु के पूर्व दूसरों का स्वार्थ अथवा अर्थ सिद्ध नहीं कर पाता, उसे लोग ऐसा ही समझते हैं। लेकिन मनुष्य न किसी के बुलाने से आता है और न किसी के कहने से जाता ही है। यह सब किसी अज्ञात के खेल हैं, आदेश हैं, हमारा विवेक भी उस सीमा तक नहीं पहुंचता। बाबा आये और चले गए, न कुछ साथ लाये थे न ले गए। फिर भी जीवन के उतार-चढ़ाव-ऊंच नीच, सफलता-असफलता का सही चित्रण तो कर ही गए।'

विनय ने उत्तर दिया, 'जो अपने जीवन में असफल रहता है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सामाजिक-नैतिक दृष्टिकोण में गिर जाता है, उसके गुणों को भी लोग अवगुण ही समझते हैं।'

संयत स्वर में राजेश ने कहना आरम्भ किया, 'लोग समझते रहें विनय, लेकिन मैं उनमें से नहीं हूं। यद्यपि बाबा के संयोग में आने का मुझे कम ही अवसर मिला; फिर भी मैं उनके उन विचारों से बहुत ही प्रभावित रहा, जो यदा-कदा उन्होंने अपने निराश असफल डूबते हुए जीवन से हमारे भविष्य की ओर झांकते हुए व्यक्त किए। गलती सभी करते हैं कुछ छिपा कर सुधारने में सफल होते हैं, कुछ उन्हें स्वीकार कर अपनी महानता सिद्ध करते हैं और कुछ ऐसे भी होते हैं जो विपरीत प्रतिक्रियाओं में फंस कर अपने आप को विनष्ट कर डालते हैं। बाबा के भटक जाने का मूल कारण है असहयोगी समाज की उनके प्रति होने वाली क्रियाएं, समाज तो सदा से ही असहयोगी रहा है और रहेगा उसे सहयोगी बनाना पड़ता है, उसकी प्रतिक्रियाओं पर नियंत्रण करना पड़ता है, बाबा उन प्रतिक्रियाओं पर नियंत्रण नहीं पा सके जो असहयोगी भावनाओं के प्रतिकूल मस्तिष्क में उभरी। फिर भी उनको उस ओर अग्रसर करने वाले हम सब हैं। इसलिए दोषी समाज ही हुआ व्यक्ति नहीं।

'यह ठीक है राजेश।' विनय ने प्रतिवाद करते हुए कहा, 'किन्तु समाज का मूल तो व्यक्ति ही है, जब तक उसका सुधार न होगा, समाज का सुधार भी असम्भव ही है और व्यक्ति के सुधार का उत्तरदायित्व स्वयं व्यक्ति पर ही है। समाज पर नहीं। कोई क्या करता है वैसा ही हम करें पर विश्वास न कर, हमें क्या करना चाहिए, क्या सही है और क्या गलत; और हम कहां तक सही हैं और हो सकते हैं, यह बात मेरे विचार से प्रत्येक व्यक्ति के लिए गम्भीरता से विचार करने योग्य है।'

राजेश कुछ देर को चुप हो गया। किन्तु उसका मस्तिष्क विनय के विचारों में उलझ गया। ठीक ही तो कहता है विनय व्यक्ति पहले अपना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सुधारक है पीछे समाज का, जब तक व्यक्ति का सुधार नहीं होता समाज का सुधार हो ही नहीं सकता; लेकिन वहां तो प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने भिन्न दृष्टिकोणों को सही मानता है, प्रत्येक व्यक्ति अपने को बुद्धिमान ज्ञानवान समझता है, वह अपनी नीति पर ही चलना चाहता है। लेकिन मनुष्य होने का लाभ क्या ? यदि हम अपने विषय में पक्षपात हीन दृष्टिकोण से विचार नहीं कर सकते, अपने विषय में नहीं सोच सकते।

जो विचारक हैं उनके लिए छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देना स्वाभिमान के विरुद्ध है, जो मूढ़ हैं उनके लिए जीवन में उतना ही सत्य है शान्ति है, जितने में वह सन्तुष्ट हैं, उनके विचार, उनकी आवश्यकताएँ, उनके ज्ञान की तरह सीमित हैं, लेकिन पिसते हैं बीच वाले; न अधिक सोच पाते हैं, न काम में सीमित और संतुष्ट रह पाते हैं। समाज का बोझ भी इन्हीं के कन्धों पर है, विचारकों और मूढ़ों का यह केन्द्रबिन्दु है, फिर भला इनकी रक्षा कैसे हो, इनका कल्याण कैसे हो। जीवित रहते हुए भी जीवन के सुखों से वंचित हैं, कुछ सोच सकते हैं, इसलिए मूढ़ता से वंचित हैं, और अधिक सोच सकने की सामर्थ्य न रख सकने के कारण विचारकों से वंचित हैं, इनके लिए कोई सुविधा नहीं, कोई स्थान नहीं कोई जीवन नहीं !'

विनय ने समझ लिया, राजेश विचारों की गहनता में डूबने की कोशिश कर रहा है अतः चुप बैठा रहा। इसी समय मौसीजी एक थाली भोजन की कमरे में लेकर आ पहुंची, जिसे देखते ही राजेश ने संवेदना प्रगटाते कहा, 'अरे, आपने इतना कष्ट क्यों उठाया।'

'इसमें कष्ट कैसा' उन्होंने सहज ही उत्तर दिया, 'किसी के मर जाने से खाना-पीना या कोई काम बन्द तो नहीं हो जाता।'

उनके व्यक्तिकरण से स्पष्ट था कि बाबा की मृत्यु का जरा भी शोक उन्हें नहीं हुआ, जिसे ज़रा भी वह महसूस कर सकती हों; वह चुप हो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

गया ! मौसी जी थाली रखकर चली गईं । विनय ने राजेश की ओर देख कर मुस्कराते कहा, अब भोजन तो कर ही लिया जाय, मौसी ने भी ठीक ही तो कहा, किसी के मरने से कोई काम बन्द नहीं होता । मृत्यु से केवल एक व्यक्ति ही गतिहीन होता है, शेष सब तो गतिशील ही रहता है ।'

'यह तो ठीक है' कहता हुआ राजेश कुछ और ही सोचने लगा फिर बोला, 'मौसी जीने तुम्हारी बात को ही पुष्ट किया है, बाबा सचमुच इस स्थान के लिए कूड़ा ही थे जो उठाकर फेंक दिए गए' इतना कहते हुए राजेश थाली के समीप आ गया फिर बोला, 'घर की सफाई तो अच्छी बात है प्रसन्नता की बात है इन सबके लिए ऐसे व्यक्ति का महत्व क्या, विशेषता क्या ?'

विनय भी थाली के समीप आते हुए बोला, 'बाबा के पास जीवन के कटु अनुभव ही शेष थे, जो संयोग से दे गए, वह भी उनके लिए तो सार हीन थे । उन्होंने अपने जीवन का सब कुछ खोकर ही उन्हें पाया था, और हमारे जीवन का सब कुछ बचा लेने के लिए ही सब कुछ व्यक्त कर गए । अब रही बात हमारी, चाहे उससे हम लाभ उठा लें, चाहे उन्हें भी बाबा के व्यक्तिगत जीवन की भांति कूड़ा समझ कर मस्तिष्क से निकाल फेंक, लेकिन एक बात तो ध्रुव सत्य है ही हम जो भी लेते हैं, उसका भुगतान तो हमें करना ही पड़ता है ।'

राजेश ने कौर तोड़ते हुए कहा, 'लेकिन हमारी विशेषता तो तब है जब हम कूड़े से भी रत्नगुण निकल कर अपने पास रख लें । जब देने का अवसर आयेगा वही देंगे, जब लेने का अवसर आयेगा, वही पायेंगे ।'

दोनों ने एक ही थाली में साथ-साथ भोजन किया और विवाद चलता रहा, अन्त में विनय ने कहा, आज मैं गांव चला जाऊँगा, दो चार दिन ठहर कर वापस जाना है, तुम कब तक आ रहे हो ।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

राजेश ने विनय का श्राशय समझते हुए भी श्रनभिज्ञता प्रगटाई, 'कहां !'

'वहीं सुविधा भण्डार' कहते हुए विनय कटाक्ष करते हुए मुस्कराया !

राजेश दो क्षणों को स्तब्ध रह गया, उसकी समझ में नहीं श्रा रहा था कि उत्तर दे तो क्या ?'

उठते हुए विनय ने कहा, 'क्या सारी उम्र प्रतीक्षा में ही बीत जायेगी श्रापमोचन पश्चाताप से ही होता है।'

'किसी की प्रतीक्षा' श्रनजान बनते हुए राजेश ने पूछा।'

'कामिनी देवी की' विनय ने हाथ धोते हुए उत्तर दिया !

'राजेश चुप हो गया, फिर कुछ सोच कर बोला, 'मुझसे ज्यादा तो श्रापको फिक्र हो गई।'

'जी नहीं, मैं तो उस यक्ष की उत्सुकता के विषय में कह रहा था जो रेल में मुझे मेघदूत समझ बैठा, श्राखिर वापस जाने पर कुछ उत्तर तो देना ही होगा।'

'बरस जाने के बाद मेघ खाली हो जाते हैं न, उनका वापस पहुंचना सम्भव नहीं रहता' राजेश ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया ! श्रौर वह भी उठ बैठा।

'लेकिन बरसा हुश्रा मेंह तो सागर तक किसी न किसी तरह पहुंच ही जाता है।'

'किन्तु मरुभूमि में बरसा हुश्रा मेंह दोनों तरफ से जाता है, पत्थर धुलता है पिघलता नहीं' कहते हुए राजेश जाने के लिए तैयार हो गया।

विनय ने कहा, 'बहुत खूब प्रतिवाद तो श्रच्छा कर लेते हो, वकालत पास कर लेते तो हल जोतने की नौबत न श्राती। लेकिन यह न भूलो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पत्थर में भी दरारें पड़ती हैं, पत्थर से ही श्रोत प्रवाहित होते हैं। मेरे विचार से बाबा कुछ भी नहीं दे गए, सब साथ ही वापस लेते गए।'

राजेश इसका कोई उत्तर न देते हुए मुस्करा दिया।

'अच्छा अब चलता हूं, नमस्ते।'

'नमस्ते ?'

वह सीढ़ियों से उतरता हुआ सड़क पर पहुंच गया होगा लेकिन विनय वैसे ही खड़ा रह गया ! वह सोच रहा था राजेश के पाषाण हृदय की कठोरता और कामिनी का भविष्य। लेकिन कुछ सोच भी न सका और गांव जाने की तैयारी करने लगा।

तभी मंगल की छोटी बहिन ने आकर उसे एक बन्द लिफाफा पकड़ा दिया। उसने लिफाफा खोला तो उसमें एक लम्बा सा पत्र था, पत्र बाबा का था, गाड़ी छूटने में समय बहुत कम था अत: उसने पत्र को जेब में रख लिया, और स्टेशन के लिए चल दिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

३४

***

लगभग एक सप्ताह में विनय बनारस वापस पहुंच गया। उसी दिन किशोर ने उसे मुस्कराते हुए सन्देश दिया, 'तुम्हारा निमंत्रण है।'

'कहां से ?' साश्चर्य विनय ने पूछा।

'कामिनी देवी का फोन आया था।'

'क्या कहा था' कामिनी का नाम सुनते हुए विनय की उत्सुकता वढ़ गई।

'बड़ी ही मधुर आवाज़ थी, जैसे मेरे कानों में तो हर समय गूँजती रहती है, जब भी विनय जी आ जायं कह दीजिएगा, कामिनी ने चाय पर याद किया है' किशोर ने वड़े ही कलात्मक ढंग से कह सुनाया।

'हूं' विनय चुप हो गया।

'कौन है यह कामिनी देवी' सन्देहात्मक भाव से पूछते हुए किशोर मुस्करा कर व्यंग कसता हुआ बोला, 'तुम तो छुपे रुस्तम निकले !'

एक हलकी सी निःश्वास छोड़ते हुए विनय ने मुस्करा कर उत्तर दिया, 'हैं एक, मृगनैनी, संतप्त, तृषित प्रेमिका !'

'किसी-तुम्हारी।'

'ऊं-हुं : उन्हीं मिस्टर केशव की, जो उस दिन मिस वरजीनिया के साथ पधारे थे।'

'अच्छा-तो यह वात है हज़रत कामशास्त्र का अभ्यासिक अध्यन कर रहे हैं, बड़े उस्ताद मालूम देते हैं।' किशोर ने मुस्कराते हुए व्यंग किया।

'जी हां वात्सायन के बाद इन्हीं का नम्बर है।' कहते हुए विनय ने पूछा, 'उन्होंने अपना फोन नम्बर भी दिया होगा।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

'जरूर' और किशोर ने टेवल डायरी का पृष्ट पलटते हुए नम्बर दिखाते हुए कहा, 'यह रहा नम्बर और पता !'

विनय ने तुरन्त नम्बर डायल किया। किशोर ने मुस्कराहट के साथ व्यंग करते हुए पूछा, 'बड़ी उत्सकता है आपको।'

'जी हां मेरे उपन्यास के यह दोनों नायक नायिका जो हैं'।

उसी समय टेलीफोन पर सुन पड़ा, 'हलो।'

'मैं विनय वोल रहा हूं।'

'अच्छा जी : कव आये वापस' मधुर स्वर में उत्तर मिला !

'कल रात आया था, अभी-अभी आपका समाचार मिला।'

'जी हां : मेरे सौभाग्य की वात है, आप आ रहे हैं न !'

'आप बुलायें, और भला हम न आयें।'

'अच्छा तो आपकी प्रतीक्षा करूंगी, आज शाम सात वजे, अवश्य आइएगा।'

'वहुत अच्छा जी'

'धन्यवाद।'

'पहुंचने से पहले।'

'जी हां कभी-कभी ऐसे अवसरों पर।'

'अच्छा जी ! नमस्ते।'

'नमस्ते।'

विनय ने रिसीवर रख दिया। इसी समय चार पांच ग्राहक आ गए और वह उनसे उलझ गया।

सन्ध्या को सात वजे वह कामिनी के बंगले पर पहुंच गया। नौकर जैसे उसी की प्रतीक्षा में हो, विनय ने ज्योंही उससे पूछा, कामिनी देवी हैं।'

'हां साहब'''अइसी आवौ' विनय को उत्तर देते हुए वह एक कमरे की ओर वढ़ चला। पीछे-पीछे विनय भी हो लिया।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कमरे में प्रवेश करते ही उसकी दृष्टि राजेश पर पड़ी, वह सोफे पर बैठा हुआ प्रतीक्षा कर रहा था, आश्चर्य से विनय ने पूछा, "तुम यहां कैसे।'

मुस्कराते हुए राजेश ने उत्तर दिया, 'जैसे तुम, चाय पर। ओ''' हो'''समझा। उनका तबादला फिर इलाहाबाद हो गया क्या ? विनय ने व्यंग किया।

'जी नहीं, इस्तीफा दे दिया !' बाबा के जीवन की गुदड़ी में मुझे भी लाल मिल गया !'

'भूल स्वीकार करली क्या ?'

'नहीं, रास्ता मिल गया विनय'''और मैं भटक कर घर वापस आ गया।'

'राजेश !' आश्चर्य और हर्ष विनय के हृदय से उभर कर मुख से फूट पड़ा, वह दौड़ कर राजेश के सीने से चिपटता हुआ बोला, 'सच राजेश सच'''या सपना है, क्षणिक उन्माद……'

राजेश ने विनय को अपने सीने से लगा लिया, प्रेमाश्रु छलक पड़े; सत्य है विनय सत्य, मुझे बाबा सब कुछ दे गए, सब कुछ दे गए……

इसी समय चाय की ट्रे लिए हुए कामिनी ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा, 'देखिए सच हुई न मेरी बात।'

विनय का हृदय खुशी से मानो बांसों उछल रहा हो, वह बोलना चाहता हो, पर क्या बोले ? कुछ समझ में न आ रहा हो, कामिनी ने ट्रे मेज पर रखते हुए फिर कहा, 'अरे आप अब तक खड़े हैं बैठिए न।'

फिर राजेश की ओर उन्मुख हो, वह बोली, 'आपने इनसे बैठने तक को भी नहीं कहा, बड़े वैसे हैं आप !'

विनय ने एक ओर सोफे पर बैठते हुए कहा, 'क्षमा कीजियेगा, मैं बैठना भूल गया था। यह इनके कहने न कहने की बात नहीं।'

कामिनी ने भी बैठते हुए कहा, 'फिर भी हमारा कर्तव्य क्या है।'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विनय बोला, 'आज आप से एक बात कहूंगा भाभी जी, उस दिन फंक्शन में जो गीत गाया था आपने'''याद है न !

कामिनी का मुख लज्जा से अरुणिम हो उठा और लजाते हुए ही उसने कहा, 'ऊं हूं !'

'तो मैं याद दिलाए देता हूं; कि, 'रह गई उर की खुली किवड़ियां''

'लेकिन'''चीनी कप में डालते हुए कामिनी ने लजाते हुए टोंका ।

'लेकिन यह कि अब किवड़ियों में सांकल लगा दीजिए ताकि जो आ गया जा न सके ।'

राजेश सुनते ही मुस्करा कर बोला, 'चलिए लग गई सांकल आगे बोलिए ।'

अब तक कामिनी ने चाय तैयार कर ली थी, उसने एक प्याला विनय की ओर बिना कुछ बोले बढ़ा दिया । विनय ने कप पकड़ते हुए कहा, 'मेरा उपन्यास पूरा हो गया ।'

यह सुनते ही कामिनी मुस्करा पड़ी, राजेश भी किंचित झेंपते हुए हंसकर बोला, 'उपसंहार क्या हुआ ।'

विनय ने अपनी जेब से एक लिफाफा निकालते हुए राजेश की ओर बढ़ाते हुए कहा, 'यह लीलिए बाबा का अन्तिम पत्र ।'

राजेश ने लिफाफा पकड़ लिया । विनय चाय की चुस्की लेने लगा !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

***

चिरंजीव विनय,

अब जीवन की कोई आशा शेष नहीं रही। कई दिनों से सोच रहा था, शायद तुम अब आजाओ, तो अपने हृदय की कुछ शेष बातें और सुना लूं किन्तु नहीं आये! मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूं, संभव है कुछ कहने से पूर्व ही मेरी वह शक्तियां क्षीण हो जायं जिनसे मैं अपने को सुचारु रूप से व्यक्त कर सकने में अभी समर्थ हूं, अतः लिख कर ही रख छोड़ना अच्छा समझा।

वैसे तो कहने के लिए कुछ भी शेष नहीं रहा, किन्तु मनुष्य मरते समय भी इस सांसारिक मोह से अपने को विरक्त नहीं कर पाता। मेरे विचार से इसका मूल कारण वासनाओं में लिप्त रहना ही है, या यूं कहा जाय तो ठीक रहेगा कि संतप्त व्यक्ति की प्यास कभी नहीं मिटती वह सदा भव तृष्णा में प्यासा ही मर जाता है। यद्यपि मैं धार्मिक प्रवृत्तियों की ओर तुम्हारा ध्यान नहीं खींचना चाहता, फिर भी इतना तो कह देना ही चाहता हूं, कि धर्म से मेरा अभिप्राय मानव की उन क्रियाओं से सम्बधित है जो उसे एक सही मनुष्य होने की प्रेरणा तथा अधिकार प्रदान करती हैं। निकृष्ट से निकृष्ट व्यक्ति को भी कभी न कभी यह सोचना ही पड़ जाता है कि वह मनुष्य है, उसके भी कुछ अधिकार हैं, उन अधिकारों पर ही जब अनाचार-अत्याचार होते हैं तो उसकी प्रतिक्रियायें ही गलत रास्ते अपना लेने को प्रेरित कर देती हैं। और मनुष्य अधिकतर ऐसे अवसरों पर अपने मानसिक सन्तुलन को खोकर, उचित अनुचित के भेद को भूलकर भटक जाता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मैं भी करीब-करीब ऐसा ही एक भटका हुआ व्यक्ति हूं। लेकिन यह बात मेरी समझ में तब आई, जब मैं जीवन के उतार चढ़ाव में पूरी तरह भ्रमित हो चुका था। अतः मृत्यु के सिवा मेरे जीवन की सफलता के लिए कोई दूसरा उद्देश्य शेष न रह सका था मेरा कल्याण केवल मृत्यु ही है!

जब तक हम मानव जीवन की क्रियाओं का विश्लेषण तथा निरूपण करते हुए अपने जीवन में बढ़ते हैं, हमसे कम से कम गलतियां हो पाती हैं। विश्लेषण और निरूपण में हम बहुधा अपने स्वार्थों को ही फलीभूत होना चाहने लगते हैं और जितना हम इसके अभ्यास में अग्रसर होते जाते हैं हम उतना ही जकड़ते जाते हैं, और शनैः-शनैः विश्लेषणात्मक ज्ञान को अपने स्वार्थों तक सीमित कर लेते हैं। स्वार्थों के मोह में जकड़ जाने के बाद मनुष्य की सारी क्रियाएं पशुवत ही शेष रह जाती हैं।

यद्यपि मैं अपनी बातों में किसी भी ऐसे आत्मविश्वास की झलक नहीं पाता जो तुम्हें प्रभावित करने में समर्थ हो, मैं तो केवल एक ही आशा रखता हूं कि भटके हुए रास्तों को अपने जीवन के पग किसी लक्ष्य की सफलता के लिए बढ़ाते हुए ध्यान में रखना, मेरे बड़प्पन और सम्मान को सदा घृणा और तिरष्कार के विचारों में ही स्थान देना, तभी यह तुम्हारे जीवन में सही रास्तों पर प्रकाश डाल सकेंगे। ठोकर खाकर यहां स्वयं ही सम्भलना पड़ता है, कोई सहारा देने को आगे नहीं बढ़ता, पर कुछ आवाज़ें सुनने को अवश्य मिल जाती हैं, गिरे पड़े क्या ?' और यह आवाज़ें तुम्हें पददलित करते हुए आगे बढ़ जाना ही जानती हैं, वह तुम्हारे उठने के लिए या सम्भलने के लिए एक पल भी नहीं ठहर सकतीं। वह तुमसे 'हां' या 'नहीं' का उत्तर भी नहीं चाहतीं, तब भी तुम्हें उठना है सम्भलना है, बढ़ना है।

यह रास्ते केवल मानसिक सन्तुलन खोजते समय विचार विमर्श चाहते हैं। समता की अवहेलना तथा ज्ञान का सामंजस्य; आशा है

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तुम मेरे कहने का तात्पर्य समझने का पूरा-पूरा प्रयास कर रहे होगे !

मानता हूं वासनाओं से मुक्त रह सकना सामाजिक प्राणी के लिए सर्वथा असम्भव है, अपने उत्तरदायित्व से भागना कायरता, और कर्तव्यों से मुंह फेरना धृष्टता; यह सब तुम्हारे ही साथ हैं, तुम इन सबके साथ, सबको तुम्हें एक संतुलित आधार पर ही लेकर चलना पड़ेगा, इन्हें छोड़ कर तुम कभी सही रास्ता पा ही नहीं सकते, ऐसा दृढ़ विचार है और आशा है तुम सहमत होगे।

व्यक्तिगत जीवन ही सम्पूर्ण मानव जगत है, समाज है, सब एक दूसरे से अभिन्न हैं; जानते हो क्यों सोच रहा हूं ऐसा; क्योंकि मैं व्यक्ति से समुदाय और समुदाय से मानव समाज का अस्तित्व मानता हूं केवल एक व्यक्ति से, उसे जो भी करना है, व्यक्ति के जीवन की सफलता के लिए करना है, और तभी व्यक्ति का कल्याण संभव है, समाज का कल्याण सम्भव है, देश का कल्याण सम्भव, सम्पूर्ण मानवता का कल्याण संभव है। हम वासनाओं से सदा ही कुछ खोते हैं, केवल आकर्षण पाते हैं जो अस्तित्वहीन है । वासनाओं में व्यक्तिगत स्वार्थ निहित है, कल्याण नहीं, जीवन की असफलता है सफलता नहीं।

तुम सोच रहे होगे कि मैं एक मूढ़, जीवन का भटका हुआ राही तुम्हें सही रास्ते पर चलने का उपदेश दे रहा हूं या उपदेश देने की धृष्टता कर रहा हूं, लेकिन यह बात मेरे बस की नहीं, किसी भी मनुष्य के वश की नहीं रह जाती होगीं जब वह सही और गलत को समझ लेता होगा। प्रतिष्ठा और अभिमान को बनाए रखने के लिए लोग भले ही अपने अन्तर में उठने वाली चीत्कारों को दबा लें, किन्तु यह चीत्कारें दब नहीं पातीं, जो सांसें वह समाज में छोड़ते हैं, जिन सांसों का बीज बोते हैं, उनके फल बड़े ही विषैले निकलते हैं, जिन्हें खाकर उन्हें अपना ही विनाश करना पड़ता है।

जो व्यक्ति सही है वह प्रतिष्ठा के थोथे आडम्बरों से कभी प्रभावित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं होता, प्रतिष्ठा सामाजिक जीवन में धूर्त लोग ही बढ़ाने का प्रयास करते हैं और उसके लिए वह दिन रात कितने अपराध करते हैं इसे उनका अन्तर भली भांति जानता है। वह प्रतिष्ठा भी इन्हें सही व्यक्ति से कभी नहीं मिल पाती। सही प्रतिष्ठा और सम्मान के सामने समाज का मस्तक स्वतः झुक जाता है, उसे झुकाना नहीं पड़ता और झुका कर कभी आत्मग्लानि से बोझिल नहीं होना पड़ता। ग़लत व्यक्ति की प्रतिष्ठा एक जलते हुए अंगारे के समान है जो देखने में तेजवान है पर छूने से तुरन्त भस्म कर डालता है या फफोले डाल देता है।

मैं अपनी ओर से कोई उपदेशात्मक बात नहीं कह रहा हूं, बल्कि जिस प्रतिष्ठा के विषैले प्रभाव से मेरा जीवन रास्ते से भटका, मैं उसी प्रतिष्ठा से तुम्हें अवगत कराना चाहता हूं, ताकि तुम इस थोथे आडम्बर में पड़कर गलत व्यक्ति को प्रतिष्ठा न दे सको और न उसकी थोथी प्रतिष्ठा से प्रभावित हो कर गलत रास्ते पर न भटक जाओ।

राजेश भी इस सिलसिले में याद आ गया, वह तुम्हारा अभिन्न मित्र था, जो जरा सी बात में गांठ पड़ गई थी। उसे तुम गम्भीर रूप में न लेना, जैसा कि मैंने तुमसे कहा था, उसे सहानभूति चाहिए, अपनत्व चाहिए ताकि वह अपने रास्ते से मेरी ही तरह न भटक जाय। जिन वासनाओं की ओर वह मोहवश दौड़ रहा है, वह स्वप्नवत आनन्द-मयी हैं, इसे वह भली भांति समझता है, और तुम भी, मेरे विचार से विवाह से उसका इस प्रकार भाग जाना, उसके गत जीवन की किसी मर्मभेदी, गहन, महत्वपूर्ण घटना से सम्बन्धित होगा, क्योंकि जाकर उसका वापस आना, उसके किसी दृढ़ संकल्प का प्रतीक है। वह शादी नहीं करना चाहता इसका पुष्ट प्रमाण है। वापस आकर वह अपनत्व की परिभाषा को ही समझेगा, उसकी बुद्धि मेरे विचार से परिपक्व है, मानसिक संतुलन भी डांवाडोल नहीं है, अन्यथा वापस आने का मोह उसे कभी न होता।

ऐसे व्यक्ति बड़ी प्रखर विश्लेषणात्मक बुद्धि के होते हैं, जब उनके

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ज्ञान में एक बात घर कर लेती है, तो वह उस पर दृढ़ संकल्प कर लेते हैं, उन्हें अपने संकल्प से डिगा सकना जनसाधारण के वश की बात नहीं रह जाती, वह स्वयं एक चीज़ को भली भांति समझ लेने के बाद ग्रहण कर लेते हैं।

मैंने जैसा कहा कि वासनाए स्वप्नवत् आकर्षक हैं, और राजेश सम्भवतः आकर्षणों से केवल खेलता होगा, उसके लिए महत्वहीन से ही होंगे। वैसे लोग अधिकतर दौड़ते हैं उसी ओर।

अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों को साथ लेकर चलने में वासनाएं और आकर्षण मनुष्य के सामने एक सीमा की रेखा खींच देती हैं। यदि इस सीमा को लांघने का प्रयास न किया जाय और प्रतिकूल पड़ने वाली परिस्थितियों का मानसिक सन्तुलन के साथ सामना किया जाय तो सफल जीवन का मार्ग स्वयं बनता जाता है।

संघर्ष तो करना ही पड़ता है, प्रकृति का कण-कण संघर्षरत है, गतिमय है और तभी जीवन का महत्व है। मेरा जीवन समय और मानसिक झंझावातों में छिन्न-भिन्न हो गया, इन झंझावातों में ही मुझे जो कुछ मिला और मुझसे जैसा बन पड़ा चित्रण कर दिया। यदि इससे तुम्हारे विचारों को मानसिक सन्तुलन के लिए कुछ भी सहयोग मिल सका तो भी मैं अपने जीवन को सफल ही समझूंगा।

प्रबन्ध तो सब हो चुका है। अब मेरे लिए कुछ शेष भी नहीं रहा जो अपनी ओर आकर्षित कर सके। एक तुम हो, तुम्हें क्या करना है, तुम्हारा लक्ष्य क्या है, यह तुम्हारे अन्तर की बात है तुम जानो। मैंने तो पत्र केवल इस आशय से लिख दिया कि विचार मेरे मस्तिष्क में उठे, उन्हें व्यक्त भी करता तो किससे और सुनने भी कौन बैठता।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

GPS./538/68-5,000

DATE SLIP

This book was taken from the Library on the date last stamped. A fine of (a) 00.05 paise per book/volume for the first 20 days of delay per day. (b) 00.20 paise per book/volume per day of delay thereafter which shall be realised from the defaulters before a new book is issued to him/her.

21/11			
14/6			
2.11.73			
24/4/8			
29/4/12			

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

8428944

7940 :- 24/9/61
10552 21/4/71
11294
13076 :- 9/11/93

A book borrowed must be returned within one month of its issue. it may be reissued for fifteen days, if not requisitioned by another member. Members residing outside Srinagar may return books within forty days of their issue.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE